सदस्य
ABCI
Member

बैंकिंग चिंतन-अनुचिंतन

विषयसूची

संपादकीय 2

अनुचिंतन 4

साक्षात्कार 6

लेख

- भारतीय अर्थव्यवस्था और आर्थिक विकास कृषि के संदर्भ में — डॉ. दीपाली पंत जोशी — 10
- ग्रामीण विकास में बैंकों की भूमिका — श्यामलाल गौड — 14
- ग्रामीण विकास और सहकारिता : नई चुनौतियां और समाधान — सुशील कृष्ण गोरे — 20
- क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक : स्थिति और संभावनाएं — डॉ. रामप्रकाश सिंहल — 26
- वित्तीय समावेशन और ग्रामीण विकास — डॉ. रमाकांत शर्मा — 32
- व्यष्टि वित्त और वाणिज्यिक बैंकों की भूमिका — डॉ. सुरेश कुमार — 36
- ग्रामीण बैंकिंग के विकास में लघु उद्योगों की भूमिका — डॉ. दलसिंगार यादव — 40
- बदलते आर्थिक परिदृश्य में लघु और मध्यम उद्यमों की प्रासंगिकता — डॉ. जयन्ती प्रसाद नौटियाल — 46
- ग्रामीण क्षेत्र में बैंकिंग विपणन — रवि कुमार शर्मा — 51
- ग्रामीण बैंकिंग और बैंक एश्योरेन्स — डॉ. सुबोध कुमार एवं हरीश चन्द्र — 54
- वित्तीय समावेशन एवं लघु बीमा — विजय प्रकाश श्रीवास्तव — 62

इधर–उधर से — सावित्री सिंह — 66

- स्वयं सहायता समूह — राजेंद्र सिंह — 70
- भारत में वित्तीय समेकन तथा कृषि क्षेत्र में समस्याएं एवं समाधान — डॉ. राजीवकुमार सिन्हा — 77
- ग्रामीण वित्त प्रबंधन एवं विकास में सहायक किसान क्रेडिट कार्ड योजना — डॉ. नरेंद्र पाल सिंह — 82
- कृषि विकास की नई तकनीक - कृषि परिचर्या (एग्रो क्लिनिक) : एक परिचय — ध्रुव कुमार फिटकरीवाला — 89

परिक्रमा — 93

- कृषि ऋण स्वॉट की कसौटी पर — विनय बंसल — 97
- कृषक क्लब के संचालन में बैंकों की भूमिकी — डॉ. भागचंद्र जैन — 111
- पुस्तक समीक्षा — 115

लेखकों से/ पाठकों से — 118

बैंकर प्रशिक्षण महाविद्यालय द्वारा अब तक प्रकाशित हिन्दी पुस्तकें

- 'जोखिम प्रबंधन - एक विवेचन'**
- 'बैंकों में लाभप्रदता'*
- 'बैंकों में कार्पोरेट गवर्नेंस'**
- रिटेल बैंकिंग और मार्केटिंग ***
- भारत में भुगतान और निपटान प्रणाली ***

* संस्कार साहित्य माला 7, कृष्णा विहार, टाटा कम्पाऊंड, इर्ला ब्रिज, एस. वी. रोड, अंधेरी (प.), मुंबई -401 058 के पास बिक्री हेतु उपलब्ध

** निदेशक रिपोर्ट, समीक्षा और प्रकाशन (बिक्री अनुभाग) आर्थिक विश्लेषण और नीति विभाग, भारिबैंक, अमर भवन, फोर्ट, मुंबई - 400 001 एवं बैंकर प्रशिक्षण महाविद्यालय में बिक्री हेतु उपलब्ध

*** आधार प्रकाशन प्रा. लि. एस. सी एफ. 267, सेक्टर 16, पंचकूला, 134 113 (हरियाणा) में बिक्री हेतु उपलब्ध

इस अंक के प्रकाशन में बैंकर प्रशिक्षण महाविद्यालय के उप महाप्रबंधक एवं संकाय-सदस्य श्री कमल पटनायक, सहायक प्रबंधक श्री मनोज कुमार पाटनी और राजभाषा कक्ष से सम्बद्ध श्रीमती नीतू जाधव का सहयोग प्राप्त हुआ।

पंजीकरण संख्या 47043/88

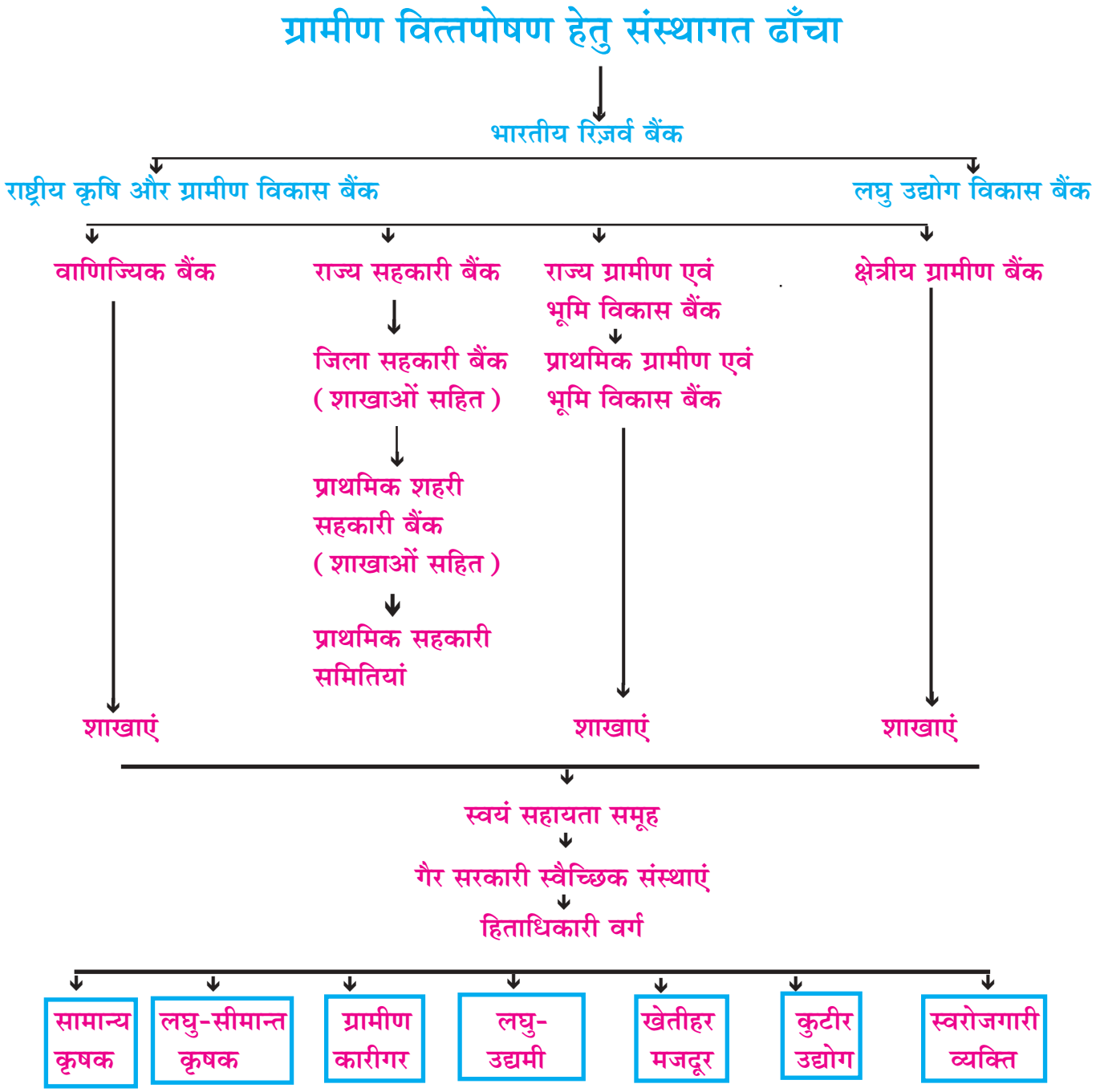

संपादक - मंडल

प्रबंध संपादक

डॉ. (श्रीमती) दीपाली पंत जोशी
मुख्य महाप्रबंधक, भारतीय रिज़र्व बैंक, मुंबई

सदस्य

ए. के. षडगी
महाप्रबंधक, भारतीय रिज़र्व बैंक, मुंबई

प्रभुता व्यास
वरिष्ठ उपाध्यक्ष, भारतीय बैंक संघ, मुंबई

रूपम मिश्र
महाप्रबंधक, भारतीय रिज़र्व बैंक, मुंबई

डॉ. सुरेश कुमार
उप महाप्रबंधक (राजभाषा),
भारतीय स्टेट बैंक, मुंबई

डॉ. रमाकांत शर्मा
महाप्रबंधक, भारतीय रिज़र्व बैंक, मुंबई

डॉ. दामोदर खडसे
सहायक महाप्रबंधक (राजभाषा)
बैंक ऑफ महाराष्ट्र

सूरज प्रकाश
सहायक महाप्रबंधक (राजभाषा)
कृषि बैंकिंग महाविद्यालय, पुणे

डॉ.गजेंद्र कुमार
सहायक महाप्रबंधक (राजभाषा)
इलाहाबाद बैंक

कार्यकारी संपादक

पुष्प कुमार शर्मा
उप महाप्रबंधक, भारतीय रिज़र्व बैंक, मुंबई

सदस्य-सचिव

के. सी. मालपानी
सहायक प्रबंधक (राजभाषा)

बैंकर प्रशिक्षण महाविद्यालय
भारतीय रिज़र्व बैंक, वीर सावरकर मार्ग
दादर (पश्चिम), मुंबई - 400 028.

इस पत्रिका में प्रकाशित लेखों में दिये गये विचार संबंधित लेखकों के हैं । यह आवश्यक नहीं है कि भारतीय रिज़र्व बैंक अथवा बैंकर प्रशिक्षण महाविद्यालय उन विचारों से सहमत हों । इसमें प्रकाशित सामग्री को उद्धृत करने पर बैंकर प्रशिक्षण महाविद्यालय को कोई आपत्ति नहीं है बशर्ते स्रोत का उल्लेख किया गया हो।

डॉ. श्रीमती दीपाली पंत जोशी द्वारा बैंकर प्रशिक्षण महाविद्यालय, भारतीय रिज़र्व बैंक, वीर सावरकर मार्ग, दादर (पश्चिम), मुंबई - 400 028 के लिए संपादित और प्रकाशित तथा मयूर ट्रेडिंग कॉरपोरेशन, मुंबई - 400 001 में मुद्रित ।
इंटरनेट http://www.rbi.org.in/hindi पर भी उपलब्ध ।
E mail : btcrajbhasha@rbi.org.in फोन : 24381255 फैक्स नं. - 2430 3882
मुखपृष्ठ : सुधाकर वरवडेकर

संपादकीय

चिन्तन

'धीरे धीरे रे मना धीरे सब कुछ होए
माली सींचे सो घड़ा ऋतु आए फल होए'

जल्दबाज़ी में कभी भी कोई कार्य नहीं हो पाता, हम आगे निकलने की होड़ में अपने अति व्यस्त जीवन क्रम में बदहवास सोने के मृग के पीछे बेसुध दौड़े चले जा रहे हैं, प्रतिस्पर्धा जीवन का अभिन्न अंग सी बन गई है और साथ में बढ़ रही है विजयी होने की लालसा, आगे बढ़ने की तीव्र इच्छा। संत कबीर का यह दोहा यही संकेत करता है कि कार्य समयानुसार ही होते हैं जैसे माली सौ घड़े पानी देता है परन्तु पेड़ में फल तो अपने समय से ही आते हैं। प्रतीक्षा ही धैर्य है और धैर्य का फल मीठा होता ही है।

अब भारत का 'समय' आ गया है। स्वतंत्र, लोकतान्त्रिक और धर्मनिरपेक्ष भारत, साठ वर्ष के युवा भारत ने वैश्विक परिवेश में विकास की राह पर चलते चलते 'विकासशील' देशों की फेहरिस्त से निकलने के रास्ते में मील के कई पत्थर तय कर लिये हैं। किन्तु हमारे लिये सबसे बड़ी चुनौती अब भी आम आदमी को 'बेहतर जीवन' सुविधाएं उपलब्ध कराने की है। इस संदर्भ में कबीर का कहा मानते हुए हमें अपने आपमें कमियों को खोजना होगा और आम आदमी के कल्याण की दिशा में आगे बढ़ना होगा अर्थात अपना 'रिव्यू' करना ही होगा।

'बुरा जो देखन में चला बुरा न मिला कोय
जो मन खोजा अपना तो मुझसे बुरा न कोय'

अपने भीतर जब हम देखते हैं तो पाते हैं कि आम आदमी की खुशहाली के प्रयास निरंतर होते रहे हैं- बैंकों के स्तर पर, नीति निर्माता रिज़र्व बैंक के स्तर पर। हम सभी जानते हैं कि रिज़र्व बैंक ने 'आम आदमी' को खास आदमी बनाने के लिये हर बार सफल कोशिश की है- भले ही उसका नाम के. वाय. सी. हो या वित्तीय समावेशन। आम आदमी की चिन्ता सर्वोपरि रही है। खाता खोलने के लिए के. वाय. सी. प्रक्रिया उन लोगों के लिए और सरल की दी गई है जो अपने सभी खातों में एक साथ मिलाकर 50,000 रुपये से अधिक नहीं रखना चाहते हैं और सभी खातों को एक साथ मिलाकर जिनका कुल ऋण प्रति वर्ष 1,00,00/- रुपये से अधिक न हो। ग्राहक को इन सीमाओं का

अतिक्रमण करने की छूट तभी होगी जब वो के. वाय. सी. मानकों का पूरा अनुपालन करे। साथ ही, रिज़र्व बैंक ने वित्तीय समावेशन पर अपनी चिंता को बार-बार दुहराया है। तदनुसार, अधिक वित्तीय समावेशन हासिल करने की दृष्टि से नवंबर 2005 में सभी बैंकों को सूचित किया गया कि वे बैंकिंग का एक 'नो-फ्रिल' रूपी बुनियादी खाता शुरू करें जिसमें या तो शून्य या न्यूनतम शेष राशि ही रखने का प्रावधान हो और साथ ही ऐसे खातों के प्रभार ऐसे हों जिससे आबादी के एक बड़े वर्ग तक इसकी पहुंच हो सके। इन खातों में लेन देन का स्वरूप और संख्या को नियंत्रित रखा जा सकता है मगर इसके बारे में ग्राहक को स्पष्ट रूप से पहले ही बता देना चाहिए। सभी बैंकों को सूचित किया गया कि वे 'नो-फ्रिल' खातों संबंधी इस सुविधा का व्यापक प्रचार- प्रसार करें, साथ ही, इसे अपनी वेबसाइट पर भी डालें जिसमें इन सुविधाओं का उल्लेख हो और स्पष्ट रूप से प्रभारों की जानकारी दें। अगला कदम सामान्य उद्देश्यीय क्रेडिट कार्ड का रहा जो रिवाल्विंग क्रेडिट लिमिट देता है। प्रयासों की यह श्रृंखला बढ़ती जा रही है और उसी में शामिल हो गयी है आम आदमी के लिये वित्तीय साक्षरता। यह पत्रिका इसी का उदाहरण है।

अनुचिन्तन

बैंकिंग जगत के प्रयासों को देखते हुए ही इस बार हमने **ग्रामीण और विकासोन्मुख बैंकिंग विशेषांक** का संकल्प किया है जो अपने तमाम आयामों के साथ प्रस्तुत है। विषय की व्यापकता को समेटने का यह प्रयास संभवत: पाठकों की जिज्ञासा का समाधान कर पायेगा। भारत एक 'विकसित देश' तभी बन पायेगा जब विकास के फल सभी वर्ग भोग सकेंगें। इस बार 'साक्षात्कार' में आपकी मुलाकात होगी बैंक ऑफ महाराष्ट्र के अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक श्री एम. डी. मल्या से जिन्होंने अपनी स्पष्ट बातचीत में अपने सपनों के भारत देश की बात कही है। आशा है यह विशेषांक आपको पसंद आयेगा और आपके कार्य में 'समभाव' पैदा करने का प्रयास करेगा। आपकी प्रतिक्रियाएं ही हमारा सम्बल है। हम उत्सुकता से उनकी प्रतीक्षा करेंगे। बस, ताली दोनों हाथों से ही बजती है, प्रयास और दिशा हमारी, और मेहनत हम सबकी।

अवधूत गगन घटा गहरानी रे
रुम झुम बरसे मेहा
उठो ग्यानी खेत संभारो
बह निरसेगा पानी

सादर
अस्तु

दीपाली पंत जोशी

अनुचिंतन

'बैंकिंग चिन्तन-अनुचिंतन' का अप्रैल-जून 2007 अंक प्राप्त हुआ। शोध क्षेत्र में साक्षात्कार एक आधारभूत प्रविधि होती है, जिसके माध्यम से साक्षात्कार देने वाला बहुत-से अनकहे रहस्यात्मक तथ्यों को अनायास उजागर कर देता है। इस बार का साक्षात्कार कई अर्थों में विचारोत्तजक एवं प्रेरणादायी है। डॉ. राम प्रकाश सिंहल का लेख एस.ई.ज़ेड. संबंधी अनछुई सूचनाएं देते हुए आनेवाले ख़तरों से सावधान भी करता है। 'पृथ्वी पर जीवन-बचाएँगे बैंक' लेख विशुद्ध रूप से वैज्ञानिक लेख है और जटिल तथा तकनीकी विषय को बड़े मार्मिक ढंग से सहज एवं ग्राह्य बनाता है। विनय बंसल अपने लेख में विभिन्न ऋण योजनाओं की अद्यतन जानकारी देते हैं जो किसानों के लिए विशेष रूप से लाभदायक एवं सचेतनता उन्मुख है। बैंकों के शुद्ध एन.पी.ए. के गिरते ग्राफ पर डॉ. राजीव कुमार सिन्हा की चिन्ता एवं चिंतन दोनों वाज़िब है। यूनियन बैंक स्टाफ महाविद्यालय के प्रशिक्षणात्मक भूगोल को पुष्पकुमार शर्मा ने बड़ी जीवंतता से चित्रित किया है। यह प्रस्तुति काव्यमय गद्य बन पड़ी है। सी.आर.एम. सॉफ्टवेयर, मार्केटिंग, ग्राहक संबंध प्रबंधन, ग्राहक संतुष्टि आदि विषयों पर प्रस्तुत लेखों में कई गहरे तर्क और विमर्श हैं। ये लेख ज्ञानवर्धक एवं दिशा-निर्देशक भी हैं। पुस्तक समीक्षाएं समीक्षकों के विवेकपूर्ण एवं निष्पक्ष मूल्यांकन का साक्ष्यांकन है।

◉ डॉ. अमरसिंह वधान
मुख्य प्रबंधक (राजभाषा)
सिंडिकेट बैंक, मणिपाल

'बैंकिंग चिंतन-अनुचिंतन' पत्रिका माह अप्रैल-जून 2007 का अंक मुझे अत्यन्त ज्ञानवर्धक लगा। पत्रिका का हर लेख ज्ञानवर्धक है। जिसमें विशेष रूप से बैंकों में 'सी.आर.एम. सॉफ्टवेयर की उपादेयता' बेहद रोचक व ज्ञान को बढ़ाता है। पत्रिका के सम्पादक मण्डल को हार्दिक शुभकामनाएँ

◉ उपेन्द्रकुमार श्रीवास्तव
अधिकारी
पंजाब एण्ड सिंध बैंक, भरतपुर

हमें आपके कुशल संपादन में प्रकाशित पत्रिका 'बैंकिंग चिंतन-अनुचिंतन' का अप्रैल-जून 2007 अंक प्राप्त हुआ। पत्रिका में शामिल बैंकिंग विषयक लेख एवं साक्षात्कार रोचक और पठनीय हैं। पत्रिका के संपादकीय में ज्ञान अर्जन और इसके महत्व का बखूबी बखान किया गया है।

यूनियन बैंक ऑफ इंडिया के अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक के साक्षात्कार में श्री एम. वी. नायर की प्रोफेशनलिज़्म तो स्पष्ट रूप से झलकती ही है, 'बैंकिंग स्टोर' और 'डेडिकेटेड ट्रेनिंग' आदि के बारे में उनकी मौलिक संकल्पनाएं भी काफी सामयिक हैं। कार्यकारी संपादक द्वारा बैंकों के अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक से लिए गए साक्षात्कारों के दौरान राजभाषा के बारे में उनके विचारों से संबंधित प्रश्न काफी प्रासंगिक लगे। इससे उस संस्था विशेष के अधिकारियों/कर्मचारियों सहित बैंकिंग एवं आर्थिक जगत की अन्य संस्थाओं में कार्यरत कार्मिकों का अभिप्रेरण यह जानकर विशेष रूप से होगा कि राजभाषा के संबंध में शीर्षस्थ प्रबंधन के विचार क्या हैं। ऐसे मौलिक 'आइडिया' के लिए कार्यकारी संपादक बधाई के पात्र हैं। 'इधर-उधर' से शीर्षक के अंतर्गत श्रीमती सावित्री सिंह द्वारा वित्तीय संकल्पनाओं को पाठकों तक पहुंचाने का प्रयास काफी अच्छा लगा। लेखों में प्रयुक्त पारिभाषिक शब्दावली के अंग्रेजी पर्याय पाठकों को लेख पढ़ने के लिए प्रोत्साहित करते हैं। यूनियन बैंक स्टाफ महाविद्यालय के संबंध में प्रस्तुत जानकारी से प्रशिक्षण के क्षेत्र में कम्प्यूटरीकरण का प्रभाव और प्रशिक्षण के नए आयामों से अवगत होने का अवसर मिलता है।

मुझे लगता है कि यह पत्रिका अब हिन्दी में बैंकिंग जगत का मुखपत्र बन चुकी है। पत्रिका के कुशल संपादन के लिए संपादक मंडल को बधाई।

◉ दीपक पालित
महाप्रबंधक (राजभाषा)
इलाहाबाद बैंक, कोलकाता

हमारी संस्था के सभी सदस्यों को पत्रिका के अध्ययन से बैंकिंग परिदृश्य का अद्यतन ज्ञान उनकी अपनी भाषा में हासिल

हो रहा है, और वे उस ज्ञान को आत्मसात करके अपनी कार्यकुशलता बढ़ा रहे हैं।

◉ शरत चन्द्र सेनापति
उप मुख्य अधिकारी
यूको बैंक, इंदौर

आपके द्वारा संपादित *बैंकिंग चिंतन-अनुचिंतन* त्रैमासिक हिन्दी पत्रिका अप्रैल-जून 2007 का अंक यथासमय प्राप्त हुआ। बैंकिंग विषयों पर हिंदी में सामग्री प्राप्त कराने वाली यह एक अनूठी पत्रिका है। बैंकिंग से संबन्धित मूल रूप से हिंदी में लिखे गए आलेखों के माध्यम से नए-नए विषयों पर अद्यतन जानकारी सरल व सुबोध हिंदी में प्रस्तुत करना आकर्षक एवं प्रशंसनीय है।

बैंकिंग क्षेत्र की नवीनतम जानकारी एवं ज्ञानार्जन हेतु पत्रिका का पठन अति आवश्यक है आपकी पत्रिका इसी तरह हमें अभिप्रेरित करती रहे।

◉ नरेन्द्र मोहन नय्यर
आंचलिक प्रबंधक
बैंक ऑफ इंडिया, गांधीनगर

आपके द्वारा प्रकाशित की जा रही पत्रिका *बैंकिंग चिंतन-अनुचिंतन* उपयोगी एवं ज्ञानवर्धक है तथा बैंकिंग उद्योग पर सारगर्भित एवं सामयिक जानकारी उपलब्ध कराती है। पत्रिका के उज्ज्वल भविष्य हेतु शुभकामनाएं।

◉ राकेश कुमार
सहायक निदेशक (राजभाषा)
भारत सरकार, नई दिल्ली

आप द्वारा प्रतिपादित *बैंकिंग चिंतन-अनुचिंतन* पत्रिका निश्चित तौर पर एक क्रान्तिकारी समयपरक बैंकिंग व्यवसाय के मूलभूत व्यावसायिक स्वरूप को प्रतिबिम्बित करने का प्रयास है। हम इस युगान्तकारी पत्रिका के सहृदय पाठक हैं।

◉ आर. एस. त्रिपाठी
विपुलाखण्ड, लखनऊ

पत्रिका का 'अप्रैल-जून 2007' अंक पढ़ा तथा संपादकीय सहित बहुत सारे उपयुक्त लेख उपयोगी लगे। पत्रिका की जितनी भी तारीफ की जाए, कम है। मैं आप सभी संपादक मंडल को अपनी तरफ से हार्दिक शुभकामना देना चाहता हूं।

◉ दया शंकर झा
भारतीय स्टेट बैंक,
सिंगरौली, मध्यप्रदेश

पत्रिका की अप्रैल-जून 2007 की प्रति पढ़ने को प्राप्त हुई। इसकी संरचना एवं इसमें प्रकाशित सामग्री अत्यन्त ज्ञानवर्धक है। मैं बैंक ऑफ बड़ौदा प्रशिक्षण केंद्र, गांधीनगर गुजरात में संकाय हूं।

◉ हेमंत पंड्या
मोटेरा, अहमदाबाद

मैं हिंदी का एक तुच्छ सेवक हूं। आपकी पत्रिका का अप्रैल-जून 2007 का अंक पढ़ने को मिला। पढ़कर मन गदगद् हो गया। विभिन्न बैंकिंग विषयों को अपने में समाहित किये हुए राजभाषा हिंदी में प्रकाशित ऐसी पत्रिका अन्यत्र प्राप्त होना दुर्लभ है। इसे मैं अपना परम सौभाग्य कहूंगा कि पत्रिका में मैंने यह संदेश पढ़ा कि पत्रिका को हम निःशुल्क भी मंगा सकते हैं।

◉ जितेंद्र मोहन शर्मा
राजभाषा अधिकारी
सिंडिकेट बैंक,भुवनेश्वर

आपके सौजन्य से आपके महाविद्यालय की प्रतिष्ठित पत्रिका 'बैंकिंग चिंतन-अनुचिंतन' का अप्रैल-जून 2007 अंक मिला। आभारी हूं।

मैं ने यह अंक भी अद्योपांत देखा। मुझे प्रसन्नता है कि आपने इस पत्रिका का उत्कृष्ट स्तर बनाए रखा है। सभी लेख आदि ज्ञानवर्धक हैं। श्री एम.वी. नायर का साक्षात्कार काफी रोचक एवं उपयोगी रहा। विशेष आर्थिक क्षेत्र और आर्थिक प्रगति पर डॉ. राम प्रकाश सिंहल का लेख भी अच्छी जानकारी देता है।

◉ कृष्ण कुमार ग्रोवर
पूर्व सचिव
संसदीय राजभाषा समिति

साक्षात्कार

मेरे कर्मचारी मेरे ब्रांड एम्बेसेडर हैं

साक्षात्कार स्तम्भ आप सभी पाठकों के स्नेह और प्यार से न केवल पाठकों के बीच बल्कि बैंकों के अध्यक्षों के बीच भी चहेता स्तम्भ बन गया है। यह साक्षात्कार केवल आंकड़ों या बैंक के लेखे-जोखों की बात नहीं करता बल्कि एक सामान्य आदमी के रूप में बैंकों के अध्यक्षों को पाठकों के सामने लाता है ताकि उनके मन के भीतर झांक कर उनके चिन्तन और विचारों के आधार को समझा जा सके। बहुत से बैंकों के बहुत से कर्मचारी अपने अध्यक्ष को ताउम्र देख भी नहीं पाते- अतः हम इस स्तम्भ के माध्यम से उन्हें उनके अध्यक्ष को सामने लाकर उनसे बातचीत करवाते हैं। शायद इसकी सफलता का रहस्य भी यही है।

साक्षात्कार में इस बार प्रस्तुत है ***बैंक ऑफ महाराष्ट्र के अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक श्री एम. डी. मल्या*** *से विस्तार से की गयी बातचीत। इंजिनियरिंग की पढ़ाई के बाद प्रबंधन का पाठ्यक्रम करके कार्पोरेशन बैंक एवं ओबीसी में अपनी बैंकिंग यात्रा करते हुए मार्च 2006 से वे बैंक ऑफ महाराष्ट्र के अध्यक्ष के रूप में अपने बैंक को नयी दिशा दे रहे हैं। टीम के रूप में काम करने में विश्वास करने वाले श्री मल्या - खुले विचारों के हैं और पारदर्शिता में पूरा विश्वास करते हैं- और भारत को सुपर देश के रूप में देखने का सपना देखते हैं। प्रस्तुत है उनसे हुई बातचीत-*

⇨ सर, 'एक परिवार, एक बैंक, महाराष्ट्र बैंक' यह है आपकी कैच लाइन, इसके माध्यम से क्या सन्देश देना चाहते हैं आप।

◉ रिलेशनशिप बैंकिंग- जी हां सही समझ रहे हैं आप। हम संबंधों की बैंकिंग में विश्वास करते हैं, हम बैंकिंग के माध्यम से एक व्यक्ति को ही नहीं बल्कि पूरे परिवार की ग्रोथ को देखना चाहते हैं- वैसे भी सभी जानते हैं कि हमारा बैंक *'कॉमन मैन'* का बैंक कहलाता है- सच कहें तो कहलाता ही नहीं बल्कि 'कॉमन मैन' का ही बैंक है। सबसे बड़ी बात तो यह है कि हमारा बैंक कई पीढ़ियों का बैंक है- मेरा मतलब है ग्राहक आपका ग्राहक ही नहीं है बल्कि उसकी और हमारे बैंक की रिलेशनशिप उसकी कई पीढ़ियों से चल रही है - हम तो यह विश्वास करते हैं कि एक परिवार की जब ग्रोथ होती है तो उससे समाज ग्रो करेगा, समाज से कम्यूनिटी और कम्यूनिटी से स्टेट और फिर पूरा देश ग्रो करता है। एक परिवार, एक बैंक, महाराष्ट्र बैंक सिर्फ कैच लाइन ही नहीं बल्कि कस्टमर के साथ हमारे रिश्तों को डिफाइन करने की भावना है-

⇨ बहुत पहले आप से किसी इन्टरव्यू में पूछा गया था कि आपके बैंक में ब्रांड एम्बेसेडर कौन है तब आपने कहा था कि- मेरे 14,000 कर्मचारी ही मेरे ब्रांड एम्बेसेडर हैं- आप स्टाफ को कैसे जोड़ते हैं, कैसे उन्हें मोटिवेट करते हैं।

◉ अपनापन- अपनापन पैदा करके। मैं आज भी इस बात को दोहराता हूं बल्कि जोर देकर कहता हूं कि मेरे 14,000 कर्मचारी ही मेरे ब्रांड एम्बेसेडर हैं, देखिये- हर व्यक्ति महत्वपूर्ण है- हर कोई अपने आप में एक शक्ति है एनर्जी से भरा हुआ, कमिटेड है, काम करना चाहता है बस केवल ओरियंटेशन की जरूरत होती है, एक दिशा की जरूरत होती है मैंने वही किया - मैंने जहां तक हो सका वन-टू-वन इन्टरएक्शन किया। ग्रुप में किया और जहां जहां भी मैं जाता हूं, वैसे मैं आपको बता दूं कि मैंने बहुत सी शाखाएं कवर कर ली है - मैंने खुलकर बातें की, उनकी बातें सुनी और उन्हें बताया कि हमें क्या करना है। अपने लक्ष्य बनाये, अपना विज़न उन्हें समझाया और बताया कि सर्वाइव करने के लिये हमें टीम के रूप में काम करना होगा, टीम के रूप में हम सब चुनौतियों का सामना कर पायेंगे मैंने यह भी बताया कि हमारी कमजोरियां क्या है, और हमारी शक्तियां क्या हैं... बस यही फार्मूला है जो हमें आगे ले जा रहा है हमने अपनी कमजोरियों को ओवरकम किया और शक्तियों को लेकर आगे बढ़ रहे हैं।

⇨ हां, वो तो आपके वित्तीय आंकड़े दिखा ही रहे हैं।

◉ देखिये, प्रति कर्मचारी कारोबार और लाभ बढ़ा ही है - मैंने सभी यूनियनों को अपने साथ जोड़ा उनका कांफिडेंस लिया ... एक बात मैं स्पष्ट करना चाहता हूं कि लोगों के भीतर आत्मविश्वास भरना भी जरूरी है .. और जब आप अपने में विश्वास करते हैं तो आपकी एनर्जी बहुत बढ़ जाती है - दूसरी बात मैंने - 'वननेस' के साथ-साथ यह भावना भी पैदा की कि - यह बैंक हमारा है और हम बैंक के हैं .. सच कहूं, अब तो मैं कह सकता हूं कि चेयरमैन की भी जरूरत नहीं है।

⇨ जी, बिना लीडर के कोई टीम कैसे काम कर सकती है।

◉ कर सकती है, यदि आप हर मेम्बर को लीडर की तरह बना दें- बैंक ऑफ महाराष्ट्र में हर कोई लीडरशिप कर सकता है - मेरा सौभग्य है कि मुझे बहुत ही बढ़िया टीम मिली है। वैसे एक बात बता दूं - मैं लगभग 7000 कर्मचारियों से सीधे मिल चुका हूं-

⇨ सर, कभी कर्मचारियों से आपको फीडबैक मिला कि वे आपके बारे में क्या सोचते हैं।

◉ रिजल्ट, रिजल्ट से बढ़िया फीडबैक क्या होगा - हमारा बैंक, सभी जानते हैं कि कैसी स्थितियों से गुजर रहा था। सभी निराश थे पर आज, हमारे रिजल्ट हमारी बात कहते हैं। यही तो है कर्मचारियों का बल या मेरी टीम का जवाब।

⇨ आप शिक्षा के स्तर पर बी.ई. अर्थात इंजिनियर हैं और बातें करते हैं एचआर की...आपने एक मंत्र बना लिया है कि एचआर, प्रशिक्षण और आई. टी. ही सफलता दे सकते हैं - ये कैसे हुआ।

◉ बैंकिंग सर्विस सेक्टर में आती है और सर्विस में एचआर बहुत ही महत्वपूर्ण है यदि आप बढ़िया सर्विस देना चाहते हैं तो आपको टेक्नॉलॉजी का सहारा लेना ही पड़ेगा और इन दोनों के बीच में है ट्रेनिंग। अब आप ही सोचिये कि यह सफलता का गुरू मंत्र हुआ कि नहीं। मनुष्य को समझना, उसको समझाना, यह अपने आप में एक तपस्या है, एक साधना है और इस साधना में ही सफलता छुपी हुई है। हैं ना?

⇨ सही कह रहे हैं, सर, आप सबसे ज्यादा किससे प्रभावित हुए-

◉ के. आर. राममूर्ति साहब जो कि कार्पोरेशन बैंक के चेअरमैन थे। आप उन्हें एचआर के एक्पर्ट कह सकते हैं- उनके साथ काम करते हुए मैंने एचआर का पाठ सीखा जो आज तक काम आ रहा है। मेरे बहुत सिम्पल से रास्ते हैं .. मैंने लोगों को रिकग्नाइज किया, एक पहचान दी .. उनके काम को सराहा - आई. टी. वालों से मीटिंग की, उन्हें उनकी जिम्मेदारी का रास्ता बताया .. और ऐसा माहौल बनाया कि मेरे लोग अपने आपको बैंक के साथ आइडेन्टीफाइ कर सकें। और अन्तिम बात - मैं खुद एक्जाम्पल सेट करने में विश्वास करता हूं - यदि हम किसी से कुछ करने के लिये कहते हैं तो हमें स्वयं भी वह काम करना चाहिये तभी आप किसी के आदर्श बन सकते हैं वरना कोई आपकी बात नहीं सुनेगा।

⇨ विज़न 2010 बैंक ऑफ महाराष्ट्र के सन्दर्भ में क्या सोचते

हैं आप

- मैंने या फिर हमारी टीम ने जो कुछ एक्सरसाईज की है वो इस विज़न को पूरा करने के लिये ही तो की है - हमारा तो शेयर्ड विज़न है आंकड़ों की बात छोड़ भी दें तो - हमारा एक ही लक्ष्य है और वह है **ग्रोथ विद क्वालिटी -** गुणवत्ता के साथ विकास - हमारे 12 मिलियन ग्राहकों के सपनों को पूरा करना, उनकी कसौटी पर खरा उतरना उनके जीवन में हैपीनेस भरना - साथ ही में अपने काम को एन्जॉय करना - सो हैपीनेस के साथ हैपीनेस बांटना यही है हमारा शेयर्ड विज़न-।

⇨ आपने कहीं पर 'ऑपरेशन ट्रान्सफॉर्मेशन' की बात कही थी.. कैसे लागू करना चाहते हैं आप

- यह एक प्रोसेस है, मैं अपने बैंक को अधिक वायब्रेंट, अधिक एग्रेसिव और फायनेन्शियल स्टेबल बनाना चाहता हूं - यही मेरा ऑपरेशन ट्रान्सफॉर्मेशन का विचार - यही ओरियन्टेशन भी है, - चुनौती भी है और चुनौती ही है जो हमें अधिक एक्टिव बनाती है।

⇨ आपने कार्पोरेशन बैंक में काम किया - ओबीसी में रहे और अब बैंक ऑफ महाराष्ट्र कैसा अनुभव रहा है यहां का

- कल्चरल डिफरेन्स तो रहता ही है .. यहां मैंने इमोशनल एटेचमेंट ज्यादा महसूस किया, ग्राहक और कर्मचारी दोनों से ही इमोशनल बांडेज है .. शायद पीढ़ियों से रहा जुड़ाव इसका कारण हो या फिर हमारी सेवायें - इमोशनल रूप से जुड़ना हमारे लिये बहुत ही अच्छा है। ग्राहक का अपनापन - उनका यह मानना कि यह बैंक हमारा है .. यह सबसे बड़ा पोजिटिव पक्ष है हमारा..

⇨ आप अपनी बैंकर के काम की यात्रा को कैसे देखते हैं, कैसे रेट करते हैं।

- देखिये, मैं अपने आपको रिज़नेबली गुड बैंकर मानता हूं, मेरी पूरी यात्रा चुनौतीपूर्ण रही है - सफलता मिली , लोग मिले और मैं ग्रो करता रहा-

⇨ कोई ऐसा सपना जिसे एक सीएमडी पूरा नहीं कर पाया

- ड्रीम तो पूरे होते गये - मैं यह मानता हूं कि जो ड्रीमर होता है वही विनर होता है - ड्रीम का क्या है, एक पूरा होता है तो दूसरा शुरू होता जाता है - एक प्रक्रिया है जहां ड्रीम के साथ-साथ जिन्दगी चलती रहती है भले ही आप सीएमडी हो या सामान्य व्यक्ति - ड्रीम की प्रोसेस बनते रहनी चाहिये-

⇨ सर, कोई टर्निंग पाईंट है जो आपको याद है।

- हां.. जब मैं कार्पोरेशन बैंक में था तो वहां श्री चेरियन ने मुझे आई.टी. लागू करने के लिये कहा .. बहुत बड़ा चैलेंज था मेरे लिये .. यह मेरा सौभाग्य था कि - मैंने यह चुनौती पूर्ण की और आई.टी. को लागू किया यह एक रिवॉल्यूशनरी काम था - जिसे मैं नही भूल पाया। पर यह टर्निंग पॉईंट मेरे व्यक्तित्व के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दे गया।

⇨ बैंकिंग के लक्ष्य बदलते रहे हैं .. आज कृषि पर बहुत ज्यादा फोकस किया जा रहा है- बैंक ऑफ महाराष्ट्र ने क्या तैयारी की है इस दिशा में -

- बैंक ऑफ महाराष्ट्र के लिये कृषि कोई नया क्षेत्र नहीं है - हमारी अधिकांश शाखाएं ग्रामीण इलाकों में है और हम किसानों से लगातार जुड़े हुए हैं। अब थोड़ा ज्यादा फोकस किया है .. हमने अपने लोगों के माईंड सेट को मोड़ा, उसे चेंज किया और कृषि के लिये अधिक उपयोगी इनपुट देने की कोशिश की। किसानों को भी इस बात का अहसास कराया कि हम उनके साथ हैं, ताकि वे अपने आप को बैंक के साथ आयडेंटीफाय कर सकें। हमारे एग्रीकल्चर फील्ड ऑफिसर सम्पर्क का काम कर रहे हैं - हम किसानों को बुलाते हैं, उन्हें ट्रेनिंग देते हैं, उनकी जरूरतों को समझते हैं- हम फार्मर क्लब बनाते हैं, उनकी बैठकें करते हैं। हमने महाराष्ट्र के विदर्भ क्षेत्र में एक विशेष 'शेतकरी अभियान' चलाया है। यह कोई बिजनेस प्लान नहीं है बल्कि अपने सोशल आब्लिगेशन - सामाजिक दायित्व के रूप में किया है। सब खर्चा बैंक उठाता है - हमने अमरावती में ट्रेनिंग की है, अब यवतमाल में कर रहे हैं और आगे हर जिले में करने की हमारी योजना है। हमारा 30,000 सेल्फ हेल्प

ग्रुप से जुड़ाव है - 16000 से ज्यादा क्रेडिट लाइन, इस प्रकार से हम सेकन्ड बेस्ट बैंक रहे हैं। हमारी आरआरबी को पुरस्कार मिला है।

एक और प्रयास हमने किया है- हमने किसानों के प्रॉडक्ट को मार्केट तक पहुंचाने के लिये आउटलेट की व्यवस्था की .. पुणे में भी दो ऐसी दुकाने हैं .. हमने उसे 'सावित्री' नाम दिया है- जहां किसान अपना प्रोडक्ट लाकर बेचते हैं। इसी प्रकार से अनइम्पलाइड यूथ के लिये भी हमारी योजना है - हम यूथ को ट्रेनिंग देते हैं ताकि वे अपना कारोबार शुरू कर सकें।

सच कहूं, यह सब बिजनेस से ज्यादा सामाजिक दायित्व के कार्य हैं, जो बैंक ऑफ महाराष्ट्र समाज के लिये कर रहा है- आप चाहें तो हमारी पीठ थपथपा सकते हैं।

⇨ सर, आपके पूर्ववर्ती अध्यक्ष ने कस्टमर इन्डेक्सिंग की बात की थी क्या ऐसा कोई कार्य हुआ है।

◉ हमने कस्टमर रिलेशनशिप में बहुत कार्य किया है - इन्डेक्सिंग उसका एक भाग है। 600 से ज्यादा हमारी शाखायें सीबीएस अर्थात कोर बैंकिंग सोल्यूशन से जुड़ गयी हैं- सीआरएम माड्यूल काम कर रहे है- जिससे हम कस्टमर के बहुत ही करीब हैं और कस्टमर हमारे करीब है - हमने 'कीबेस' नामक बाईलिंग्वल एप्लीकेशन भी अपनाया है जो ऐसी शाखाओं में काम कर रहा है जहां सीबीएस नहीं हैं।

⇨ वो जो टेक्नॉलॉजी विथ पर्सनल टच की बात।

◉ वही बता रहा हूं - हम मशीनों को भी ह्यूमन फेस दे रहे हैं क्योंकि मैं केवल मशीनी काम में विश्वास नहीं करता - बैंकिंग सेवा है और सेवा में मनुष्य का जुड़ना, उसकी भावना का जुड़ना बहुत जरूरी है तब ही तो इमोशनल रिलेशनशिप जुड़ पायेगी।

⇨ ग्राहकों को जोड़ने----

◉ मैं वो ही बताने जा रहा हूं - न केवल टेक्नॉलॉजी बल्कि आपका दृष्टिकोण भी ग्राहक केंद्रीत होना चाहिये .. हमने बाहरी एजेन्सी की सहायता से कई सर्वे किये और अपने फ्रंटलाइन स्टाफ को ट्रेन किया ताकि वे ग्राहक के साथ जुड़ने की एक कड़ी बनें- मजबूत कड़ी।

⇨ बैंकिंग कारोबार में भाषा की क्या भूमिका देखते हैं आप, विशेषकर राजभाषा हिन्दी-

◉ भाषा ही तो वो कड़ी है जो हमें ग्राहक से जोड़ती है, कारोबार को जोड़ती है अतः मैं तो यह मानता हूं कि- ग्राहक की भाषा में किया गया काम सफलता देता ही है हम ग्रामीण शाखाओं में तो मराठी का प्रयोग करते ही हैं - पर राष्ट्रीय स्तर पर मैं हिंदी की अहमियत मानता हूं पर अभी हमें इस दिशा में बहुत कुछ करना बाकी है।

⇨ सर कोई सन्देश - या अपना सपना शेयर करना चाहेंगे।

◉ मेरा तो यही कहना है कि वायब्रेंट प्रोसेस की तरफ बढ़ना चाहिये। यही मिशन होना चाहिये कि हम महान देश बनाने की दिशा में ही प्रयास करें - जो नैतिक और आर्थिक क्षेत्र में सुपर देश बनकर उभरे - हमें भारत को आगे बढ़ाने के ही सपने देखने चाहिये- भले ही वो व्यक्ति के रूप में हो या संस्था के रूप में हमें गर्व होना चाहिये कि हम अपने देश को सुपर देश बना रहे हैं - यही मेरा सपना है और यही मेरा सन्देश।

प्रस्तुति : **पुष्प कुमार शर्मा**

◆

भारतीय अर्थव्यवस्था और आर्थिक विकास- एक अन्तर्दर्शन कृषि के सन्दर्भ में

◉ डॉ. दीपाली पंत जोशी
मुख्य महाप्रबंधक,
बैंकर प्रशिक्षण महाविद्यालय,
भारतीय रिज़र्व बैंक, मुंबई

भारतीय अर्थव्यवस्था में अनेक प्रकार के परिवर्तन होते रहे हैं। यह संरचनात्मक तथा नीतिगत दोनों ही प्रकार के हैं परन्तु आर्थिक विकास के ध्येय में कोई अन्तर नहीं हुआ है। आर्थिक विकास की परिभाषा है वह प्रक्रिया जिससे प्रति व्यक्ति आय में बढ़ोतरी हो और गरीबी रेखा के नीचे रहने वालों की संख्या में कमी हो, विकास की प्रक्रिया एक विशिष्ट वर्ग के हित में सीमित न रहते हुए समान हो और आय में अच्छी असमानता न बढ़ें। 1997 में विशत कमीशन पर्यावरण और विकास ने 'साझा भविष्य' नामक रिपोर्ट के द्वारा आर्थिक विकास के दो मापदण्ड रखे हैंः 1. राष्ट्रीय आय जिसकी बढ़ती दर आर्थिक विकास का द्योतक है और गिरती दर नकारात्मक विकास का द्योतक है। स्थाई दर आर्थिक निष्क्रियता का एक खतरनाक संदेश है 2. दूसरा मापदंड है प्रति व्यक्ति आय अर्थात आय 'पर हेड' विकास दर का मापदंड आय प्रति डालर है। एक डालर अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर आय का मूल्य माना जाता है।

मानव विकास सूचकांक

प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों ने प्रति व्यक्ति घरेलू उत्पाद या प्रतिव्यक्ति समग्र राष्ट्रीय उत्पाद को मानव कल्याण का सूचक माना था क्योंकि प्रति व्यक्ति अधिक आय से ही अधिक वस्तुओं का उपभोग करके उच्च जीवन स्तर को बनाए रखना सम्भव है। उपयोगितावादी अर्थशास्त्रियों ने 'वस्तुओं' को 'उपयोगिता' से प्रस्थापित किया और बाद में प्रो. पाल ए. सेम्युल्सन ने मानव कल्याण की अवधारणाओं को विकास का सूचक बनाया परन्तु यह सूचकांक भी सर्वमान्य नहीं बन पाया। विकास का सर्वमान्य सूचकांक विकसित करने के उद्देश्य से UNDP में कार्यरत अर्थशास्त्री महबूबल हक की पहल पर प्रो. अमर्त्य सेन तथा प्रो. सिंगिर हंस के नेतृत्व में ख्यातिप्राप्त अर्थशास्त्रियों की एक टोली बनी जिसने सामर्थ्य सिद्धांत पर आधरित मानव विकास सूचकांक विकसित किया।

मानव विकास व्यक्तियों की पसन्दगियों को विस्तृत करने की प्रक्रिया है। सिद्धांत में ये पसन्दगियां अनेक हो सकती हैं और समय के साथ परिवर्तनीय हो सकती हैं परन्तु विकास की हर स्तर पर तीन अनिवार्य पसन्दगियां हैं। ये हैं- लम्बी और स्वस्थ जिंदगी व्यतीत करने की इच्छा, ज्ञान प्राप्त करने की इच्छा और एक खूबसूरत जिंदगी बिताने के लिए आवश्यक संसाधनों तक पहुंच रखने की इच्छा। यदि ये तीनों पसन्दगियां उपलब्ध नहीं हैं तो व्यक्ति अन्य अनेक अवसरों से वंचित रह जाता है।

यदि कोई व्यक्ति धनी या सम्पन्न है किन्तु वह अस्वस्थ रहता है या वह अनपढ़ और अज्ञानी है तो उसकी जिन्दगी अच्छी नहीं मानी जा सकती। इसी प्रकार यदि कोई व्यक्ति खूब पढ़ा-लिखा और स्वस्थ है किन्तु निर्धन है तो वह भी अपनी आवश्यकताओं को पूरी नहीं कर सकता और अच्छा जीवन नहीं बिता सकता।

इन तीनों में से किसी की भी कमी अच्छा जीवन बिताने से वंचित कर सकती है। अतः इन तीनों का संयुक्त सूचकांक ही विकास का सही सूचकांक है।

मानव विकास सूचकांक (HDI) की गणना : मानव विकास सूचकांक के तीन प्रमुख अवयव हैं : जीवन काल, ज्ञान की प्राप्ति का स्तर और आय। जीवन काल की माप जीवन प्रत्याशा से होती है। जीवन प्रत्याशा का अर्थ है कि जन्म के समय चल रही मृत्यु दर पर जीवित रहने की आशा कितनी है? ज्ञान की प्राप्ति के स्तर की माप दो शैक्षिक स्टाक चरों प्रौढ़ शिक्षा की दर तथा स्कूलिंग के औसत वर्ष से की जाती है। प्रौढ़ शिक्षा की दर का अर्थ है कि 15 वर्ष और उससे अधिक उम्र की जनसंख्या का प्रतिशत जो अपने दैनिक जीवन में काम भर पढ़ लिख सके। शिक्षा की दर को 2/3 तथा स्कूलिंग को 1/3 भारांक दिया जाता है। $E = a_1$ x शिक्षा की दर + a_2 x स्कूलिंग का वर्ष $a_1 + {}^2/_3$ और $a_2 = {}^1/_3$ यदि शिक्षा की दर 60 प्रतिशत और औसत स्कूलिंग 3 वर्ष है तो $E = 2/3 \times 60 + 1/3 \times 3 = 41$ मानव विकास

सूचकांक की गणना के लिए जिस आय स्तर को लिया जाता है वह न तो बाज़ार मूल्यों पर प्रति व्यक्ति सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) है और न क्रय शक्ति समता पर प्रति व्यक्ति सकल घरेलू उत्पाद है बल्कि समायोजित सकल घरेलू उत्पाद है। समायोजित सकल घरेलू उत्पाद इस मान्यता पर आधारित है कि औसत निर्धनता रेखा से अधिक आय का मानव विकास में योगदान ह्रासमान प्रतिफल नियम पर आधारित होगा।

सितंबर की यूएन डी पी 2007 की रिपोर्ट के अनुसार भारत 127 वें स्थान पर है। 177 देशों की गणना में यह बहुत उज्ज्वल स्थिति नहीं है। श्रीलंका भी भारत से आगे है।

भारत मानव विकास सूचकांक के दृष्टिकोण से 1992 में 173 देशों में से 134 वें स्थान पर था और 1993 में 135 वें स्थान पर चला गया था। 1995 में 174 देशों में 134 वें स्थान पर था तथा महिलाओं के अधिकारों के मामले में भारत 101 वें स्थान पर है।

मानव विकास सूचकांक की गणना में केवल तीन ही चरों को सम्मिलित किया है किन्तु अन्य चरों जैसे अपराध की दर 5 वर्ष से कम उम्र के शिशुओं की मृत्यु दर आदि को भी सम्मिलित किया जा सकता है। मानव विकास सूचकांक विकास का एक ऐसा मापदंड है जिसे सर्वमान्य कहा जा सकता है। मानव विकास सूचकांक में चरों के गुणात्मक पक्ष की गणना नहीं की जाती है।

विकासशील देशों में आर्थिक विकास की दर की ओर अग्रसर होना तो अच्छा है किन्तु इस प्रक्रिया से जनहित में वृद्धि आवश्यक है। हमें अर्थात फिजिकिल क्वालिटी आफ लाईफलाइन इन्डेक्स (PQLI) की ओर भी ध्यान देना आवश्यक है।

साक्षरता राष्ट्रीय आय का एक महत्वपूर्ण प्रतिशत है। इस पर खर्च होना चाहिये। आईसीओ और यूनेस्को जैसी अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं का मत है कि हमें एक बीएनए बेसिक नीडस अनिवार्य जरूरतों को ध्यान में रखते हुए नीति निर्धारण करना चाहिये। 1990 के दशक से यूएनडीपी ने ह्यूमन डेवलपमेंट इन्डेक्स को अपना लिया है इसके तीन पहलू हैं:

- प्रति व्यक्ति आय
- शैक्षणिक योग्यता
- जीवन उम्मीद और स्वास्थ्य

इसमें महत्वपूर्ण बात यह है कि केवल आय में बढ़ोतरी को ही मान्यता नहीं दी जाती। 1950 और 1960 के दशक में भारतीय अर्थव्यवस्था में राष्ट्र (State) को एक अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका प्रदान की गयी थी। राष्ट्र की बढ़ती हुई भूमिका से जटिल नियन्त्रण प्रणाली का फैलाव बढ़ा, औद्योगिक अनुमतियों में वृद्धि हुई?

महालानोबिस मॉडल द्वारा भविष्य में आर्थिक विकास की दर एक विस्तारित रूपरेखा तैयार की गई थी। अर्थशास्त्रियों का यह अनुमान था कि विकास के हितकारी लाभ का समान वितरण और लाभदायक फैलाव होगा इस नीति की मूल धारणा व्यापक भारी औद्योगीकरण की थी। आजादी के बाद के 4 दशकों में हमारी नीतियों के आधार स्तम्भ निम्नलिखित चार पहलू थे:

- औद्योगिक स्वावलंबन
- विदेशी मुद्रा नियंत्रण
- आयात प्रतिस्थापन
- आर्थिक स्वयं निर्भरता

इन चार दशकों में हमने निर्यात नीति पर ध्यान न देकर आयात के उपर ध्यान केंद्रित किया। इस नीति से हम उचित मात्रा में विदेशी मुद्रा अर्जित नहीं कर पाये, आर्थिक अस्थिरता का सामना करना पड़ा। 1980 के दशक में विदेशी संस्थाओं से ऋण लेना पड़ा और आगे चलकर ऋण अदायगी करने में समस्याएं उत्पन्न हुई। इस प्रक्रिया में बेरोज़गारी और गरीबी की ज्वलंत समस्याओं ने और भी उग्र रूप धारण कर लिया। अर्थव्यवस्था चरमरा रही थी और आर्थिक बढ़ोतरी की दर गिर कर 3 या 4 प्रतिशत पर 'हिन्दू रेट ऑफ ग्रोथ' की एक हास्यास्पद परिभाषा हो गई थी। 1990-91 में आर्थिक व्यवस्था का संकटकाल चरमस्थ सीमा पर था।

कुछ नवीन सृजनात्मक नीतियों की आवश्यकता थी। पुराने ढर्रे को बदलना था। पूर्ण विश्व में एक व्यापक बदलाव का दौर या 'रूस' का टूटना और पूर्ण एशिया की तथाकथित (HAPE) उतंग उचल क्रियान्वित अर्थव्यवस्थाओं के उदाहरण हमारे समक्ष थे। एक नयी आर्थिक नीति का निर्धारण प्रसंगवश और नये विकल्प के समक्ष हुआ।

कृषि नियोजन : भारत की अर्थव्यवस्था की चुनौतियां तथा अवसर

हमारे देश को गरीबी की समस्या से अभी निबटना है। वर्तमान में एक अरब आबादी में से 35 करोड़ लोग गरीबी - रेखा के नीचे गुजर-बसर कर रहे हैं। 60 प्रतिशत से अधिक आबादी अब भी अपने जीवनयापन और रोजगार के लिए कृषि पर निर्भर है। चिंता का प्रमुख विषय यह है कि राष्ट्रीय आय में कृषि क्षेत्र के योगदान में तेजी से कमी आई है, परंतु कृषि पर जनसंख्या की निर्भरता में मामूली गिरावट देखी गई है। ग्रामीण आबादी के लिए कृषि में लाभकारी रोजगार अवसरों को जुटाना उस परिदृश्य में और भी चुनौतीपूर्ण कार्य है, जहां जोतों का आकार न सिर्फ छोटा है, बल्कि यह लगातार सिकुड़ता जा रहा है और भूमि पर दबाव निरंतर बढ़ता जा रहा है। ऐसे में ग्रामीणों, विशेषकर गरीब तबके के लिए रोजगार जुटाने के लिए जबरदस्त प्रयास करने की आवश्यकता है।

खाद्यान्न आत्मनिर्भरता

रचनात्मक नियोजन, कृषि अनुसंधान तथा विकासोन्मुख नीतियों के चलते हमारा देश खाद्यान्न के क्षेत्र में आत्मनिर्भर बन सका है। सन 1960-61 में खाद्यान्न उत्पादन 8.2 करोड़ टन रहा, जबकि पिछले वर्ष 20.3 करोड़ टन का रिकार्ड उत्पादन दर्ज किया गया। इसी प्रकार नब्बे के दशक में वार्षिक सुरक्षित (बफर) भंडार 2 से 3 करोड़ टन रहा। खाद्यान्न उत्पादन में वृद्धि हमारी जनसंख्या वृद्धि के मुकाबले अधिक रही है। यही कारण है कि कृषि के क्षेत्र में देश के प्रदर्शन को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सराहा गया है। तिलहन, व्यापारिक फसलें और पशुधन के क्षेत्र में हमारी प्रगति उल्लेखनीय रही है।

इस संदर्भ में हमें सबसे पहले यह समझना होगा कि कृषि के लिए उपलब्ध भूमि सीमित है। दरअसल, संभावना तो यह भी व्यक्त की जा रही है कि कृषि योग्य क्षेत्रफल कुछ सिकुड़ सकता है। पर्यावरण की दृष्टि से जरूरी है कि वनाच्छादित क्षेत्र को उसके वर्तमान के खतरनाक स्तर के मुकाबले बढ़ाया जाए। इसी प्रकार शहरीकरण और उद्योग भी हमारी कृषि योग्य भूमि को निगलते जा रहे हैं। हम इन तथ्यों से आँखे नहीं मूंद सकते। मौजूदा स्थिति इस बात के मद्देनजर और भी जटिल हो गई है कि कृषि विकास के हमारे पुराने स्रोत संतृप्त हो गए हैं। इस परिदृश्य में कृषि उत्पादन को बढ़ाने के उपायों पर काम करने की जरूरत है। कुछ अन्य समस्याएं भी हैं -

असंतुलित क्षेत्रीय विकास

इस असंतुलित क्षेत्रीय विकास के कारण काफी बड़ी संख्या में ग्रामीणों को विकसित तथा शहरी इलाकों में जाकर बसने के लिए मजबूर होना पड़ा। इक्कीसवीं शताब्दी के दौरान कृषि-नियोजकों की प्राथमिकता इस असंतुलन को कम करने और अंततः पूरी तरह समाप्त करने तथा रोजगार के नए उत्पादक अवसर जुटाने की होनी चाहिए।

कृषि विविधीकरण की आवश्यकता

कृषि में घटता निवेश भी चिंता का एक विषय है

गरीबी की विस्तारित परिभाषा है मूल समर्थता का अभाव। पिछले वर्षों में भारत में गरीबी उन्मूलन का नवीन प्रयोग माइक्रोफाइनांस को स्केल कर 'मेनस्ट्रीम' में लाने का रहा है। 1960 से लेकर 1980 के दशक में आर्थिक विकास का सप्लाई लेड मॉडल ही अपनाया गया था जिसका आधार फाइनेन्सियल कन्ट्रोल था। पिछले दो दशकों में 'भागीदारी' का मॉडल अपनाया गया है। जन साधारण के हित में उनकी जरूरतों के इर्द-गिर्द बनाये गये इस नये माइक्रोफाइनांस मॉडल से बड़ी आशाएं है। पूर्ण रूप से विकास वृद्धिकर्ताओं और विकास अर्थशास्त्रियों की यह धारणा है कि इस मॉडल के सृजन से गरीबी का पूर्ण रूप से उन्मूलन सम्भव ही नहीं यथार्थ है और यह केवल एक आशावादी सोच नहीं है।

सबसे बड़ी चुनौती है बैंकों के द्वारा सहज रूप से एक ग्रामीण फाइनेंसियल सिस्टम को सजग बनाना। आजकल का नया शब्द है 'एक्सेस' अर्थात भाग लेने की क्षमता के विकास करने का प्रयास ऋण को जज़्ब करने की क्षमता को बढ़ाना।

70 के दशक में एक ब्लूप्रिंट अप्रोच अपनाया गया था। एक पैमाना तैयार करके ऊपर से थोप दिया जाता था। सब्सिडी और सस्ती दरों पर ऋण उसके दो स्तम्भ थे। 90 के दशक में यह सोच बिल्कुल ही बदल गयी और स्वावलम्बन और बैंकों के सहयोग की धारणा ने जोर पकड़ा।

हमारे समक्ष सबसे बड़ी चुनौती यह है की 70 फीसदी लोग अब भी ग्रामों के निवासी हैं। 35% गरीब हैं और 30% गरीबी रेखा के तले हैं। गरीबी 'स्थायी' और 'अस्थायी' गरीबी भी है। अस्थायी जो माइग्रेंट वर्कर की जब फसल नहीं काटी जा रही होती है तब की गरीबी रेखा के ऊपर या तले होना भी स्थायी नहीं है। एक भयानक एक्सॉजनस शॉक से जैसे बाढ़

सूखा आदि से स्थिति क्षण भर में तब्दील हो सकती है।

मान लीजिए निर्धनता की रेखा 180 रुपए प्रति व्यक्ति प्रति माह है। इससे कम का उपभोग करने वाले सभी व्यक्ति निर्धनता की रेखा के नीचे जीवन-यापन कर रहे हैं। उन सबको आरोही क्रम में लिया जाए अर्थात 180 के नीचे 179,178,177 .. जो 180 के जितना ही करीब है वह उतना ही कम गरीब है और जितना ही दूर है वह उतना ही अधिक गरीब है। इसी को कहते हैं निर्धनता की गहनता। अमर्त्य सेन ने निर्धनता का गुणांक भी निकाला है जिसे 'सेन का निर्धनता गुणांक' कहते हैं। इस गुणांक का मूल्य शून्य और इकाई के बीच होता है। गुणांक का मूल्य जितना ही शून्य के करीब होगा निर्धनता की गहनता उतनी ही कम होगी।

सेन के गुणांक की गणना निम्न सूत्र की सहायता से ज्ञात की जा सकती है-

$$X\ [Cp^x - Cp(1-Gp)]$$

Cp^x

I = निर्धनता गुणांक, X = निर्धनता की रेखा से नीचे जनसंख्या का अनुपात **Cp^x** = निर्धनता की रेखा, **Cp =** निर्धनों का औसत उपभोग, **Gp** = गरीबों के उपभोग का गिनी गुणांक

यदि × =30, Cp^x =180 रुपए , Cp =120™O, GP = 0.30 तो I = 0.07

सेन की विधि नीति निर्धारकों के लिए बहुत ही लाभदायक है। यह विधि स्पष्ट बताती है कि जो व्यक्ति, समाज या क्षेत्र निर्धनता की रेखा से जितनी ही दूर होगा उसको उतनी ही अधिक मदद की आवश्यकता है और इसके विपरीत जो निर्धनता की रेखा के करीब है उसे कम मदद की आवश्यकता है। भारत सरकार ने समग्र ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अंतर्गत इस विधि का प्रयोग किया है। प्रारम्भ में उन सभी परिवारों को निर्धनता की रेखा के नीचे मान कर सहायता दी जाती थी जिनकी आय प्रति वर्ष 6400 रुपए थी। बाद में यह निश्चित किया गया कि 4800 रुपए से नीचे वालों को अधिक सहायता दी जाए तथा 6400 रुपए से 4800 रुपए के बीच वालों को कम सहायता दी जाए क्योंकि इनकी निर्धनता की गहनता कम है।

ऋण की आवश्यकता जीवन की लाइफ साईकल की जरूरतों को पूरा करने के लिये अर्थात पैदाईश/विवाह/मृत्यु नौकरी आदि के लिए होती है।

ऋण के अलावा आवश्यक बचत सुविधाओं का पूर्ण रूप से अभाव है। बचत की आवश्यकता ऋण से कहीं अधिक होती है। यदि बचत की सुविधा नहीं होती तो जो भी छोटा मोटा संचित धन है उसका व्यय शीघ्र हो जाता है। माइक्रोफाइनेंस विचारधारा के स्वरूप स्वयं सहायता समूह में भी कई मतभेद उत्पन्न हो गये हैं। एक आर्थिक उदारीकरण के लक्ष्य की प्रक्रिया में गरीबी उन्मूलन की आवश्यकता पर तो मतभेद नहीं है, यह केवल इसके स्वरूप में है। इसका दो गुटों में विभाजन हो गया है एक ओर है संस्थागत वित्त में आस्था रखने वाले तो दूसरी ओर है इनके विपरीत गैर संस्थागत मत के अर्थशास्त्री जो उदारपन अर्थात वेलफेयर को प्राथमिकता देते हैं।

संस्थागत व्यवस्था में आस्था रखने वाले, संस्थाओं जैसे बैंकों द्वारा ऋण डिलिवरी में विश्वास करते हैं, बैंकों से ऋण प्रदान करने में यह लोगों तक पहुंचने की क्षमता बढ़े हुए पैमाने पर सबसे गरीब लोगों तक जाने के प्रयास नहीं करते हैं। संस्थागत वित्त प्रदान करने वाले अर्थशास्त्री ऋण की दर में कोई रियायत करने के पक्ष में नहीं होते हैं। बैंक रकायत इनडोबीसिया और बैंको सेलिडेरियो बोलिविया इसके परम उदाहरण हैं।

आइये एक नजर आर्थिक नतीजों पर डालते हैं। इन 60 वर्षों में क्या उचित और क्या अनुचित रहा। जो नीति आज विषम प्रतीत होती है उसका अवलोकन करते समय यह भी आंके कि क्या अमुक नीति उस समय के परिवेश में तर्कसंगत व अनुकूल थी। आज खाद्य पदार्थों में देश आत्मनिर्भर है, भुखमरी नहीं है। अर्थव्यवस्था सुदृढ़ है और 9 प्रतिशत की वृद्धि दर है परन्तु गरीबी की समस्या अभी भी है। स्वास्थ्य आरोग्य की समस्या और शैक्षणिक विकास दर साथ-साथ सबसे बड़ी चुनौती है समदृष्ट विकास की। मेरा यह मत है कि राज्य एक अविवेकी असंगत तथ्य नहीं है, **योजना** का अपना स्थान है, सेंट्रल बैंक को बाज़ार की गतिविधियों के नियंत्रण के लिये नीतियों का निर्माण तो अवश्य करना चाहिये। सफल आर्थिक व्यवस्था के लिये इन्हें यह एक अनिवार्य प्रक्रिया मान कर ही चलना चाहिये। आर्थिक नीति के निरन्तर प्रयासों में मानव विकास सूचकांक को भी महत्व देने की आवश्यकता है।

ग्रामीण विकास में बैंकों की भूमिका

श्याम लाल गौड़
महाप्रबन्धक (सेवा निवृत्त)
भारतीय रिज़र्व बैंक

भारत में ग्रामीण विकास और बैंकिंग-परिप्रेक्ष्य - परिदृश्य

बैंक विकास के मुख्य साधन हैं। एक विकासशील देश में तो बैंकों का दायित्व और भी महत्वपूर्ण हो जाता है। बैंक जनसाधारण से संसाधन एकत्र कर निवेश, कृषि, उद्योग, व्यापार या उपभोग इत्यादि के लिए ऋण उपलब्ध कराते हैं । उनका दोहरा दायित्व है। जमाकर्ताओं की राशि की सुरक्षा जहाँ सर्वोपरि लक्ष्य है, वहीं बैंकिंग के अन्य लक्ष्यों की प्राप्ति भी उतनी ही महत्वपूर्ण है।

भारत जैसे विशाल कृषि प्रधान और विविधताओं वाले देश में जिसकी बहु-संख्यक आबादी ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती हो और अपने जीवन यापन के लिए कृषि पर प्रत्यक्ष या परोक्ष रुप से निर्भर करती हो, कृषकों/ग्रामीणजनों के वित्त पोषण की कोई सार्वभौम ऋण पद्धति अपनाया जाना संभव नहीं है। समाज के विभिन्न वर्गों की ऋण आवश्यकताएं अलग-अलग होती हैं और उनकी पूर्ति के माध्यम भी भिन्न भिन्न होते हैं। कृषि/ग्रामीण क्षेत्र में भी ऋण आवश्यकताओं की पूर्ति का यही सिद्धान्त लागू होता है। जहाँ सबल और समर्थ कृषक/ग्रामीण अपनी ऋण आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए विभिन्न माध्यम स्वयं तलाश कर लेते हैं, वहीं गरीब ग्रामीण/कृषक, उपेक्षित/असहाय सी स्थिति में होता है। वह संगठित भी नहीं है। देश की अर्थव्यवस्था के प्रबन्धन में गरीब ग्रामीण/कृषक मूक दर्शक की तरह होता है जो मंच पर होने वाले कार्यक्रमों का साक्षी तो बन जाता है लेकिन कोई भूमिका नहीं निभा सकता।

ग्रामीण/कृषकों की असहाय दीनहीन विपन्न स्थिति का चित्रण भारतीय साहित्य में अमर कथा शिल्पी स्वर्गीय प्रेमचन्द ने मार्मिक और प्रभावी रूप में किया है। भारतीय किसान गरीबी में पैदा होता है, गरीबी में जीता है और गरीबी की विरासत अपने बच्चों को सौंपकर इस संसार से विदा हो जाता है। यह मात्र अतिश्योयोक्तिपूर्ण कथन नहीं वरन् ग्रामीण जीवन का एक कटु यथार्थ रहा है। आजादी से पूर्व के एक शोषित, पीड़ित और असहाय कृषक के यथार्थ से संभवतः वर्तमान पीढ़ी परिचित न हो लेकिन यह एक सच्चाई थी। भारत में ब्रिटिश शासन ने भी इस तथ्य को स्वीकार किया था। उन्हें राहत पहुँचाने की आवश्यकता भी प्रतिपादित की गयी थी और संभवतः कुछ उपाय भी किए गए थे चाहे वे दिखावे ही सिद्ध हुए हों। सन् 1931 में केन्द्रीय बैंकिंग जांच समिति जिसके अध्यक्ष एक भारतीय श्री भूपेन्द्र नाथ थे, भारतीय बैंकिंग पर सुझाव देने के लिए गठित की गयी थी। इस समिति ने अपने प्रतिवेदन में अन्य बातों के अतिरिक्त ग्रामीण जनों/कृषकों के हितों के लिए अनेक महत्वपूर्ण सिफारिशें की थी, जो निम्न मुख्य विषयों को आवृत्त करते हुए थी :

- ग्रामीण ऋण-ग्रस्तता और कृषि/ग्रामीण वित्त
- ग्रामीण वित्त पोषण में महाजनों की भूमिका और बैंकिंग व्यवसाय के साथ समेकन
- सहकारी ऋण व्यवस्था में सुधार
- भूमि बन्धक बैंकों की स्थापना ताकि कृषकों की दीर्घकालीन वित्तीय आवश्यकताओं की पूर्ति हो सके और ग्रामीण अर्थव्यवस्था को बढ़ावा मिले

इस समिति ने बैंकिंग संस्थाओं के विनियमन के लिए एक कानून बनाने तथा केन्द्रीय बैंक की स्थापना करने के लिए भी सिफारिश की जिसके अनुसरण में 1935 में भारतीय रिजर्व बैंक बना। देश में कृषि, कृषक और ग्रामीण अर्थव्यवस्था के व्यापक महत्व का प्रतिपादन इस तथ्य से सहज ही हो जाता है कि भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम में कृषि जो ग्रामीण विकास का पर्याय ही माना जाता है की देखभाल के लिए विधि के अन्तर्गत सुस्पष्ट रूप में विशेष व्यवस्था की गयी और भारतीय रिज़र्व बैंक पर यह दायित्व डाला गया कि वह कृषि व अन्य ग्रामीण विकास सम्बन्धी ऋण सुविधाओं में विस्तार व समन्वय के लिए सुनियोजित प्रयास करे। रिज़र्व बैंक की स्थापना के साथ ही इस विषय पर अधिनियम में इस आशय के प्रावधानों

का स्पष्ट उल्लेख किया गया।

आजादी के बाद इस दिशा में प्रयासों की शृंखला ने और भी जोर पकड़ा। एक नए आर्थिक चिन्तन का सूत्रपात हुआ, संस्थागत वित्त को विकास की एक महत्वपूर्ण इकाई के रूप में विकसित किए जाने की आवश्यकता पर बल दिया गया। ग्रामीण क्षेत्रों के लोगों को प्राप्त ऋण/साख सुविधाओं की उपलब्धि का आंकलन करने के लिए भारत सरकार द्वारा एक अखिल भारतीय ग्रामीण ऋण सर्वेक्षण समिति (All India Rural Credit Survey Committee) का गठन किया गया। इस समिति ने व्यापक अध्ययन कर 1951 में अपने प्रतिवेदन में ग्रामीण साख में वित्त प्रदान करने वाले घटकों की स्थिति निम्न प्रकार दर्शायी है।

तालिका एक **ऋण वितरण - संस्था अनुसार**

साख संस्था	संस्था का ग्रामीण कृषकों के कुल लिए गए कर्जे का अनुपात प्रतिशत
1. सरकार	3.3
2. सहकारिताएं	3.1
3. रिश्तेदार	14.2
4. भूपति	1.5
5. बडे किसान महाजन	24.9
6. साहूकार	44.8
7. व्यापारी एवं आढ़तिया	5.5
8. वाणिज्य बैंक	0.9
9. अन्य	1.8
कुल	**100.00**

आंकडे बताते हैं कि कृषि/ग्रामीण ऋणों में बैंकों का योगदान लगभग नगण्य था । केवल सहकारिताएं ही संस्थागत वित्त प्रदान करने वाली एजेन्सियों का प्रतिनिधित्व करती थी। दशकों के अस्तित्व के बाद भी कृषि प्रयोजनों के लिए कुल ऋण वितरण में सहकारिताओं का अंशदान मात्र 3.1 प्रतिशत था। कैसी शोचनीय स्थिति थी? उस समय की ग्रामीण ऋण वितरण की मुख्य इकाई प्राथमिक सहकारी ऋण समितियों की स्थिति उस समय कैसे थी इस पर भी जरा नज़र डालें। 1951-52 में, 1,07,925 प्राथमिक कृषि ऋण समितियाँ थी और इनकी उस वर्ष कुल सदस्य संख्या 47,76,819 थी। इन समितियों की औसत सदस्यता 44 थी। प्रत्येक समिति की औसत हिस्सा पूँजी मात्र 827 रुपये थी। औसत जमा राशि प्रति समिति 408 रुपये थी और कायशील पूँजी प्रति समिति मात्र 4109/- रुपये थी। ऋण प्रणाली इतनी क्लिष्ट और प्रतिबन्धात्मक थी कि वह किसी भी हिताधिकारी को इनकी ओर आकृष्ट नहीं कर पाती थी। फिर ये समितियाँ मुख्यतः अल्पावधि ऋण प्रदान करने के कार्य में ही सन्नद्ध थी, मध्यावधि अथवा दीर्घावधि ऋण जैसी व्यवस्थित नीति अपनायी ही नहीं गयी थी । वस्तुतः ये समितियाँ ग्रामीण क्षेत्रों में राशन या कन्ट्रोल की वस्तुएं बेचने का माध्यम मात्र थीं जो युद्धकालीन अर्थव्यवस्था की उपज थी। वैसे भी अपनी दीन-हीन आर्थिक स्थिति में ये समितियाँ किस प्रकार ऋण वितरण का कार्य हाथ में ले सकती थीं, इस अपेक्षा पर वे खरी उतर ही नहीं सकती थी। प्रतिबन्धात्मक कार्यविधि और विपन्न आर्थिक संसाधनों ने इन्हें पनपने का अवसर ही नहीं दिया। समिति की सिफारिशों के फलस्वरुप इन संस्थाओं के महत्व को स्वीकारते हुए इन संस्थाओं के पूंजीगत साधनों को सुदृढ़ करने का कार्य हाथ में लिया गया। विभिन्न उपाय इस दिशा में किए गए जिनमें रिज़र्व बैंक द्वारा स्थापित दीर्घावधि परिचालन निधि (एल.टी.ओ.फन्ड) से राज्य सरकारों को इन संस्थाओं की हिस्सा पूँजी में अंशदान के लिए लम्बी अवधि के ऋण दिए जाने भी शामिल थे।

आजादी के बाद ग्रामीण विकास और बैंकिंग - नई दृष्टि

आजादी के बाद इस दिशा में महत्वपूर्ण कार्य हुआ और उसके परिणाम भी शनैः शनैः दृष्टिगोचर होने लगे। 1966 में अखिल भारतीय ग्रामीण ऋण समीक्षा समिति का गठन किया गया जिसने सुधार के लिए अनेक सुझाव दिए जिनमें से कुछ प्रमुख सुझाव निम्न प्रकार थे :-

- सहकारी तन्त्र के पुनर्गठन की प्रक्रिया जारी रखी जाए
- ग्रामीण ऋणों के लिए मात्र सहकारी तन्त्र पर ही निर्भर न रहा जाए । वाणिज्यिक बैंकों को इसमें प्रमुख भूमिका दी जाए

- पर्याप्त व समय पर ऋण प्रदान करने की दिशा में प्रगतिशील कदम उठाये जाए
- लघु-सीमान्त कृषकों की समस्याओं का पता लगाकर आवश्यक सहायता प्रदान की जाएं

इन सिफारिशों के अनुसरण में 1970 में भारतीय रिज़र्व बैंक ने ग्रामीण ऋण से संम्बन्धित बैंकों में प्रचलित परिचालन सम्बन्धी पद्धतियों, रीति नीतियों एवं प्रक्रियाओं की विस्तृत समीक्षा एवं अध्ययन किया तथा इन रीति नीतियों को युक्ति संगत रूप से अपनाने संबंधी दिशा निर्देश सभी वाणिज्यिक एवं अन्य बैंकों को जारी किए। एक अन्य कार्यकारी दल ने ग्रामीण क्षेत्रों में लगाए जाने वाले आधुनिक लघु उद्योगों और विकसित ग्रामीण घरेलू उद्योगों के लिए बड़े पैमाने पर ऋण विनियोजन के सम्बन्ध में सुझाव दिए । यह क्रम अभी भी जारी है। लेकिन सदियों से स्थापित इस मान्यता को, कि ग्रामीण गरीब उधार का पात्र नहीं है, ध्वस्त होने में समय लगेगा ही।

कृषि/कुटीर - लघु ग्रामीण उद्योग - प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र में शामिल : संस्थागत वित्त में विस्तार

आजादी के बाद से अनेक प्रयास कृषि ऋणों में विस्तार के लिए किए गए लेकिन अपेक्षित गति प्राप्त नहीं हो सकी। भारत में 1969 से पूर्व बैंकिंग संस्थाएं अपने एक स्थापित ढाँचे के अन्तर्गत ही ऋण उपलब्ध करा रही थीं। संस्थागत ऋण प्रसार समाज के लिए एक विशिष्ट एवं सुविधा सम्पन्न वर्ग तक ही सीमित रहा और देश के विभिन्न वर्गों की आधारभूत ऋण आवश्यकताओं के प्रति बैंकिंग क्षेत्र लगभग उदासीन ही रहा। कृषि/ग्रामीण वर्ग जो पहले भी हमारी राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के रीढ़ की हड्डी था और अब भी सर्वाधिक महत्वपूर्ण है, 1970 के दशक तक बैंकों के उदार ऋण प्रवाह से लाभान्वित नहीं हो सका। 1969 में सरकारी क्षेत्र के बैंकों द्वारा अपने कुल ऋण का मात्र 1.30 प्रतिशत ही प्रत्यक्ष कृषि ऋणों के लिए प्रदान किया गया था।

वस्तुतः छोटे ग्रामीण कृषक/भूमिहीन ग्रामीण लोगों के लिए तो बैंकों के दरवाजे खुले ही नहीं थे। यह व्यवस्था किसी विकासशील अर्थव्यवस्था के लिए न तो सुखद थी और न ही सामान्यजन की आकांक्षाओं के अनुरूप। अतः निरन्तर इस बात की आवश्यकता महसूस की जाती रही कि अर्थव्यवस्था की अब तक की उपेक्षित इकाइयों खास तौर से कृषि और ग्रामीण विकास को मुख्य धारा में शामिल किया जाना चाहिए। इसके लिए बैंकिंग प्रणाली को एक सशक्त माध्यम बनाने की परिकल्पना की गयी। इस अवधारणा को कार्यरूप में परिणित करते हुए राष्ट्रीय स्तर पर कुछ महत्वपूर्ण निर्णय लिए गए जिनमें सर्वप्रथम बैंकिंग उद्योग पर सामाजिक नियन्त्रण का निर्णय था। उसके शीघ्र बाद आया बड़े वाणिज्यिक बैंकों का राष्ट्रीयकरण जो जुलाई 1969 से प्रारम्भ हुआ। यह क्रम निरन्तर जारी रहा और अनेक उपाय बैंकिंग क्षेत्र के माध्यम से ग्रामीण विकास और ग्रामीण क्षेत्र के आर्थिक एवं सामाजिक उन्नयन के लिए किए गए। बैंकों को सामाजिक और आर्थिक परिवर्तन के सक्रिय एजेन्ट के रूप में स्थापित करने की दिशा में प्रयासों की श्रृंखला जारी रही।

नई विचारणा के फलस्वरूप एक नई अवधारणा ने आकार ग्रहण किया। अब तक उपेक्षित अथवा जिन क्षेत्रों को अधिक व सरल ऋण सुविधाओं की आवश्यकता थी उनका वर्गीकरण किया गया। इस वर्गीकृत क्षेत्र को प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र का नाम दिया गया। मूलतः इन वर्गों में कृषि, लघु उद्योग, परिवहन चालक, फुटकर व्यापारी, स्वनियोजित व्यक्ति, शिक्षा, आवास व उपभोग ऋणकर्ता वर्ग शामिल किये गए थे। कृषि और कृषि से सम्बद्ध कार्यकलाप इसके मुख्य घटक रहे हैं। इस अवधारणा पर सर्वप्रथम 1968 में राष्ट्रीय ऋण परिषद की बैठक में विचार किया गया, फिर भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा 1971 में गठित एक अनौपचारिक अध्ययन दल की रिपोर्ट के आधार पर 1972 में प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्रों को औपचारिक अभिव्यक्ति प्रदान की गई। प्रारम्भ में प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्रों के अग्रिमों के अन्तर्गत कोई विशिष्ट लक्ष्य निर्धारित नहीं किए थे, लेकिन नवम्बर 1974 में बैंकों को सूचित किया गया कि वे अपने सकल अग्रिमों का 33.33 प्रतिशत मार्च 1979 तक इन क्षेत्रों को प्रदान करें। बाद में इन लक्ष्यों को संशोधित करते हुए इसे 40 प्रतिशत कर दिया गया जिसे 1985 तक प्राप्त किया जाना था । कुछ उप-लक्ष्य भी निर्धारित किए गए। इन उप-लक्ष्यों में कृषि के लिए 18 प्रतिशत का लक्ष्य निर्धारित किया गया था। प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष दो वर्ग भी बनाए गए।

बैंकिंग तन्त्र कारगर ढ़ंग से इन वर्गों को ऋण उपलब्ध कराए इसके लिए सीमाबद्ध/समयबद्ध लक्ष्य निर्धारित किए

गए। भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा इस हेतु विस्तृत मार्गदर्शी सिद्धान्त जारी किए गए, जिनकी अनुपालना सम्बद्ध बैंकों से अपेक्षित थी। समय-समय पर इन निर्देशों में संशोधन/परिवर्तन किए जाते रहे हैं और इनका क्षेत्र विस्तारित किया जाता रहा है। वस्तुतः प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्रों का निर्धारण भारतीय बैंकिंग में एक सर्वथा नयी दिशा की ओर उठाया गया महत्वपूर्ण कदम था जिसके दूरगामी परिणाम परिलक्षित हुए। इस वर्ग को वित्तपोषण के संदर्भ में स्वयं के योगदान (मार्जिन) तथा प्रतिभूति सम्बन्धी रियायतें भी प्रदान की गयी हैं।

इन निर्देशों के जारी होने के बाद से इन क्षेत्रों को बैंकों से वित्तपोषण में भारी सुधार हुआ है। खास तौर से कृषि क्षेत्र में जैसा कि तालिका सं. दो में सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों द्वारा कृषि को प्रदत्त ऋणों के आंकड़ों से परिलक्षित होता है।

बैंकों द्वारा प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्रों को वित्तपोषण के समग्र लक्ष्य प्राप्त कर लिए गए हैं लेकिन कृषि क्षेत्र के उप-लक्ष्य अभी प्राप्त किए जाने शेष हैं जो मार्च 2005 को 18 प्रतिशत के लक्ष्य के विरुद्ध 15.7 प्रतिशत थे।

बैंकों द्वारा ग्रामीण शाखा विस्तार

1969 से अब तक भारतीय बैंकिंग के क्षेत्र में व्यापक परिणामात्मक और गुणात्मक परिवर्तन हुए हैं। एक विशाल/व्यापक शाखा तन्त्र की स्थापना की जा चुकी है जिसका उपयोग जनसंख्या के बड़े वर्ग को बैंकिंग सेवाएं प्रदान करने में किया जाना होगा। शाखा तन्त्र विस्तार का यह उपक्रम भारतीय बैंकिंगा तन्त्र की एक विशिष्ट उपलब्धि रही है और विश्व बैंकिंग इतिहास में एक अनोखी मिसाल। सन् 1969 से शुरु हुए इन प्रयासों के फलस्वरूप वाणिज्य बैंकों के स्थापित किए गए शाखा तन्त्र को यहां तालिका सं. 3 में सूक्ष्म में आंकड़ों के माध्यम से दर्शाया गया है।

बैंक शाखाओं में वृद्धि का क्रम निरन्तर जारी है । शाखा विस्तार का मूल लक्ष्य ग्रामीण/अर्ध-शहरी हिताधिकारियों की सुविधाजनक पहुँच में शाखाएं खोलना था जो लगभग प्राप्त किया जा चुका है। ऐसे-ऐसे दुर्गम क्षेत्रों में, विरल जनसंख्या वाले क्षेत्रों में भी अब बैंक शाखाएं उपलब्ध है जहां आधारभूत सुविधाएं भी उपलब्ध नहीं थी। देश में ग्रामीण विकास हेतु वित्तपोषण के लिए वर्तमान में विद्यमान ढाँचे को अगले पृष्ठ पर चित्र ग्राफ में दर्शाया गया है।

सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों की सर्वाधिक शाखाएं अब ग्रामीण और अर्ध-शहरी क्षेत्रों में कार्यरत हैं। यद्यपि बैंक ऋणों का विविध क्षेत्रों में चहुँमुखी विस्तार हुआ है, ऋण विस्तार की यह दर ग्रामीण क्षेत्रों में अपेक्षाकृत कम रही है। वाणिज्यिक बैंकों द्वारा मार्च 2005 के अन्त में कुल प्रदान किए गए 11,52,468 करोड़ रुपये के ऋणों में मात्र 1,60,479 करोड़ रुपये के ऋण ही ग्रामीण क्षेत्रों को प्रदान किए गए जो लगभग 14 प्रतिशत के आसपास हैं। ये ऋण भी देश के विभिन्न क्षेत्रों में

तालिका सं. 2

कृषि क्षेत्र को संस्थागत वित्त में विस्तार

वर्ष	खातों की संख्या (लाख में)	बकाया राशि (करोड़ रुपये में)	कुल बैंक ऋण (करोड़ रुपये में)	कुल ऋणों का प्रतिशत
जून 1969	1.7	162	3016	5.4
मार्च 2003	1.68	70,502	4,81271	14.5
मार्च 2004	190	84,435	5,61819	15.1
मार्च 2005	202	1,09,917	7,11304	15.3
मार्च 2006	237	1,54,900	10,17,614	15.2

(स्रोत : भारतीय रिज़र्व बैंक की, भारत में बैंकिंग की प्रवृत्ति एवं प्रगति सम्बन्धी रिपोर्ट, 2005-06)

तालिका सं. 3

वाणिज्यिक बैंकों का समूह-वार शाखा तन्त्र

शाखा समूह	19 जुलाई 1969		30 जून 1981		30 जून 1991		30 जून 2000		30 जून 2000	
	शाखा संख्या	कुल का प्रतिशत	शाखा संख्या	कुल का प्रतिशत	शाखा संख्या	कुल का प्रतिशत	शाखा संख्या	कुल का प्रतिशत	शाखा संख्या	कुल का प्रतिशत
ग्रामीण	1860	22.5	17650	49.4	35212	58.4	32771	50.2	30776	44.3
अर्ध शहरी	3344	40.2	8426	23.6	11281	18.7	14329	21.8	15370	22.1
शहरी	1456	17.50	5126	14.4	7630	12.7	10057	14.4	12008	17.3
महानगरीय	1661	20.0	4505	12.6	6128	10.2	8189	12.5	11263	16.2
कुल	8321	100.0	35707	100.0	60251	100.0	65340	100.0	69417	100.0

ग्रामीण क्षेत्र 10,000 तक की जन संख्या वाले स्थान **अर्ध-शहरी क्षेत्र** 10,000 से अधिक और एक लाख तक की जनसंख्या वाले स्थान
शहरी 1 लाख से अधिक और 10 लाख तक की जनसंख्या वाले स्थान **महानगरीय** 10 लाख से अधिक जनसंख्या वाले स्थान

ग्रामीण वित्तपोषण हेतु संस्थागत ढाँचा

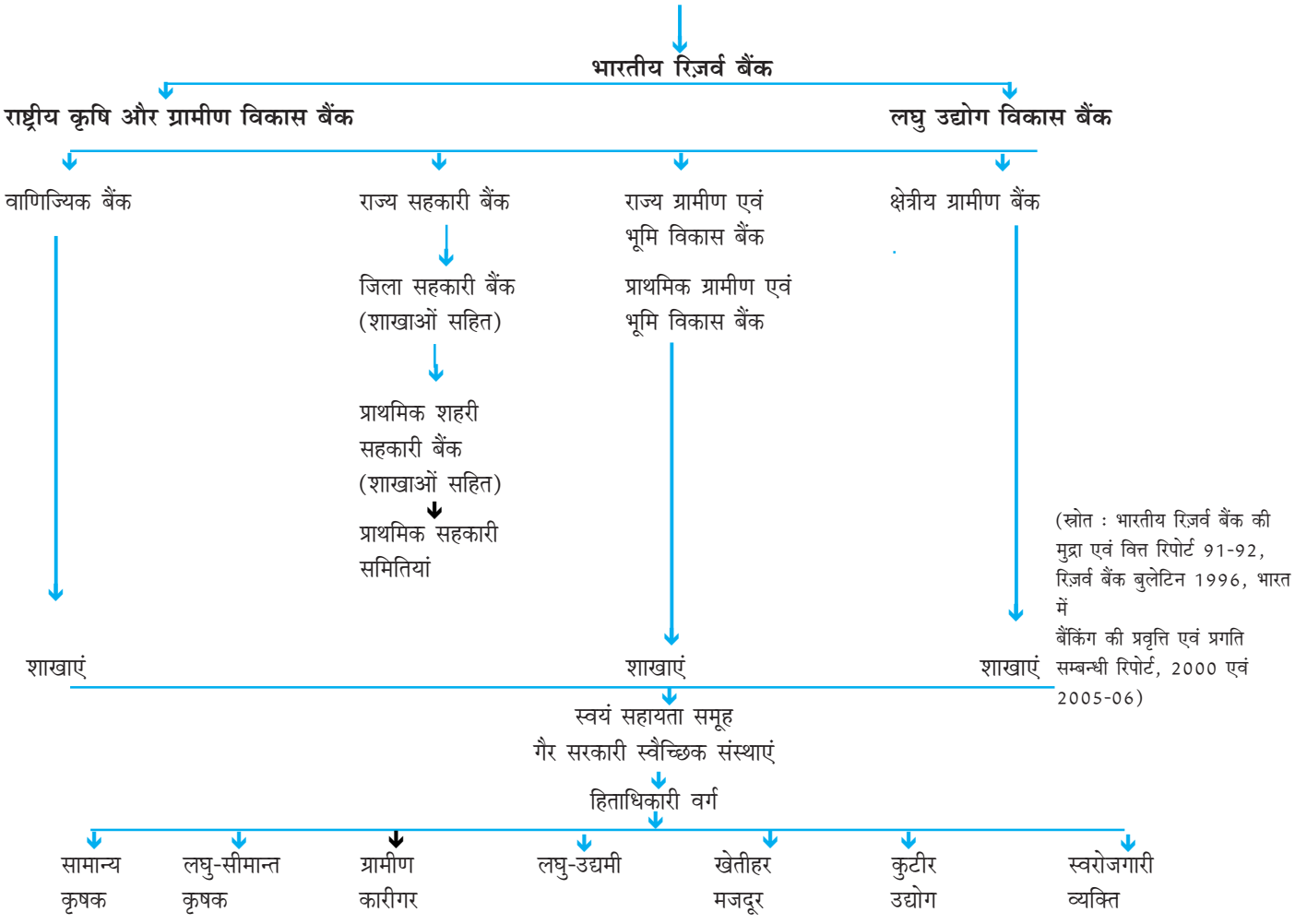

(स्रोत : भारतीय रिज़र्व बैंक की मुद्रा एवं वित्त रिपोर्ट 91-92, रिज़र्व बैंक बुलेटिन 1996, भारत में बैंकिंग की प्रवृत्ति एवं प्रगति सम्बन्धी रिपोर्ट, 2000 एवं 2005-06)

असमान रूप से प्रदान किए गए हैं। मार्च 2005 के अन्त में कुल बकाया ऋणों का 50 प्रतिशत देश के मात्र पांच राज्यों, आन्ध्र प्रदेश, कर्नाटक, उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र और तमिलनाडु में था। जबकि समस्त उत्तरी पूर्वी क्षेत्र जिसमें अरुणाचल प्रदेश, असम, मणिपुर, मेघालय, मिजोरम, नागालैण्ड और त्रिपुरा में इसी समयावधि में बैंकों का मात्र 3 प्रतिशत ही बकाया था। वर्ष 2006 में ग्रामीण ऋणों में अच्छी वृद्धि दर्ज की गयी लेकिन अभी भी कृषि ऋण वांछित स्तर को प्राप्त नहीं कर पाए हैं। गत दिनों एन.एस.एस.ओ. द्वारा किए गए एक अध्ययन के अनुसार केवल 27 प्रतिशत कृषक परिवार ही संस्थागत ऋण प्राप्त कर सके थे, 22 प्रतिशत कृषक परिवारों ने साहूकारों से ऋण प्राप्त किया, शेष 51 प्रतिशत कृषक परिवारों को संस्थागत स्तर पर कोई ऋण सुविधा उपलब्ध नहीं थी। इनमें से अधिकांश कृषक परिवार गैर-सिंचित जमीन के काश्तकार थे और लघु/सीमान्त वर्ग से थे।

ग्रामीण विकास और ग्रामीण बैंकिंग - विपुल सम्भावनाएं

ऋण के माध्यम से विकास की परिकल्पना नई नहीं है। वस्तुतः विकास का मूल आधार ही आर्थिक संसाधन है। लेकिन मात्र आर्थिक संसाधन अपने आप में विकास के लक्ष्य प्राप्त नहीं कर सकते। मात्र संस्थाओं की विपुलता भी विकास की गारन्टी नहीं बन सकती जब तक दृष्टिकोण में वांछित परिवर्तन न हो। भारतीय परिप्रेक्ष्य में आजादी के बाद से ही ग्रामीण क्षेत्रों में, जो अभी तक उपेक्षित थे, विकास कार्य को गति देने हेतु बैंकों/ वित्तीय संस्थाओं का सहयोग लिया गया और इस हेतु प्रभावी प्रयास किए गए। अनेक ग्रामीण विकास आधारित कार्यक्रम जो सरकार द्वारा प्रायोजित थे, बैंकों के सक्रिय सहयोग और उदार वित्तपोषण के माध्यम से सफलतापूर्वक सम्पादित किए गए। 1952 से ही ऐसे कार्यक्रमों की शुरुआत हो गयी थी। कुछ ऐसे कार्यक्रम जिनमें बैंकों का योगदान भुलाया नहीं जा सकता वे थे; सामुदायिक विकास कार्यक्रम, सघन कृषि जिला कार्यक्रम, कृषि क्षेत्र कार्यक्रम, अधिक उपज देने वाली फसलों का कार्यक्रम, अग्रणी बैंक योजना, लघु कृषक विकास एजेन्सी, सीमान्त कृषक और कृषि श्रमिक कार्यक्रम, त्वरित ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम, सूखा संभाव्य क्षेत्र कार्यक्रम, पहाड़ी क्षेत्र विकास परियोजना, कमान्ड क्षेत्र विकास कार्यक्रम, संकलित ग्रामीण विकास कार्यक्रम (IRDP), अंत्योदय कार्यक्रम, मरु विकास कार्यक्रम, मत्स्य विकास कार्यक्रम, विशेष पशुपालन कार्यक्रम, राष्ट्रीय ग्रामीण रोज़गार कार्यक्रम, ग्रामीण क्षेत्रों में महिला और बाल विकास कार्यक्रम, सेवा क्षेत्र दृष्टिकोण, स्वयं सहायता समूह, वाटर शेड कार्यक्रम, भारत निर्माण योजना इत्यादि। कभी बैंकों को इस बात के लिए आरोपित किया जाता था कि वे ग्रामीण विकास कार्यक्रम के नाम पर गाय-भैंसों के लिए कर्जा बांटकर अपने दायित्व की सरल पूर्ति की औपचारिकता निभा रहे हैं। लेकिन यह धारणा भ्रामक साबित हुई। आज भारत को विश्व का सबसे बडा दूध उत्पादक होने का श्रेय प्राप्त है जिसमें बैंकों का योगदान भुलाया नहीं जा सकता। आज भारत में ग्रामीण क्षेत्रों में विकास की आवश्यकताओं और ग्रामीण जनों की अपेक्षाओं के अनुरूप विकास प्रक्रिया को अपेक्षित गति देने एवं आर्थिक सम्बल प्रदान करने के लिए एक विशाल बैंकिंग/ वित्तीय तन्त्र विकसित हो चुका है। नियोजित विकास की अर्थ व्यवस्था को अपनाए जाने के बाद इन संस्थाओं को निश्चित दिशा और उद्देश्य भी प्राप्त हो गया है।

आज देश जिस प्रकार आर्थिक क्रान्ति के दौर से गुजर रहा है और संरचनात्मक क्षेत्रों में सुधार के फलस्वरूप प्रगति के नए द्वार खुलते जा रहे हैं, ग्रामीण क्षेत्र भी इससे अछूता नहीं बचा है। शहरी और ग्रामीण भेद में दूरियां निरन्तर कम होती जा रही हैं और ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्रों में परस्पर सहबद्धता में उल्लेखनीय सुधार हुआ है। वह दिन अब ज्यादा दूर नहीं जब यह भेद लगभग नगण्य रह जायेगा। अब वह दौर शुरु हो गया है जब प्रतिष्ठित निजी क्षेत्र के बैंक और विदेशी बैंक भी ग्रामीण क्षेत्रों में संभावनाएं तलाशने लगे हैं। वस्तुतः निजी क्षेत्र के बैंक तो आगामी समय को ग्रामीण विकास की प्रबल सम्भावनाओं वाला समय घोषित कर चुके हैं और तद्नुरुप अपनी नीतियों को नया रूप देने में लगे हैं। किसान क्रेडिट कार्ड, स्वयं सहायता समूहों को वित्तपोषण, लघु ऋण जैसे नए-नए क्षितिज ग्रामीण बैंकिंग के क्षेत्र में उदय हो रहे हैं और लोकप्रिय हो रहे हैं ।

ग्रामीण विकास और सहकारिता: नई चुनौतियां और समाधान

◉ सुशील कृष्ण गोरे
सहायक प्रबंधक (राजभाषा)
भारतीय रिज़र्व बैंक, मुंबई

भारत गांवों का देश है। इसलिए भारत की तरक्की का रास्ता गांवों से होकर जाता है। भारत के गांवों में अभी तक सड़क, बिजली, पानी जैसी बुनियादी सुविधाओं और आधारभूत संरचनाओं का अभाव महसूस किया जाता है। गांव अपेक्षित विकास की मुद्दत से प्रतीक्षा कर रहे हैं। गांवों की इन्हीं आधारभूत आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए भारत सरकार ने भारत निर्माण योजना बनाई है। प्रधानमंत्री ने इस योजना का शुभारंभ दिसंबर 2005 को दिल्ली में किया था। ग्रामीण विकास तथा ग्रामीण बुनियादी ढांचे के निर्माण पर केंद्रित यह एक समयबद्ध महत्वाकांक्षी कार्ययोजना है। इस योजना में निम्नलिखित 6 क्षेत्र शामिल हैं:

1. ग्रामीण विद्युतीकरण
2. ग्रामीण जलापूर्ति
3. ग्रामीण आवास
4. ग्रामीण सड़कें
5. ग्रामीण टेलीफोन संपर्क
6. सिंचाई

> दक्षिण भारत के छोटे से कस्बे कांजीवरम में सबसे पहले सन् 1904 में कांजीवरम अर्बन को-ऑपरेटिव बैंक की स्थापना की गई थी। मैकलेगन समिति (1914) ने शहरी सहकारिता आंदोलन में निहित भावी संभावनाओं को पहचानकर उसके विकास की तरफ लोगों का ध्यान आकर्षित किया।

सहकारी बैंकिंग की भूमिका

जैसाकि नाम से साफ हो जाता है कि यह सेक्टर बैंकिंग तथा सहकारिता का अपने आप में एक अनूठा संगम है। आइए चलें, इस सेक्टर या यूं कहें कि इस सहकारिता आंदोलन के इतिहास के भीतर। हमारे देश के सहकारिता आंदोलन का इतिहास लगभग 100 साल पुराना है। ब्रिटिश राज में कृषि सहकारी समितियां अधिनियम, 1904 के बनने के साथ इसकी औपचारिक शुरूआत मानी जाती है।

हालांकि 'ज्वाइंट स्टॉक बैंकों' ने शहरी तथा अर्द्ध-शहरी क्षेत्रों में अपनी शाखाएं खोली लेकिन उन्हें शहरी मध्य/निम्न वर्ग की बैंकिंग तथा ऋण संबंधी जरूरतों को पूरा करना फायदेमंद नहीं लगा। सीमित साधन वाले इस वर्ग की जरूरतें जब ज्वाइंट स्टॉक बैंक पूरा नहीं कर सके तो यह वर्ग मजबूरी में साहूकारों से ऊंची-ऊंची दरों पर ऋण लेता रहा। शायद यही वह विशेष परिस्थिति थी जो भारत में गैर-कृषि क्रेडिट सोसायटियों के जन्म का प्रमुख कारण बनी। इस प्रकार शहरी सहकारी बैंकों का उद्भव सहकारिता आंदोलन को कानूनी दर्जा मिलने से उपजे माहौल में एक स्थानीय प्रतिक्रिया के रूप में हुआ था। दूसरी तरफ आप देखेंगे कि ग्रामीण स्तर पर सहकारिता आंदोलन अधिकांशतः राज्य द्वारा प्रवर्तित था। अगर सहकारी बैंकों की उत्पत्ति की जड़ तलाशी जाए तो हम पाएंगे कि दक्षिण भारत के छोटे से कस्बे कांजीवरम में सबसे पहले सन् 1904 में कांजीवरम अर्बन को-ऑपरेटिव बैंक की स्थापना की गई थी। मैकलेगन समिति (1914) ने शहरी सहकारिता आंदोलन में निहित भावी संभावनाओं को पहचानकर उसके विकास की तरफ लोगों का ध्यान आकर्षित किया। दिलचस्प बात है कि इसी दौरान 1913-14 में देश की बैंकिंग व्यवस्था के सामने एक संकट पैदा हो गया था जब लगभग 57 ज्वाइंट स्टॉक बैंक बैठ गए और उनमें जमा पैसे निकालकर सहकारी बैंकों में जमा किया जाने लगा। मैकलेगन समिति ने इस बैंकिंग संकट की जांच-पड़ताल के बाद यह पाया था कि लोगों ने गैर-सहकारी संस्थाओं/समितियों से अपनी जमाराशियां निकालकर सहकारी संस्थाओं में जमा कर दी थी। लोगों द्वारा इन दोनों प्रकार की संस्थाओं में से सहकारी संस्थाओं को तरजीह दिए जाने के दो प्रमुख कारण थे। पहला, उनकी स्थानीय छवि और दूसरा उनका अर्थात सहकारिता आंदोलन के साथ सरकार का जुड़ाव। शहरी सहकारी बैंक शहरी तथा अर्द्ध शहरी क्षेत्रों की क्रेडिट जरूरतों को पूरा करने में एक अहम भूमिका निभाते हैं। वे मध्यम तथा निम्न आय वर्गों से उनकी बचत जमा करते हैं और समाज के गरीब तबके के छोटे उधारकर्ताओं को ऋण

मुहैया कराते हैं।

भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम के अनुसार ग्रामीण ऋण मुहैया कराने की विशेष जिम्मेदारी केंद्रीय बैंक की है। भारतीय रिज़र्व बैंक के अखिल भारतीय ग्रामीण ऋण सर्वेक्षण (1951) ने यह जाहिर कर दिया था कि ग्रामीण ऋण प्रदान करने में सहकारी संस्थाएं बुरी तरह नाकाम रही हैं। लेकिन कृषि संबंधी ऋण देने में उन्होंने अहम भूमिका निभाई है। इसी तरह 1966 में कराए गए सर्वेक्षण से भी यही निष्कर्ष निकला कि सहकारी संस्थाएं अप्रभावी हो चुकी हैं। लेकिन सर्वेक्षण में यह माना गया था कि इन्हें सफल बनाना एक महत्वपूर्ण दायित्व है। वर्ष 1969 में बैंकों के राष्ट्रीयकरण के परिणामस्वरूप ग्रामीण क्षेत्रों में बैंकों की संख्या एवं बैंकिंग सुविधाएं बढ़ी। भारतीय रिज़र्व बैंक ने 1975 में कृषि से जुड़ी अपनी भूमिका का एक हिस्सा कृषि पुनर्वित्त तथा विकास निगम (एआरडीसी) नामक एक नई राष्ट्रीय संस्था को सौंप दिया था। इसके तुरंत बाद एक अधिनियम बनाकर क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की स्थापना की गई जिनमें केंद्र तथा राज्य सरकारों और राष्ट्रीयकृत बैंकों की सहभागिता थी। इसके बाद एआरडीसी को नाबार्ड में परिवर्तित कर दिया गया।

भारत में सहकारी बैंकिंग का ढांचा थोड़ा जटिल है। इसके अंतर्गत शहरी सहकारी बैंक तथा ग्रामीण सहकारी ऋण संस्थाएं दोनों ही आती हैं। शहरी सहकारी वित्तीय संस्थाओं को ही आम तौर पर प्राथमिक सहकारी या शहरी सहकारी बैंक कहा जाता है। 31 मार्च 2006 तक कुल 1853 शहरी सहकारी बैंकों में से 55 अनुसूचित शहरी सहकारी बैंक हैं। शेष 1798 गैर-अनुसूचित शहरी सहकारी बैंकों में से 117 महिला शहरी सहकारी बैंक तथा 6 अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति बैंक हैं। इसके अलावा 79 वेतन अर्जक शहरी सहकारी बैंक भी हैं। कुल 1853 शहरी सहकारी बैंकों में से 914 शहरी सहकारी बैंक यूनिट बैंक हैं।

ऐतिहासिक रूप से देखा जाए तो ग्रामीण सहकारी ऋण संस्थाओं ने कृषि तथा ग्रामीण क्षेत्रों को ऋण देने में एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। ये ग्रामीण सहकारी ऋण संस्थाएं विशेष रूप से दो प्रकार की रही हैं:

1. *अल्पकालिक सहकारी ऋण संस्थाएं*
2. *दीर्घकालिक सहकारी ऋण संस्थाएं*

ये दोनों प्रकार की संस्थाएं फसल, कृषि, ग्रामोद्योग आदि के लिए किसानों एवं कारीगरों को ऋण देती हैं।

शहरी सहकारी बैंकों का मार्केट शेयर:

31 मार्च 2006 को समग्र भारत में कुल 1853 शहरी सहकारी बैंक, 84 अनुसूचित वाणिज्यिक बैंक, 133 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक तथा 398 ग्रामीण सहकारी बैंक (जिसमें 31 राज्य सहकारी बैंक तथा 367 जिला सहकारी बैंक शामिल हैं) थे। इन तमाम प्रकार के बैंकों के मार्केट शेयर की तुलना करें तो पता चलता है कि कुल बैंक जमाराशि में से शहरी सहकारी बैंकों का मार्केट शेयर काफी कम है। नब्बे के दशक के प्रारंभ में इनका मार्केट शेयर 3.3% था जो इस दशक के अंत तक बढ़ते-बढ़ते 6.6% हो गया। लेकिन इसके बाद नई सहस्राब्दि के पहले वर्ष से ही लगातार घटते-घटते 4.8% (अनंतिम) हो गया। नीचे की सारणी देखें।

सारिणी

(मार्केट शेयर का प्रतिशत)

कुल जमाराशि की तुलना में सभी समूह के बैंकों का मार्केट शेयर				
31 मार्च को समाप्त वर्ष	शहरी सहकारी बैंक (यूसीबी)	ग्रामीण सहकारी बैंक (आरसीबी)	क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक (आरआरबी)	वाणिज्यिक बैंक
1996	4.5	7.2	2.5	85.8
1997	4.9	7.6	2.6	84.9
1998	5.3	7.7	2.8	84.2
1999	5.6	7.8	2.8	83.8
2000	6.6	7.7	2.8	82.9
2001	6.3	7.2	2.9	83.6
2002	6.4	7.2	3.0	83.4
2003	6.3	7.0	3.0	83.7
2004	5.8	6.6	3.1	84.5
2005	5.3	6.3	3.1	85.3
2006	4.8	5.5	3.0	86.7

शहरी सहकारी बैंकों को 1966 में बैंककारी विनियमन के दायरे में लाया गया। उस समय देश में लगभग 1100 शहरी सहकारी बैंक थे जिनकी जमाराशि तथा अग्रिम क्रमशः 167 करोड़ रुपये तथा 153 करोड़ रुपये थे। वर्ष 1996 के अंत

तक उनकी संख्या बढ़कर 1501 हो गई थी और उनकी जमा राशि का आधार एवं अग्रिम बढ़कर क्रमशः 24,161 करोड़ तथा 17,927 करोड़ रुपये हो गये थे। इस सेक्टर में वृद्धि का यह सिलसिला वर्ष 2003 तक चलता रहा जब शहरी सहकारी बैंकों की संख्या 1941 और उनकी जमाराशि एवं अग्रिम बढ़कर क्रमशः 1,06,546 करोड़ रुपये तथा 64,880 करोड़ रुपये हो गये थे। इसके बाद इस सेक्टर को एक जबरदस्त धक्का लगा जिससे इसके विकास की रफ्तार कम पड़ गयी। बैंकों की संख्या 2006 तक घटकर 1853 रह गई। लेकिन गौरतलब है कि इसके बावजूद इस सेक्टर ने अपनी जमाराशि तथा अग्रिम के स्तर की हिफाजत करते हुए अपनी कुल जमाराशि 1,12,237 करोड़ रुपये तथा कुल अग्रिम 70,379 करोड़ रुपये का स्तर बनाए रखा।

सारिणी

शहरी सहकारी बैंकों में वृद्धि

31 मार्च को समाप्त वर्ष	शहरी सहकारी बैंकों की संख्या	जमाराशि	वृद्धि प्रतिशत	अग्रिम	वृद्धि प्रतिशत
1996	1501	24161		17927	
1998	1502	40692	68.4	27807	55.1
2001	1618	80840	98.7	54389	95.6
2002	1854	93069	15.1	62060	14.1
2003	1941	101546	9.1	64880	4.5
2004	1926	110256	8.6	67930	4.7
2005	1872	105021	-4.7	66874	-1.6
2006	1853	112237	6.9	70379	5.2

दो बड़ी घटनाओं ने सहकारी बैंकिंग सेक्टर के प्रति लोगों के भरोसे को हिला कर रख दिया। इससे शहरी सहकारी बैंकों की हालत खराब हो गई। 30 जून 2004 तक 1919 बैंकों में से 732 शहरी सहकारी बैंकों की वित्तीय स्थिति गड़बड़ हो गई थी और उन्हें कमजोर एवं रुग्ण बैंकों के रूप में ग्रेड 3 एवं ग्रेड 4 में डाल दिया गया था। इस महत्वपूर्ण सेक्टर को नए सिरे से मजबूत बनाकर उसे आर्थिक रूप से कमजोर तबकों को ऋण देने में सक्षम बनाने के उद्देश्य से शहरी सहकारी बैंकों के वैधानिक, विनियामक तथा पर्यवेक्षी ढ़ांचे के समग्र पहलुओं की समीक्षा करने के बाद भारतीय रिज़र्व बैंक ने मार्च 2005 में शहरी सहकारी बैंकों के लिए 'विज़न डाक्यूमेंट' का प्रारूप बनाया। भारतीय रिज़र्व बैंक की वार्षिक नीति 2004-05 की मध्यावधि समीक्षा में 'विज़न डाक्यूमेंट' की घोषणा की गई थी।

इसी प्रकार ग्रामीण सहकारी ऋण संस्थाओं को मजबूत बनाने के इरादे से भारत सरकार ने अगस्त 2004 में प्रो. ए. वैद्यनाथन की अध्यक्षता में एक टास्क फोर्स का गठन किया था। इस टास्क फोर्स की जिम्मेदारी इन संस्थाओं में प्राण फूंकने के लिए व्यावहारिक कार्ययोजना प्रस्तुत करना था।

शहरी सहकारी बैंकों तथा ग्रामीण सहकारी ऋण संस्थाओं में किए गए इन दोनों प्रयोगों के बेहतर नतीजे सामने आए हैं। 'विज़न डाक्यूमेंट' की भावना के अनुरूप भारतीय रिज़र्व बैंक ने सहकारी बैंकों की बहुलता वाले राज्यों से श्रीगणेश करते हुए अभी तक 12 राज्य सरकारों के साथ समझौता ज्ञापन (MOU)पर हस्ताक्षर किए हैंः आंध्र प्रदेश (124 बैंक), गुजरात (296 बैंक), कर्नाटक (297 बैंक), मध्य प्रदेश (61 बैंक), उत्तराखंड (7 बैंक), राजस्थान (39 बैंक), छत्तीसगढ़ (14 बैंक), गोवा (6 बैंक),प. बंगाल(51), दिल्ली(15), महाराष्ट्र (617), हरियाणा (7)।

भारतीय रिज़र्व बैंक की पहल पर जिन राज्यों ने सबसे पहले समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर किए और उसके बाद टैफकब (TAFCUB) का गठन किया वहां सकारात्मक प्रभाव उजागर होने लगे हैं। मसलन, इन राज्यों में कमजोर एवं रुग्ण बैंकों की संख्या कम हुई है।

31 मार्च 2005 की स्थिति के अनुसार तीन टैफकब राज्यों में शहरी सहकारी बैंकों की ग्रेडवार तुलना

राज्य	बैंकों की संख्या ग्रेड 1	बैंकों की संख्या ग्रेड 2	बैंकों की संख्या ग्रेड 3	बैंकों की संख्या ग्रेड 4	कुल
आंध्र प्रदेश	48(44)	43(35)	18(31)	15(17)	124(127)
गुजरात	136(122)	50(53)	67(87)	43(46)	296(308)
कर्नाटक	90(80)	76(58)	85(118)	46(40)	297(296)

ठीक इसी प्रकार प्रो. वैद्यनाथन की अध्यक्षता में गठित कार्यदल की सिफारिशों के कार्यान्वयन से ग्रामीण सहकारी क्षेत्र में भी सुधार के संकेत मिलने लगे हैं। वर्ष 2004-05 के

दौरान इस क्षेत्र ने अच्छा व्यवसाय किया है। आर्थिक सुधारों के दौरान क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों तथा नाबार्ड को पूंजी प्रदान की गई। हालांकि प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र को ऋण बदस्तूर जारी रखा गया लेकिन नियंत्रित ब्याज दर की व्यवस्था समाप्त कर दी गई। इससे प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र में होने वाली कमी की भरपाई करने के लिए ग्रामीण आधारभूत संरचना विकास निधि (आरआईडीएफ) की स्थापना की गई जिससे नाबार्ड एवं राज्य सरकारों के संयुक्त प्रयास से कृषि क्षेत्र को बैंकिंग सुविधाएं सुनिश्चित की जा सके। इसी क्रम में एक विशेष कृषि ऋण योजना की शुरूआत की गई। ग्रामीण ऋण के क्षेत्र में किसान क्रेडिट कार्ड तथा बैंक-स्व-सहायता समूह संपर्क (बैंक एसएचजी लिंकेज) के रूप में दो नवोन्मेषी पहल की गई।

ग्रामीण ऋण के क्षेत्र में किसान क्रेडिट कार्ड तथा बैंक-स्व-सहायता समूह संपर्क (बैंक एसएचजी लिंकेज) के रूप में दो नवोन्मेषी पहल की गईं।

प्राथमिकता प्राप्त तथा कमजोर वर्ग को अग्रिम-क्षेत्रवार

(मार्च 2006 की स्थिति)

क्षेत्र	प्राथमिकता प्राप्त अग्रिम (करोड़ रुपये में)	प्रतिशत	कमजोर वर्ग अग्रिम (करोड़ रुपये में	प्रति-शत
कृषि तथा कृषि से	3007	4.3	1499	2.2
जुड़ी गतिविधियां				
कुटीर तथा लघु	9817	14.1	1042	1.5
औद्योगिक इकाइयां				
सड़क तथा जल परिवहन	1819	2.6	655	0.9
निजी फुटकर व्यापार	1850	2.7	876	1.3
आवश्यक वस्तुएं				
निजी फुटकर 1.2		3223	4.8	858
व्यापार (अन्य)				
लघु व्यवसायिक उद्यम	5456	7.8	1725	2.5
स्वरोज़गार	2165	3.1	864	1.2
शैक्षणिक ऋण	710	1.0	290	0.4
आवास ऋण	9056	13.0	2773	4.0
उपभोक्ता ऋण	456	0.7	173	0.2
सॉफ्टवेयर उद्योग	55	0.1	6	0.1
कुल	**37714**	**54.2**	**10762**	**15.5**

बैंक स्व-सहायता समूह संपर्क कार्यक्रम 1992 में प्रारंभ किया गया था। यह 500 स्व-सहायता समूहों को जोड़ने के लिए एक पायलट परियोजना थी। इस कार्यक्रम के तहत ग्रामीण क्षेत्रों के गरीब वर्गों को स्व-सहायता समूहों के रूप में संगठित करने, अपनी आर्थिक जरूरतों को पूरा करने के लिए खुद अपनी क्षमता विकसित करने और उसके बाद व्यावसायिक रूप से बैंक ऋण प्राप्त करने की परिकल्पना की गई थी। इससे ग्रामीण क्षेत्र के गरीब लोग उत्साहित होकर खुद-ब-खुद एकजुट होकर नियमित रूप से अल्प बचत करने के साथ-साथ आपस में छोटे-छोटे ऋण देने लगे। इन समूहों द्वारा बड़ी राशियां संभालकर इस्तेमाल करने की परिपक्व क्षमता हासिल करते ही उन्हें बैंक ऋण भी मिलने लगा। लघु वित्त का ज्यादातर लक्ष्य ही है गांवों के उन गरीब लोगों की वित्तीय जरूरतें पूरी करना जो बैंकिंग प्रणाली से वंचित हैं। इनमें छोटे एवं सीमांत किसान, भूमिहीन कृषि एवं गैर-कृषि मजदूर, कारीगर, शिल्पी तथा खोमचे एवं फेरीवाले गरीब ग्रामीण शामिल हैं।

वार्षिक नीति वक्तव्य 2005 में बैंक स्व-सहायता समूह संपर्क कार्यक्रम की प्रगति तथा उसके लक्ष्यों का उल्लेख करते हुए लघु वित्त आंदोलन को गति देने के लिए दो उपायों के संकेत दिए गए हैं। पहला, लघु वित्त गतिविधियों से जुड़े गैर-सरकारी संगठनों (एनजीओ) के लिए बाह्य वाणिज्यिक उधार (ईसीबी) और दूसरा, बैंकों को एजेंसी मॉडल की तर्ज़ पर ढालने के लिए तौर तरीके बनाए जा रहे हैं। तब वे ग्रामीण तथा कृषि क्षेत्र को ऋण प्रदान करने के लिए लोक समाज के संगठनों, ग्रामीण कियॉस्क तथा ग्रामीण ज्ञान केंद्रों की आधारभूत संरचना का उपयोग कर पायेंगे। साथ ही, लघु वित्त संस्थाओं को बैंकिंग क्षेत्र के प्रतिनिधि के रूप में नियुक्त करने का संकेत भी दिया गया है।

बैंक स्व-सहायता समूह संपर्क कार्यक्रम के विकास को तीन चरणों में बांटा जा सकता है:-1. पायलट परीक्षण(1992-1995), 2. बैंकिंग मुख्यधारा में शामिल करना (1996-1998) तथा 3. विस्तार (1998 और उससे आगे)। बैंकों से संबद्ध स्व-सहायता समूहों की कुल संख्या मार्च 1993 के अंत में 255 से बढ़कर मार्च 2005 के अंत तक 16.18 लाख हो गई। पुनः मार्च 2006 के अंत तक इसमें 6 लाख नए स्व-

सहायता समूह शुमार हो गए हैं। इस प्रकार अब यह संख्या 22.18 लाख के आसपास हो गई है। बैंकों द्वारा इन समूहों को वर्ष 2005-06 के दौरान 4,499 करोड़ रुपये का ऋण दिया गया जो पिछले साल के मुकाबले 50.3 प्रतिशत अधिक है। वर्ष 2004-05 के दौरान प्रति स्व-सहायता समूह बैंक ऋण 44,624 करोड़ रुपये से बढ़कर वर्ष 2005-06 के दौरान 50,915 करोड़ रुपये हो गया जो इन समूहों के बीच ऋण की पहुंच के गहराने का प्रमाण है। असल में इस कार्यक्रम को सबसे अधिक जागरूक समर्थन ग्रामीण महिलाओं से मिल रहा है। यह कार्यक्रम उनके लिए अब सिर्फ बचत और ऋण सुविधाओं का एक माध्यम न होकर उनके सामाजिक आर्थिक सशक्तिकरण का अवसर बन चुका है। गैर-सरकारी संगठन तथा दूसरी एजेंसियां जिस प्रकार सामुदायिक गतिविधियों का बीड़ा उठा रही हैं उससे धीरे-धीरे देश के तमाम हिस्सों में इस कार्यक्रम के महिला आंदोलन की शक्ल अख्तियार कर लेने की संभावना से इंकार नहीं किया जा सकता। लघु वित्त आंदोलन के कदम निरंतर आगे बढ़ते जा रहे हैं। इसकी उपलब्धि का अंदाज इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि मार्च 2005 तक बैंक स्व-सहायता समूहों के जरिए बैंकिंग सुविधाओं से लाभान्वित होने वाले गरीब परिवारों की कुल संख्या 2.43 करोड़ थी जो 31 मार्च 2006 तक बढ़कर 3.29 करोड़ हो गई थी। पिछले साल की तुलना में यह 35.4 प्रतिशत का इजाफा है।

सहकारी बैंकिंग क्षेत्र के लिए सुखद बात है कि वर्ष 2005-06 के दौरान स्व-सहायता समूहों को सहकारी बैंकों द्वारा दी जाने वाली वित्तीय सहायता में पिछले साल के मुकाबले 0.9 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गई है। मार्च 2005 के अंत तक सहकारी बैंकों द्वारा वित्तीय सहायता प्राप्त स्व-सहायता समूहों की संख्या 2,11,137 थी जिसमें भारी वृद्धि हुई है। यह संख्या मार्च 2006 के अंत तक बढ़कर 3,10,230 हो गई है। इससे भी जाहिर होता है कि सहकारी बैंकों की रूचि इस क्षेत्र में बढ़ी है। अलबत्ता इस मामले में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का प्रतिशत पिछले साल 34.8 प्रतिशत से घटकर 33.1 प्रतिशत हो गया।

> लघु वित्त संस्थाओं को बैंकों के साथ जोड़ने की दिशा में लगातार प्रयास चल रहे हैं। इन संस्थाओं को बैंकों से प्राप्त होने वाले वाणिज्यिक ऋण की गति तेज करने के लिए नाबार्ड ने वर्ष 2005-06 के दौरान एक योजना शुरू की थी जिसका लक्ष्य था- लघु वित्त संस्थाओं की रेटिंग के लिए बैंकों को वित्तीय सहायता प्रदान करना।

ऐतिहासिक रूप से देखा जाए तो दक्षिण भारत के राज्यों द्वारा किए गए सक्रिय प्रयासों के फलस्वरूप स्व-सहायता समूह वहां काफी अच्छी स्थिति में हैं। इसके विपरीत शेष भारत में इनका फैलाव निराशाजनक ही रहा। इस अंतर को मिटाने के लिए नाबार्ड ने बैंक स्व-सहायता समूह संपर्क से लघु वित्त प्रवाह को तीव्र करने के लिए प्राथमिकता के आधार पर 13 राज्यों को चुना है जहां देश की लगभग 70 प्रतिशत गरीब ग्रामीण जनता निवास करती है। ये राज्य हैं- उत्तर प्रदेश, उड़ीसा, पश्चिम बंगाल, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, गुजरात, राजस्थान, छत्तीसगढ़, झारखंड, बिहार, उत्तरांचल, असम तथा हिमाचल प्रदेश। इसके नतीजे उम्मीदों पर खरे उतरे हैं। इन लक्षित राज्यों में वर्ष 2005-06 के दौरान स्व-सहायता समूहों की संख्या में अच्छी खासी वृद्धि दर्ज की गई है- महाराष्ट्र (60,234) उड़ीसा(57,640), पश्चिम बंगाल (43,553), उत्तर प्रदेश(42,215), राजस्थान (38,165), असम (25,215), तथा छत्तीसगढ़ (12,722)। इस प्रकार वर्ष 2005-06 के दौरान अकेले इन 13 राज्यों के स्व-सहायता समूहों का प्रतिशत अखिल भारतीय स्तर के कुल 6,20,109 स्व-सहायता समूहों का 54.4 प्रतिशत रहा।

लघु वित्त संस्थाओं को बैंकों के साथ जोड़ने की दिशा में लगातार प्रयास चल रहे हैं। इन संस्थाओं को बैंकों से प्राप्त होने वाले वाणिज्यिक ऋण की गति तेज करने के लिए नाबार्ड ने वर्ष 2005-06 के दौरान एक योजना शुरू की थी जिसका लक्ष्य था- लघु वित्त संस्थाओं की रेटिंग के लिए बैंकों को वित्तीय सहायता प्रदान करना। इस योजना को थोड़ा उदार बनाकर उसका कार्यकाल 31 मार्च 2008 तक बढ़ा दिया गया है।

भारतीय रिज़र्व बैंक ने लघु वित्त तथा वित्तीय समावेशन के लक्ष्य को आगे बढ़ाने तथा ग्रामीण क्षेत्र को ऋण प्रदान करने की मौजूदा प्रक्रिया से जुड़े मुद्दों की समीक्षा करने के लिए ग्रामीण ऋण तथा लघु वित्त पर श्री एच. आर. खान की अध्यक्षता में

एक आंतरिक समूह गठित किया था। खान समिति ने 19 जुलाई 2005 को अपनी अंतिम रिपोर्ट पेश कर दी थी। इसकी सिफ़ारिशों के आधार पर तथा वित्तीय समावेशन की मुहिम को धार देने के लिए बैंकिंग सेक्टर के दायरे को ज्यादा से ज्यादा फैलाने के लक्ष्य को ध्यान में रखकर बैंकों को अनुमति दे दी गई कि वे ग्रामीण क्षेत्र को वित्तीय तथा बैंकिंग सुविधाएं प्रदान करने में गैर-सरकारी संगठनों/स्व-सहायता समूहों (एनजाओ,एचएसजी), लघु वित्त संस्थाओं (एमएफआई) तथा दूसरे लोक समाज संगठनों (सीएसओ) की सेवाएं मध्यस्थ के रूप में लें। उनकी यह भूमिका व्यवसाय सुविधाप्रदाता तथा व्यवसाय प्रतिनिधि मॉडलों से मेल खाती है।

ऊपर उल्लेख किया गया था कि लघु वित्त की गतिविधियां अब तक दक्षिण भारत में केंद्रित रही हैं। इसका कारण वहां एक विकसित बैंकिंग व्यवस्था और लोगों में उससे जुड़ने की जागरूक चेतना थी। वयस्क आबादी और बैंकिंग खातों के अनुपात को आधार बनाकर देखा जाए तो (31 मार्च 2004 तक उपलब्ध आंकडों के अनुसार) अखिल भारतीय स्तर पर यह अनुपात 59% था। लेकिन राज्यवार इस अनुपात में भारी अंतर देखा गया। एक तरफ केरल में यह अनुपात 89% था तो दूसरी तरफ बिहार में यह सिर्फ 33% था। उत्तर पूर्व के नागालैण्ड तथा मणिपुर क्रमशः केवल 21% तथा 27% अनुपात ही हासिल कर सके थे। इसी प्रकार हरियाणा, चंडीगढ़ तथा दिल्ली को मिलाकर उत्तरी क्षेत्र में यह अनुपात 84% रहा।

ग्रामीण ऋण से जुड़े जटिल सवालों का हल ग्रामीण बैंकिंग को सशक्त बनाकर ही निकाला जा सकता है। सरकार भी इस क्षेत्र को लेकर काफी गंभीर है। अभी दिसंबर 2006 में राष्ट्रीय विकास परिषद द्वारा अनुमोदित 11 वीं पंचवर्षीय योजना के दृष्टिकोण पत्र में भावी नीतियों की दिशा के संकेत दे दिए गए हैं। इस दस्तावेज़ से भावी नीति-निर्माण के जो संकेत उभरकर सामने आए हैं, उनकी बानगी देखिए:

(क) '11 वीं पंचवर्षीय योजना के सामने बड़ी चुनौती कृषि क्षेत्र की 2.0% वृद्धि दर को बढ़ाकर 1980 तथा 1996-97 के बीच दर्ज की गई 3.2% वृद्धि दर तक वापस ले जाने की है।'

(ख) 'कृषि क्षेत्र में इस रुझान की दिशा उलटी करने के लिए सुधारात्मक नीतियों को न केवल छोटे तथा सीमांत किसानों पर केंद्रित करना होगा जिन पर पहले से ही विशेष ध्यान दिया जा रहा है बल्कि मझोले एवं बड़े किसानों को भी इसके केंद्र में लाना होगा जिन्हें तमाम कठिनाइयों एवं अभावों के चलते उत्पादन में ठहराव की मार झेलनी पड़ती है।'

(ग) 'कृषि जीडीपी में वृद्धि की दर को 4% के आसपास लाने के लिए एक दूसरी हरित क्रांति की महती आवश्यकता है।'

शहरी सहकारी बैंकों की राज्यवार संख्या

क्रमांक	राज्य	बैंकों की संख्या
1.	महाराष्ट्र	630
2.	गुजरात	296
3.	कर्नाटक	297
4.	केरल	60
5.	आंध्र प्रदेश	124
6.	तमिलनाडु / पुडुचेरी	132
7.	उत्तर प्रदेश / उत्तराखंड	77
8.	राजस्थान	39
9.	मध्य प्रदेश / छत्तीसगढ़	75
10.	पश्चिम बंगाल	51
11.	नई दिल्ली	15
12.	उड़ीसा	14
13.	पंजाब /हरियाणा/ हिमाचल प्रदेश	16
14.	जम्मू तथा कश्मीर	4
15.	असम सहित उत्तर पूर्व राज्य	18
16.	बिहार / झारखंड	5
	कुल	1853

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकः स्थिति और सम्भावनाएं

◉ डॉ. रामप्रकाश सिंहल
पूर्व उप महा उपमहाप्रबंधक
भारतीय रिज़र्व बैंक

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक अधिनियम, 1976 के अंतर्गत केंद्र सरकार, संबंधित राज्य सरकार और प्रवर्तक बैंक द्वारा क्रमशः 50: 15: 35 के अनुपात में पूंजी के अंशदान के साथ क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का गठन किया गया। इनसे यह अपेक्षित था कि वे अपने-अपने राज्य के उस भाग में जहां उनका गठन हुआ है का समग्र विकास करेंगे और विशेषकर उस क्षेत्र में स्थानीय कृषि, लघु उद्योगों, कुटीर उद्योगों को बढ़ावा देने के लिए किसानों, शिल्पकारों, लघु उद्यमियों का स्थानीय आवश्यकता के अनुसार वित्त पोषण कर उनका जीवन स्तर ऊपर उठाने, उस क्षेत्र का आर्थिक विकास करने के माध्यम बनेंगे। उस क्षेत्र का विकास करने के लिए साधन जुटाना इनका मुख्य उद्देश्य निर्धारित किया गया। इस प्रकार स्थानीय कृषि, व्यापार, वाणिज्य, उद्योग और अन्य उत्पादक गतिविधियों के विकास हेतु लघु और सीमांत किसानों, कृषि-मजदूरों, सामाजिक और आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग के लोगों को उनकी जरूरतों के अनुसार, कम ब्याज पर बैंकिंग वित्त की सुविधा उपलब्ध कराकर उस क्षेत्र का और उस क्षेत्र में रहने वाले लोगों का समग्र विकास करने का सामाजिक दायित्व इनको सौंपा गया। जाहिर है यहाँ लाभ कमाना बैंकों का मुख्य उद्देश्य नहीं था। समाज के कमजोर और साधन-विहीन लोगों का पुनरुत्थान ही उनका मुख्य लक्ष्य बनाया गया ताकि वे ग्रामीण उद्योगों और कृषि के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकें और औद्योगिकीकरण की दौड़ में शहरों के मुकाबले पिछड़ गये ग्रामों को आर्थिक तौर पर साधन-सम्पन्न बना सकें।

इन बैंकों के गठन के पीछे उद्देश्य समाज के कमजोर तबकों को वित्तीय संसाधन उपलब्ध कराकर उनके जीवन स्तर, आर्थिक स्तर को ऊपर उठाना था। चूंकि यह तबका उनके लिए आय का साधन नहीं हो सकता था और जैसा कि शुरू-शुरू में उद्देश्य भी नहीं था, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक कुछ ही वर्षों में स्वयं अपनी आर्थिक आत्मनिर्भरता को गवां बैठे।

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की आर्थिक दृष्टि से कमजोर स्थिति

जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है इन बैंकों के गठन के पीछे उद्देश्य समाज के कमजोर तबकों को वित्तीय संसाधन उपलब्ध कराकर उनके जीवन स्तर, आर्थिक स्तर को ऊपर उठाना था। चूंकि यह तबका उनके लिए आय का साधन नहीं हो सकता था और जैसा कि शुरू-शुरू में उद्देश्य भी नहीं था, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक कुछ ही वर्षों में स्वयं अपनी आर्थिक आत्मनिर्भरता को गवां बैठे।

अपने पहले दशक के परिचालन के दौरान क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का ध्यान ऋण सेवाओं को बढ़ाने पर केंद्रित रहा। अतः 1987 तक उनका ऋण जमा अनुपात जो लगभग 100 प्रतिशत पर बना हुआ था, अगले दशक में गिर गया। इसके अनेक कारण रहे, जैसे-

- कारोबारी संव्यवहारों की अनमनीयता, जिसमें परिवर्तन या संशोधन की कोई गुंजाइश नहीं थी,
- ऋणों के छोटे आकार का होने के कारण उनकी लागत में वृद्धि तथा प्रतिभूतियों का अभाव होने के कारण जोखिमों की बहुलता,
- निर्धारित उद्देश्य और उसको ही अपनाने की बाध्यता के कारण एक ही प्रकार के ऋणों का अत्यधिक एक्सपोज़र का होना,
- वित्तीय नियोजन में व्यावसायिक दक्षता का अभाव,
- लक्ष्यबद्ध समूहों को ही ऋण देने की बाध्यता,
- लाभदायक क्षेत्रों में निवेश की अनुमति का न होना,
- मानव संसाधनों के विकास का न होना,
- लक्षित समूहों ने ऋणों को अनुदान मान लिया अतः लौटाने की चिंता या बाध्यता के अभाव में अधिकांश ऋण गैर-निष्पादक हो गये,
- जोखिम प्रबंध तकनीकी का अभाव,

- लाभप्रदता के प्रति जागरुकता का अभाव,
- जमा और उधार की पहले से निर्दिष्ट निम्न दरें,
- व्यावसायिक प्रबंध तंत्र का अभाव,
- सामाजिक दायित्व के संदर्भ में व्यावसायिक पहलू पर सरकार रिज़र्व बैंक तथा राज्य सरकारों की उदासीनता। अतः प्रवर्तक बैंकों की बाध्यता उनकी कमजोरी बन गयी,
- लाभ प्रदता लाने के लिए समन्वित प्रयासों का अभाव,
- विकास कार्यक्रम क्षेत्रीय दृष्टिकोण से बनाये गये। अतः उच्च प्रबंध तंत्र में उसकी विशेषज्ञता की कमी रही,
- क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के वित्त पोषण को सरकारी बाध्यता तथा ऊपरी दबाव के चलते उनका लक्ष्य कितने लोगों को कितना उधार दिया गया यही मानदंड बनाया गया, दिये गये ऋण की वापसी तथा उस पर मिलने वाले प्रतिलाभ को नहीं। अतः बैंक भी इस ओर से उदासीन रहे।

इन सबके चलते क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों को 1995-96 में 420 करोड़ रुपए की हानि उठानी पड़ी।

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का विलयन और समामेलन

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की परिचालनगत क्षमता बढ़ाने, प्रचुरताजन्य लागत में मितव्ययिता लाने तथा विभिन्न हिताधिकारियों के विचारों को ध्यान में रखते हुए कुछ क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के समामेलन किये जाने की सिफारिश की गयी। विशेषकर ऐसा करने से जहाँ इन बैंकों के परिचालन का क्षेत्र व्यापक होगा और विलयन की प्रक्रिया से कुछ कमजोर क्षेत्रीय बैंकों को मज़बूत बनाने में मदद मिलेगी। अतः क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का दो चरणों में पुनर्गठन करने का सुझाव दिया गया।

- किसी राज्य में उसी प्रवर्तक बैंक के क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के बीच विलय।
- किसी राज्य में विभिन्न बैंकों द्वारा प्रवर्तित क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का एक बैंक में विलय।

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की उनके प्रवर्तक बैंकों के साथ विलय की मांग भी समय-समय पर उठती रही है, विशेषकर क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के कार्मिकों द्वारा, परंतु इसका कोई प्रावधान आर.आर.बी. अधिनियम, 1976 में न होने तथा प्रवर्तक बैंकों और केंद्र सरकार और रिज़र्व बैंक का इसे समर्थन न मिल पाने के कारण इसे माना नहीं गया। साथ ही प्रवर्तक बैंक में विलय करने से क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक के गठन का मूल उद्देश्य ही असफल हो जायेगा और साथ ही कमजोर वर्ग और ग्रामीण क्षेत्रों में ऋणों की आवश्यकता और उनकी पूर्ति में हासिल दक्षता और अनुभव भी उधर से निकल जायेगा। अतः यह सिफारिश भी मान्य नहीं की गयी। शिखर स्तर पर एक राष्ट्रीय क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक गठित किये जाने की सिफारिश भी अनेक बार की गयी परंतु उसे भी खास समर्थन नहीं मिल पाया।

आर्थिक क्षेत्र के सुधार और खासकर बैंकिंग क्षेत्र के सुधार (नरसिंहम समिति-2) के लागू होने के बाद क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की शाखाओं में कोई वृद्धि नहीं हुई लेकिन कुछ बैंक शाखाओं का विलयन और समामेलन करके उनकी वित्तीय कार्य-निष्पादनता में सुधार लाने के प्रयास अवश्य किये गये हैं।

फिर भी भारत सरकार ने क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की कमियों को दूर कर उन्हें सक्षम और लाभप्रद इकाई के रूप में परिवर्तित करने के उद्देश्य से राज्य स्तर पर प्रवर्तक बैंक-वार क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के समामेलन की प्रक्रिया 12 सितंबर 2005 को जारी अधिसूचना के साथ शुरू की, जब 9 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का समामेलन किया गया।

18 अक्तूबर 2006 तक कुल 63 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों को समामेलित किया गया जो 15 राज्यों में 18 बैंकों द्वारा प्रायोजित किये गये। इससे भारत में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की कुल संख्या 196 से घटकर 133 रह गयी।

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का वित्तीय कार्य-निष्पादन

समामेलन के कारण क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की संख्या 196 से घटकर 133 रह जाने के पश्चात उनका समेकित तुलनपत्र 15.1 प्रतिशत बढ़ा, आस्तियां 2005-06 के दौरान उनके निवल अग्रिम 21.1 प्रतिशत और उधार 32.2 प्रतिशत तथा कुल जमा राशि 14.4 प्रतिशत बढ़ी।

समामेलन के बाद लाभ कमाने वाले और हानि उठाने वाले क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की संख्या मार्च 2005 के अंत में क्रमशः 166 और 30 से गिरकर मार्च 2006 के अंत में क्रमशः 111 और 22 रह गयी, जबकि सकल और निवल एनपीए क्रमशः 7.3 प्रतिशत तथा 4 प्रतिशत रह गयी जो कि वसूली में लगभग 80 प्रतिशत सुधार का परिणाम था।

मार्च 2006 के अंत में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के बकाया अग्रिम 39,713 करोड़ रुपए के हो गये जिसमें से प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र का हिस्सा 81.8 प्रतिशत बैठता है। कृषि ऋणों का हिस्सा मार्च 2005 के अंत में 50.8 से बढ़कर मार्च 2006 के अंत में 54.0 हो गया, जबकि इसी अवधि में गैर-कृषि ऋण का हिस्सा 49.2 प्रतिशत से गिरकर 46.0 प्रतिशत रह गया।

सहकारी ऋण संरचना का अधिकांश भाग बहुस्तरीय न्यून पूंजीकृत, अधिक स्टाफ वाला और न्यून दक्षता प्राप्त है और जो अक्सर उच्च गैर-निष्पादक आस्तियों से बोझिल है, जबकि कुछ मामलों में तो उन्होंने सार्वजनिक जमा राशियों को भी गंवा दिया है।

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की भावी संभावनाएं

नीतिगत पहलों तथा बदलते कारोबारी वातावरण में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की भूमिका तथा वित्तीय कार्यनिष्पादन बढ़ाये जाने की जरूरत है। परंतु आज उनकी कार्यप्रणाली और कार्यनिष्पादन में कुछ खामियां घर कर गयी हैं। अतः उनकी प्रासंगिकता पर अनेक प्रश्न उठते रहे हैं जैसेः-

- क्या क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक आज के संदर्भ में भी प्रासंगिक और अनिवार्य हैं?
- क्या वे समय की बदलती जरूरतों और तकनीकी उन्नयन के युग में अपनी दक्षता और कुशलता बनाये रख सकते हैं?
- क्या क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक अपने प्रतिस्पर्धी वाणिज्यिक बैंकों की ग्रामीण शाखाओं से प्रतिस्पर्धी बने रह सकते हैं?
- क्या वे समय के अनुसार बढ़ती हुई मानव संसाधनों और आर्थिक संसाधनों की आवश्यताओं की पूर्ति कर सकते हैं?
- क्या वे अपने सीमित संसाधनों और बहु नियंत्रण प्रणाली के चलते अपनी संचालन कुशलता में समय की मांग के अनुसार सुधार ला सकते हैं?
- क्या वे वित्तीय रूप से साधन-सम्पन्न और मितव्ययी बन सकते हैं?
- उनके कार्य-निष्पादन में सुधार लाकर उन्हें अर्थक्षम बनाया जा सकता है?

इस दृष्टि से देखें तो क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का भविष्य सुखद नज़र नहीं आता है, परंतु वे भारतीय ग्रामीण एवं कृषि ऋण एवं वित्त पोषण की अभी भी अपरिहार्य आवश्यकता बने हुए हैं। अतः हम उन्हें व्यवस्था से हटा तो नहीं सकते परंतु उनका पुनरुद्धार कर सकते हैं। भारतीय रिज़र्व बैंक के गवर्नर डॉ. वाई. वी. रेड्डी के शब्दों में कहें तो 'ग्रामीण ऋण की उपलब्धता की अपर्याप्तता, तथा समय पर उपलब्धता में बाधाएं, उच्च लागत, छोटे और सीमान्त किसानों की उपेक्षा, अनेक राज्यों में ऋण जमा अनुपात अभी भी कम तथा अनौपचारिक बाज़ारों की उपस्थिति अभी भी बनी हुई है। जहाँ वाणिज्यिक बैंक अपनी दक्षता और लाभप्रदता को सुधारने के लिए प्रतिबद्ध होकर प्रयत्न कर रहे हैं, साथ ही वे ग्रामीण ऋण को कम प्राथमिकता दे रहे हैं, वहीं क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक और सहकारी बैंक बेहतर कंपनी संचालन तथा परिचालनगत दक्षता में गंभीर समस्याओं से जूझ रहे हैं।'

यह तर्क दिया जाता है कि सहकारी ऋण संरचना का अधिकांश भाग बहुस्तरीय न्यून पूंजीकृत, अधिक स्टाफ वाला और न्यून दक्षता प्राप्त है और जो अक्सर उच्च गैर-निष्पादक आस्तियों से बोझिल है, जबकि कुछ मामलों में तो उन्होंने सार्वजनिक जमा राशियों को भी गंवा दिया है। अधिकांश क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों में से अनेक इन समस्याओं से जूझ रहे हैं। हालांकि कुछ क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक आज भी सशक्त और अर्थक्षम और सुदृढ़ हैं। ये समस्याएं भली भांति पहचानी और रिकार्डबद्ध हैं तथा इनसे निपटने के लिए अनेक उपाय भी किये गये हैं। तथापि इस प्रकार की अनेक कार्रवाइयों के किये जाने के बावजूद भी ग्रामीण ऋण के संबंध में समग्र स्थिति अभी भी

असंतोषजनक बनी हुई है। यह चिंता का विषय है कि ऐसे समय में कुछ संज्ञेय सफलता नीति निर्माताओं को भ्रम में डाल रही है, जबकि बढ़ता हुआ व्यावसायीकरण कृषि के लिए संस्थागत ऋण पर बहुत बड़े जोर दिये जाने की मांग करता है। अतः बौद्धिक रूप से इस बात की अधिकाधिक मान्यता बढ़ती जा रही है कि कृषि को ऋण प्रवाह बढ़ाने के लिए तत्काल उपाय किये जाने की जरूरत है, साथ ही ग्रामीण ऋण की नीतियों की व्यापक और बारीकी से समीक्षा किये जाने की जरूरत है। और इस प्रक्रिया में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के कार्यों, कार्यपद्धतियों, उद्देश्यों, पूंजी-पर्याप्तता तथा संचालन-तंत्र, उनकी मानव संसाधन विकास और प्रौद्योगिकीय उन्नयन को सुधारने की भी जरूरत होगी।

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के सुधार के उपाय

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों को मजबूत और उसके निष्पादन में सुधार लाने के लिए कुछ उपाय किये गये हैं :-

- क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों को लक्ष्येतर समूह को भी लाभप्रदता के आधार पर उधार देने की अनुमति दी गयी,
- उन्हें अपनी उधार और जमा दरों में संशोधन करने की अनुमति दी गयी,
- उन्हें अपनी अधिशेष निधियों को लाभदायक क्षेत्रों में निवेश करने की अनुमति दी गयी,
- शाखाओं द्वारा बनायी गयी सुनिश्चित कारोबारी योजनाओं के अनुपालन और अनुप्रवर्तन की निगरानी का कार्य नाबार्ड को सौंपा गया,
- लाभप्रदता प्राप्त करने के लिए समय-बद्ध योजनाएं बनायी गयीं,
- मानव संसाधन विकास कार्यक्रम चलाये गये,
- सुधार के लिए समन्वित प्रयास किये गये और संगठनात्मक विकास को महत्व दिया गया।

वर्तमान में ग्रामीण ऋण का प्रवाह बढ़ाने के लिए रिज़र्व बैंक ने भी कुछ कदम उठाये हैं जैसेः-

- ग्रामीण ऋण के प्रयोजनों और उद्देश्यों में वृद्धि की गयी है और उनमें भंडारण, गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियों के माध्यम से दिये जाने वाले ऋणों को भी शामिल किया गया है।
- प्रक्रियागत और अंतरणगत अवरोधों को समाप्त किया जा रहा है। सेवा क्षेत्र दृष्टिकोण को समाप्त किया जा रहा है, मार्जिनों को कम किया जा रहा है, अतिदेयों (Overdues) की परिभाषा में इस प्रकार के सुधार किये जा रहे हैं कि वे फसलों के बोने और पकने अर्थात् फसलों के आने के समय से मेल खायें, नयी ऋण पुनर्संरचना संबंधी नीतियां लागू की जा रही हैं, गैर-संस्थागत ऋणों में फंसे कर्जदार किसानों के लिए एकबारगी निपटान प्रक्रिया अपनायी जा रही है।
- किसान क्रेडिट कार्ड योजना में सुधार लाकर इसे और व्यापक बनाया जा रहा है। ताकि इसकी पहुंच को व्यापक तथा इसके प्रयोजनों को और विस्तृत बनाया जा सके। जहाँ कुछ बैंक सामान्य क्रेडिट कार्ड योजना को लोकप्रिय बना रहे हैं, जो कि खपत के साथ-साथ बहु-उद्देश्यीय उपयोग के लिए गैर-जमानती ओवरड्राफ्ट के स्वरूप की है।
- सार्वजनिक और निजी क्षेत्र के बैंकों को भी क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की सहायता करने के लिए उन्हें वित्तीय समर्थन देने को कहा गया है ताकि वे प्राथमिकता-प्राप्त क्षेत्र को दिये जाने वाले उधार के लक्ष्य तक पहुंचने में जो कमी रह गयी है, उतनी राशि वो नाबार्ड को या क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों को दे सकें।
- बैंकों से कहा गया है कि वे ऋण जोखिम का आंकलन व्यष्टि वित्त या अलग-अलग ऋण कर्ता के आधार पर करें, समग्रतः सभी पर समान रूप से नहीं। ताकि उनसे वसूल की जानेवाली ब्याज दर यथोचित और न्यूनतम हो।

सरकार ने भी 2004-05 की बजट घोषणा में कृषि ऋण को अगले तीन वर्षों में दोगुना करने की घोषणा की थी जिसमें ग्रामीण वित्त की मात्रा को बढ़ाने के साथ-साथ उसके प्रयोजनों, क्षेत्रों में विशाखीकरण लाना तथा क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों को सशक्त,आर्थिक रूप से पुनः पूंजीकृत कर उन्हें सशक्त बनाना भी शामिल था। परंतु यदि क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों को अर्थक्षम

ग्रामीण वित्त संस्थाओं के रूप में सफल होना है तो उनकी संरचना, उनके कार्यों, कार्यपद्धतियों, कर्मचारियों की मनोवृत्ति और रवैये में परिवर्तन लाना होगा।

इन सुधारों के फलस्वरूप, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की स्थिति ने कुछ सुधार दर्शाने शुरू किये हैं। जैसे :

- 2000-01 में ऋण जमा अनुपात 41.3 प्रतिशत था जो 2005-06 में सुधर कर 55.7 प्रतिशत हो गया।
- अग्रिमों से आय का हिस्सा 2000-01 के 34.7 प्रतिशत से बढ़कर 2005-06 में 53.8 प्रतिशत हो गया।
- 2003-04 के दौरान निवल लाभ बढ़कर 769 करोड़ रुपए हो गया जो 2005-06 में मार्जिन की कमी और बकायों के भुगतान के कारण गिरकर 510 करोड़ रुपए रह गया। फिर भी क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की समग्र स्थिति में इन वर्षों के दौरान काफी सुधार हुआ है। प्रतिशाखा और प्रतिकर्मचारी के हिसाब से क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की उत्पादकता में गत 10 वर्षों के दौरान पर्याप्त सुधार हुआ है।

इसका परिणाम यह हुआ कि अग्रिमों से आय का हिस्सा 2000-01 के 34.7 प्रतिशत से बढ़कर 2005-06 में 53.8 प्रतिशत हो गया। इसके विपरीत निवेश से आय के हिस्से में 2000-01 के 60.5 प्रतिशत की तुलना में गिरकर 2005-06 में 39.5 प्रतिशत रह गया।

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के सुधार की भावी कार्य योजना इस प्रकार है-

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों और ग्रामीण सहकारी ऋण संस्थाओं, जो भविष्य में ग्रामीण ऋण की पहुँच बढ़ाने के लिए महत्वपूर्ण माध्यम हैं, के कम्पनी संचालन, विनियमन और उनकी कार्यप्रणाली के संबंध में कानूनी और संस्थागत दृष्टि से परिवर्तन किये जाने की जरूरत है। इस संबंध में वाणिज्यिक बैंकों की प्रतिस्पर्धात्मकता तथा शेयर धारकों के प्रति जबाबदेही, जो वाणिज्यिक बैंकों की कंपनी संचालनात्मकता को प्रेरित करती है, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों और ग्रामीण सहकारी बैंकों में भी लाये जाने की जरूरत है। ये परिवर्तन इस बात की अपेक्षा करते हैं कि ये बैक भी वाणिज्यिक प्रतिलाभ के प्रति जागरूक बनें, साथ ही वे अपनी राज्य सरकारों की गहरी वचनबद्धता को भी अपने अंदर आत्मसात करें। अतः इस बात की तत्काल आवश्यकता है कि ये बैंक भी अपनी ऋण सुपुर्दगी प्रणाली, उसके प्रक्रिया-तंत्र, उसकी लागत तथा उसकी लाभप्रदता में सुधार लायें इसके लिए कानूनी, वैधानिक और प्रशासनिक दृष्टि से सुधार किये जायें।

गैर-निष्पादक ऋणों और पूंजी के क्षरण की जो तलवारें लम्बे समय से इन बैंकों के ऊपर लटकती आ रही हैं, उनका निदान किये जाने की जरूरत है। इनमें पुनर्पूंजीकरण करके तथा एक बारगी निपटान प्रक्रिया अपनाकर इनकी स्थिति में सुधार लाया जा सकता है जैसा कि कई कमजोर वाणिज्यिक बैंकों के मामलों में किया गया।

गैर-निष्पादक ऋणों और पूंजी के क्षरण की जो तलवारें लम्बे समय से इन बैंकों के ऊपर लटकती आ रही हैं, उनका निदान किये जाने की जरूरत है। इनमें पुनर्पूंजीकरण करके तथा एक बारगी निपटान प्रक्रिया अपनाकर इनकी स्थिति में सुधार लाया जा सकता है जैसा कि कई कमजोर वाणिज्यिक बैंकों के मामलों में किया गया।

साथ ही जो बैंक ऋण शोधन में सक्षम नहीं हैं उन्हें और जारी रखकर जनता की जमाराशियों को स्वीकार करते रहने की अनुमति देने में कोई औचित्य नहीं है। अतः विलयन या समामेलन द्वारा उनकी पुनर्संरचना करते हुए उनका पुनर्पूंजीकरण किया जा सकता है। साथ ही इस पुनर्पूंजीकरण में पूर्ण पारदर्शिता रखी जानी चाहिए। उसमें लम्बायन मुद्दों और पूंजी की पर्याप्तता संबंधी सभी पहलुओं पर पड़ने वाली लागत को ध्यान में रखते हुए उनके तत्काल पुनर्पूंजीकरण की आवश्यकता है और उसका कोई विकल्प भी नहीं है। इसमें और देर करने से यह और भी खर्चीला हो सकता है। यदि केंद्र और संबंधित राज्य सरकारें इनके पुनर्विन्यास और पुनर्पूंजीकरण पर योगदान करें तो ये बैंक मध्यावधि में जाकर अर्थ सक्षम बन सकते हैं।

ग्रामीण वित्त पोषण को कम खर्चीला, पारदर्शी और त्वरित, सम सामयिक बनाने की जरूरत है।

जोखिम प्रबंधन को फसली समय से जोड़ने की जरूरत है। फसलों तथा ऋणों का बीमाकरण करना होगा। बीजों, गोदामों, कीटनाशकों, बिजली पानी की आपूर्ति में सुधार करना

होगा। मानसून, अकाल, अतिवृष्टि आदि प्राकृतिक आपदाओं से किसानों का फसली बीमा पशुओं का बीमा आदि उपाय बढ़ाने होंगे।

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की वर्तमान स्थिति में सुधार के लिए नरसिंहम समिति -2 ने भी कुछ सिफारिशें की हैं, जिनमें प्रमुख हैं:-

- समिति पुरजोर सिफारिश करती है कि ऋण संस्कृति पर गम्भीर और ह्रासात्मक प्रभाव होने के कारण ऋण-माफी का रास्ता न अपनाया जाए
- इन बैंकों की दक्षता में सुधार लाने तथा लचीलापन प्रदान करने के उपाय के रूप में प्राथमिकता - प्राप्त क्षेत्र में भी ऋण के प्रतिभूतिकरण की संकल्पना पर विचार किया जाए।
- समिति ने अगले पांच वर्षों में (1998 से लेकर) क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों और सहकारी बैंकों को अपनी जोखिम भारित आस्तियों के प्रति 8 प्रतिशत की न्यूनतम पूंजी का स्तर प्राप्त करने की सिफारिश की थी। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की पूंजी संरचना की समीक्षा की जानी चाहिए ताकि उनके सार्वजनिक अभिदान में वृद्धि की जा सके तथा उनके परिचालनों पर प्रायोजक बैंक को अधिक स्वामित्व और उत्तरदायित्व मिल सके। इसमें सरकार का अभिदान और न बढ़ाकर सदस्यों का अभिदान बढ़ाया जाए। ऋण की लागत को कम करने के लिए उनमें बीच या मध्यस्थक लेयरों (माध्यमों) को कम किया जाए ताकि नाबार्ड के सस्ते ऋण का लाभ अंतिम उधार दाता को मिल सके।
- ग्रामीण वित्तीय संस्थाओं के पर्यवेक्षण का प्रभार नाबार्ड को दिया गया है। फिलहाल यह व्यवस्था चालू रह सकती है, परंतु कुछ अंतराल के बाद ग्रामीण ऋण संस्थाओं से संबंधित सभी विनियमन और पर्यवेक्षण के कार्य वित्तीय विनियमन और पर्यवेक्षण बोर्ड को सौंप दिये जाएं।
- ग्रामीण वित्तीय संस्थाओं पर राज्य सरकारों और नाबार्ड / भारतीय रिज़र्व बैंक का दोहरा नियंत्रण समाप्त किया जाए तथा सभी सहकारी बैंकिंग संस्थाओं, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों को भी बैंककारी विनियमन अधिनियम के अंतर्गत भारतीय रिज़र्व बैंक / नाबार्ड / वित्तीय पर्यवेक्षण बोर्ड के अंतर्गत लाया जाए।
- बैंकिंग नीति ऐसी बनायी जाए जो स्थानीय स्थलीय बैंकों सहित व्यष्टि वित्त संस्थाओं के विकास और वृद्धि करने में सहायक हों जो कृषि, लघु और टिनी उद्योगों पर तथा गरीबों की बैंकिंग जरूरतों को पूरा करने के लिए गैर-सरकारी संगठनों द्वारा प्रवर्तित विशिष्ट संस्थाओं पर ध्यान केंद्रित कर सकें।
- ऐसे क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों को, जो अर्थसक्षम हैं या भविष्य में हो सकने की सम्भावना रखते हैं, अपने वर्तमान रूप में कार्य करने की अनुमति देनी चाहिए, तथापि उसी बैंक द्वारा उसी राज्य में प्रायोजित क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का समामेलन करने पर विचार किया जाए। इससे उन्हें प्रचुरता जन्य मितव्ययिता तथा मानव संसाधनों का इष्टतम उपयोग करने का अवसर मिलेगा।

> जोखिम प्रबंधन को फसली समय से जोड़ने की जरूरत है। फसलों तथा ऋणों का बीमाकरण करना होगा। बीजों, गोदामों, कीटनाशकों, बिजली पानी की आपूर्ति में सुधार करना होगा। मानसून, अकाल, अतिवृष्टि आदि प्राकृतिक आपदाओं से किसानों का फसली बीमा पशुओं का बीमा आदि उपाय बढ़ाने होंगे।

इस प्रकार हम पाते हैं कि क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक भारत की कृषि, लघु उद्योग, ग्रामीण शिल्प हस्तकला आदि को ऊपर उठाने, उनका विकास करने के लिए वित्त-पोषण का अनिवार्य साधन हैं। समय के साथ उस प्रणाली में आयी खामियों को दूर करके उन्हें वित्तीय रूप से सक्षम तथा भारत के ग्रामीण समाज के पुनरुत्थान का एक सबल और ऊर्जस्वित माध्यम बनाया जा सकता है। ताकि भारत की 80 प्रतिशत जनता भी, जो ग्रामों में निवास करती है, औद्योगिक उन्नति के साथ कदम से कदम मिलाकर विकास कर सके और देश की सर्वांगीण प्रगति में बराबर की भूमिका अदा कर सके।

◆

वित्तीय समावेशन और ग्रामीण विकास

◉ डॉ. रमाकान्त शर्मा
महाप्रबंधक,
भारतीय रिज़र्व बैंक, मुंबई

विश्व बैंक की ताजा रिपोर्ट 'एंडिंग पावर्टी इन साउथ एशिया' में दिये गये आंकड़ों (2003-04) के अनुसार दक्षिण एशिया में सबसे ज्यादा गरीब भारत में रहते हैं। तमाम प्रयासों के बावजूद गरीबी उन्मूलन के मामले में भारत की गति काफी धीमी है। जबकि बांग्लादेश, पाकिस्तान और श्रीलंका गरीबी कम करने के मामले में भारत से आगे निकल चुके हैं। इस रिपोर्ट के अनुसार भारत में कुल आबादी के लगभग 28.6 प्रतिशत लोग गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन कर रहे हैं। यह संख्या आबादी के हिसाब से 24 करोड़ से अधिक बैठती है। ये वे लोग हैं जिन्हें दो वक्त की रोटी भी मिलना दुश्वर है और वे बुनियादी सुविधाओं से पूरी तरह से वंचित हैं। इसकी तुलना में श्रीलंका, बांग्लादेश, पाकिस्तान और नेपाल में गरीबी रेखा से नीचे रहने वालों का प्रतिशत क्रमशः 25,40.8,32.6 और 33.5 है। लेकिन तथ्य यह है कि इन देशों की जनसंख्या हमारे देश से काफी कम है। ऐसे में संख्या के हिसाब से यह सही है कि दक्षिण एशियाई देशों में सबसे ज्यादा गरीब भारत में रहते हैं।

इसे देखते हुए यह आवश्यक ही नहीं बल्कि अनिवार्य है कि ग्रामीण क्षेत्र में विकास की गति को बढ़ाया जाए और यह देखा जाए कि विकास की गति बढ़ने के साथ-साथ गांवों में रोज़गार के अवसर भी सृजित हों।

उक्त रिपोर्ट में भारत में गरीबी बढ़ने के प्रमुख कारणों में कृषि क्षेत्र का सही विकास न होना बताया गया है। इसके अनुसार 1990 में निर्माण व सेवा क्षेत्र की विकास दर जितनी थी, वह बढ़कर चौगुनी हो गई, पर कृषि क्षेत्र की विकास दर बढ़ना तो दूर, उल्टे दो प्रतिशत पर आ गई जबकि कुल आबादी के करीब 45 प्रतिशत लोग अब भी कृषि पर निर्भर हैं। इसके परिणामस्वरूप, ग्रामीण क्षेत्र में गरीबी, बेरोज़गारी और भुखमरी जैसी समस्याएं बढ़ी हैं। इसे देखते हुए यह आवश्यक ही नहीं बल्कि अनिवार्य है कि ग्रामीण क्षेत्र में विकास की गति को बढ़ाया जाए और यह देखा जाए कि विकास की गति बढ़ने के साथ-साथ गांवों में रोज़गार के अवसर भी सृजित हों।

ग्रामीण क्षेत्र में विकास का लक्ष्य प्राप्त करने के लिए जहां सरकार के स्तर पर किए जा रहे/किये जाने वाले प्रयासों का प्रमुख स्थान हैं, वहीं इसके लिए बैंकिंग क्षेत्र को भी महत्वपूर्ण भूमिका निभानी है क्योंकि ग्रामीण कारीगरों, व्यापारियों, किसानों और छोटा-मोटा काम करने वालों को ऋण सुविधाएं उपलब्ध करा कर ही ग्रामीण बेरोज़गारी, गरीबी और भुखमरी जैसी समस्याओं का सामना किया जा सकता है तथा उन्हें साहूकारों और महाजनों के जाल से बाहर निकाला जा सकता है। इसके अलावा गावों में आधारभूत सुविधाएं उपलब्ध कराने में भी बैंक ऋण का महत्वपूर्ण योगदान हो सकता है।

बैंकिंग से संबंधित आंकड़े यह बताते हैं कि गांवों के विकास में बैंकों को अपनी उपर्युक्त भूमिका को कारगर ढंग से निभाने के लिए अपनी कार्यनीति में बदलाव लाना बहुत जरूरी है। इन आंकड़ों से जो तथ्य उभर कर सामने आते हैं, वे बहुत उत्साहवर्धक नहीं हैं। वर्ष 2005 में हर 16650 ग्रामीण आबादी के लिए सिर्फ एक बैंक शाखा मौजूद थी जबकि शहरी क्षेत्रों में 13,619 व्यक्तियों पर एक शाखा थी। इसी प्रकार ग्रामीण क्षेत्र में एक हजार व्यक्तियों पर केवल 185 जमा खाते हैं, जबकि शहरों में प्रति हजार आबादी पर 413 जमा खाते हैं। चूंकि देश की लगभग 70 प्रतिशत जनसंख्या गांवों में निवास करती है, इस लिहाज से गांवों की अधिकांश आबादी के पास बैंक सेवा नहीं पहुंच पाई है। इस स्थिति में सुधार लाने के लिए भारतीय रिज़र्व बैंक ने हाल ही में कई ठोस कदम उठाए हैं जिनमें वित्तीय समावेशन को लागू करना बहुत महत्व रखता है।

क्या है वित्तीय समावेशन

सरलतम शब्दों में कहें तो वित्तीय समावेशन ऐसे लोगों को बैंकिंग सेवाओं के दायरे में लाना है, जो अभी तक बैंकिंग सेवाओं से वंचित हैं। दूसरे शब्दों में, सामान्य आदमी तक

बैंकिंग सेवाएं पहुंचाना ही वित्तीय समावेशन है। वित्तीय समावेशन (Financial Inclusion) के विलोम के रूप में वित्तीय वंचन (Financial exclusion) शब्द का प्रयोग किया जाता है, जिसका तात्पर्य ऐसे लोगों से है जो वित्तीय या बैंकिंग सेवाओं तक पहुंच नहीं रखते। हमारे देश में वित्तीय समावेशन की जो अवधारणा है, उसमें शामिल हैं:-

1. कम आय वाले और समाज के कमजोर वर्गों को बैंकिंग सेवाओं के दायरे में लाना
2. उन्हें ये सेवाएं कम लागत पर उपलब्ध कराना ताकि वे इन सेवाओं की ओर आकर्षित हो सकें और लागत वहन कर सकें।
3. सभी लोगों को बिना किसी भेदभाव के बैंकिंग सेवाएं उपलब्ध कराना।

इस प्रकार, यदि देखा जाए तो वित्तीय समावेशन के जरिये समाज के एक बड़े वर्ग को बैंकिंग की आधारभूत सेवाएं उपलब्ध कराने का लक्ष्य सामने रखा गया है। फिलहाल, यह अपेक्षा की गई है कि देश के सभी वयस्क व्यक्तियों का बैंक में कम-से-कम एक बचत खाता तो हो क्योंकि उन्हें यह न्यूनतम सुविधा भी उपलब्ध नहीं है।

वित्तीय वंचन के दुष्परिणाम

हमारे देश में बैंकिंग उद्योग ने पिछले कुछ दशकों में उल्लेखनीय प्रगति की है और बैंकों की व्यवहार्यता, लाभप्रदता तथा प्रतिस्पर्धात्मकता में भी उल्लेखनीय सुधार आया है। पर चिंता की बात है कि तमाम प्रयासों के बावजूद समाज के एक बड़े वर्ग को, विशेष रूप से कम आय वाले लोगों और आर्थिक तथा सामाजिक रूप से पिछड़े लोगों तक बैंकिंग सेवाएं नहीं पहुंच पाई हैं। कहना न होगा कि ग्रामीण क्षेत्र इससे सर्वाधिक प्रभावित हुआ है। इसके अर्थात वित्तीय वंचन के निम्नलिखित विपरीत परिणाम सामने आए हैं:-

- बैंकिंग सेवाओं तक जिस बड़े वर्ग की पहुंच नहीं है, उसके जीवन स्तर में अपेक्षित सुधार नहीं हुआ है।
- अपराधों में वृद्धि हुई है।
- साहूकारों आदि से बहुत ऊंची ब्याज दर पर ऋण लेने के कारण ऋणग्रस्तता बढ़ी है और विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में शोषण बढ़ा है।
- बेरोजगारी में निरंतर वृद्धि हो रही है।
- मध्य वर्ग और उच्च आय वर्ग तक पहुंच न होने के कारण लघु और कुटीर उद्योगों को हानि वहन करनी पड़ी है।
- विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में लोग गरीबी की रेखा से नीचे जीवन यापन के लिए विवश हैं।

स्पष्ट है कि बैंकिंग सेवाओं की उपलब्धता के संकुचित दायरे के कारण समाज को, विशेषकर ग्रामीण समाज को भारी नुकसान उठाना पड़ा है। इस परिप्रेक्ष्य में यह अनिवार्य हो जाता है कि उन लोगों को बैंकिंग सेवाओं के दायरे में यथाशीघ्र लाया जाए जो इस दायरे से बाहर हैं।

पूर्व प्रयास

ऐसा नहीं है कि इससे पहले इस ओर कोई प्रयास नहीं हुए हैं। समाज के सभी वर्गों तक बैंकिंग सेवाएं पहुंचाने के लिए विगत में कई महत्वपूर्ण और गंभीर प्रयास किये गए हैं, जिनमें से कुछ हैं:-

- 19 जुलाई 1969 को बैंकों का राष्ट्रीयकरण
- प्राथमिकता क्षेत्रों के लिए ऋण सुनिश्चित करना
- विभेदात्मक ब्याज दर योजना
- क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की स्थापना
- ग्रामीण क्षेत्र में शाखाएं खोलने को प्रोत्साहन
- कम बैंक सुविधा वाले केंद्रों में शाखाएं खोलने हेतु भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा प्रोत्साहन
- अल्प आय वर्ग और समाज के कमजोर वर्गों के लिए विशेष ऋण योजनाएं
- किसान क्रेडिट कार्ड
- अर्ध शहरी तथा ग्रामीण क्षेत्रों के लिए जनरल क्रेडिट कार्ड

वित्तीय समावेशन-वर्तमान स्थिति

इन सब प्रयासों के होते हुए भी विभिन्न कारणों से अभी भी देश की अधिकांश जनसंख्या को सामान्य बैंकिंग सेवा भी उपलब्ध नहीं है। इसका तात्पर्य यह है कि देश के अधिकांश वयस्क लोगों के बैंक में जमा खाते तक नहीं हैं, जबकि बैंकों से पहला रिश्ता जमा खातों से ही बनता है।

इससे संबंधित आंकड़े हैरानी उत्पन्न करने वाले हैं। देश में प्रति 100 व्यक्ति बैंक जमा खातों की संख्या मात्र 31 और प्रति 100 वयस्क व्यक्ति बैंक जमा खातों की संख्या मात्र 59 है। स्पष्ट है कि देश के प्रति 100 व्यक्तियों में से 69 व्यक्तियों तथा प्रति 100 वयस्क व्यक्तियों में से 41 व्यक्तियों की बैंक तक पहुंच नहीं है क्योंकि किसी बैंक में उनका कोई जमा खाता तक नहीं है। यदि इस स्थिति की तुलना इंग्लैड से की जाए तो हम देख सकते हैं कि वहां मात्र 6 प्रतिशत लोग ही ऐसे हैं जिनके खाते बैंकों में नहीं हैं। दूसरे शब्दों में, यह कहा जा सकता है कि जहां हमारे देश में 31 प्रतिशत लोगों को ही आधारभूत बैंकिंग सुविधा उपलब्ध है, वहीं इंग्लैड में 94 प्रतिशत लोग बैंकिंग सेवाओं का लाभ उठा रहे हैं। यह भी उल्लेखनीय है कि फ्रांस, स्वीडन, अमरीका, इंग्लैंड और कनाडा जैसे देशों में इस प्रकार का कानून मौजूद है जो अपने नागरिकों को बैंक में खाता खोलने का कानूनी अधिकार प्रदान करते हैं। उदाहरण के लिए, अमरीका में ***कम्यूनिटी रिइंवेस्टमेंट एक्ट*** कम और सीमित आय वाले लोगों के साथ बैंक द्वारा किए जाने वाले विभेद को प्रतिबंधित करता है और **बैंकिंग लॉ** 25 डालर से अनधिक राशि के कम लागत वाले बैंक खाते खोलने का कानूनी अधिकार देता है। इसी प्रकार फ्रांस में **बैंकिंग एक्ट 1984** अपने नागरिकों को बैंक में खाता खोलने का कानूनी अधिकार प्रदान करता है तथा स्वीडन में **बिज़नेस एक्ट 1987** के अनुसार कोई भी बैंक बचत/जमा खाता खोलने से इनकार नहीं कर सकता। लेकिन भारत में इस प्रकार का कोई कानून नहीं है।

गांवों में तो स्थिति और भी विकट है। जैसाकि पहले उल्लेख किया जा चुका है, प्रत्येक 1000 लोगों पर मात्र 185 जमा खाते हैं। दूसरे शब्दों में सिर्फ 18.5% लोग ही बैंकिंग के दायरे में आते हैं और लगभग 82% लोग ऐसे हैं जिनका बैंक में खाता तक नहीं है। इसका काफी विपरीत प्रभाव भी स्पष्ट दिखाई पड़ता है। आज की स्थिति में कुल ग्रामीण ऋण का 78 प्रतिशत भाग अनौपचारिक स्रोतों से अर्थात साहूकारों और महाजनों आदि से लिया जाता है। साथ ही, कुल ऋण में इन अनौपचारिक स्रोतों का बढ़ता हिस्सा भी चिंताजनक है। वर्ष 1991 में जहां यह 17.5 प्रतिशत था, वहीं वर्ष 2002 में बढ़ कर यह 27 प्रतिशत तक जा पहुंचा था।

दूसरे शब्दों में सिर्फ 18.5% लोग ही बैंकिंग के दायरे में आते हैं और लगभग 82% लोग ऐसे हैं जिनका बैंक में खाता तक नहीं है। इसका काफी विपरीत प्रभाव भी स्पष्ट दिखाई पड़ता है। आज की स्थिति में कुल ग्रामीण ऋण का 78 प्रतिशत भाग अनौपचारिक स्रोतों से अर्थात साहूकारों और महाजनों आदि से लिया जाता है।

वित्तीय समावेशन-ग्रामीण विकास की कुंजी

यदि ग्रामीण क्षेत्र का विकास करना है और उसकी आधारभूत समस्याओं का वास्तविक समाधान खोजना है तो यह बहुत जरूरी होगा कि ग्रामीण क्षेत्र के अधिकाधिक लोगों को बैंकिंग सेवाओं के दायरे में लाया जाए तथा ऐसी नीतियां अपनाई जाएं जिनसे ग्रामीणों की वित्तीय जरूरतों को समय पर और अपेक्षित मात्रा में पूरा किया जा सके।

इस संबंध में भारतीय रिज़र्व बैंक ने बैंकों से कहा है कि वे विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में समन्वित कदम उठाएं, जिनमें शामिल हैं:-

- लोगों को बैंक में जमा खाता खोलने के लिए प्रोत्साहित करना
- उन्हें बचत के लिये प्रोत्साहित करना
- उन्हें बैंकिंग सेवाओं के उपयोग के लिए प्रशिक्षित करना
- उन्हें वित्तीय उत्पादों की जानकारी देना
- धन प्रबंधन और ऋण संबंधी सलाह देना
- कम ब्याज पर ऋण उपलब्ध कराना

सच तो यह है कि वित्तीय समावेशन को सफलापूर्वक लागू करने के लिए बैंकों को विशिष्ट नीतियां बनानी होंगी। इसके लिए उन्हें लघु वित्तपोषण संस्थाओं और स्थानीय लोगों

और स्वयं सहायता समूह जैसी इकाइयों का सहयोग भी लेना होगा। भारतीय रिज़र्व बैंक इस बात पर जोर दे रहा है कि बैंक 'नो फ्रिल अकाउंट' का व्यापक प्रचार-प्रसार करें ताकि समाज के कमजोर वर्ग के लोग बैंक में खाता खोलने के लिए आकर्षित हों। इसके अलावा, कम या अनपढ़ लोगों के लिये अपनी योजनाएं ही नहीं, एटीएम जैसी मशीनों के प्रयोग को भी यूजर फ्रेंडली बनाना होगा। हाल ही में भारतीय रिज़र्व बैंक के उप-गवर्नर श्री लीलाधर ने फेड बैंक हार्मिस मेमोरियल फाउंडेशन लेक्चर में इस बात का विशेष रूप से उल्लेख किया था कि यदि बैंकों को वित्तीय समावेशन के क्षेत्र में तेजी से प्रगति करनी है तो उन्हें दूरस्थ ग्रामीण क्षेत्रों में पहुंच के लिए प्रौद्योगिकी का विवेकसम्मत प्रयोग करना होगा। साथ ही, एटीएम और कैश डिस्पेंसिंग मशीनों को उन लोगों की पहुंच में लाने के लिए विशेष प्रयास करने होंगे जो अंग्रेजी नहीं जानते।

भारत सरकार के वर्ष 2007-08 के बजट में किसानों को पहले से ही दी जा रही ऋण सुविधा की सीमा को बढ़ाने के अलावा 50 लाख नए किसानों को बैंकिंग प्रणाली से जोड़ने की बात कही गई है। रिज़र्व बैंक ने भी सरकारी क्षेत्र के बैंकों और क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों से किसानों को ऋण देने और ऋण-प्रक्रिया को आसान तथा उदार बनाने के लिए कहा है। साथ ही, किसानों को 50 हजार रुपये तक के ऋण पर कोई बकाया नहीं (नोड्यूज) प्रमाण-पत्र की बाध्यता समाप्त कर दी है।

ग्रामीण-विकास और ग्रामीण कारीगरों, लघु तथा कुटीर उद्योगों, किसानों तथा खेतिहर मजदूरों की खुशहाली में सरकारी क्षेत्र के बैंक, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक और सहकारी बैंक और भी कारगर भूमिका निभा सकते हैं। यह उल्लेखनीय है कि संपूर्ण बैंकिंग प्रणाली की 57 प्रतिशत शाखाएं ग्रामीण क्षेत्रों में हैं। जबकि ग्रामीण बचत क्षमता का पूरी तरह से दोहन नहीं कर पाए हैं। गहन रूप से यदि इस पर विचार करें तो यह स्पष्ट हो जाएगा कि ग्रामीण क्षेत्रों में लगभग 82 प्रतिशत लोगों के बैंकिंग सेवाओं के दायरे से बाहर रहना इसका मुख्य कारण है। इसलिए ग्रामीण क्षेत्र में विकास तथा खुशहाली के लिए यह बहुत जरूरी है कि वित्तीय समावेशन को उसके सही अर्थों में लागू किया जाए।

◆

किसान काल सेंटर

सुल्तानपुर के किसान रामू ने के. सी. सी. के टोल फ्री नंबर पर फोन लगाकर जानकारी चाही कि वह अपने बैंगन के पौधों को फफूंद की मार से कैसे बचा सकता है। इसी बीच नांगलोई की महिला किसान बिदाई ने पूछा कि वह अपने फलों के बाग में उगने वाले छोटे अमरूदों की साइज कैसे बढ़ा सकती है, जबकि उधर तीन नंबर की लाइन पर आई सुनहरी इस बात को लेकर परेशान थी की उसकी गाय बछड़े को जन्म नहीं दे पा रही । इसी तरह किसान क्रेडिट कार्ड, महिला किसान ऋण संबंधी विविध योजनाओं, जैविक खेती, कीटनाशकों व कृमिनाशकों की कीमत, खेतिहर कचरे, पानी की निकासी आदि मुद्दों पर झड़ते सवालों से के.सी.सी. के विशेषज्ञ दिन भर जूझते रहे। सवालों की यह झड़ी सप्ताह के छह दिन रोजाना सुबह 6 से लेकर रात के 1 बजे तक जारी रहती है।

कृषि मंत्रालय के अधीन कृषि विभाग द्वारा जनवरी 2004 में 100 करोड़ रुपए के शुरूआती निवेश से स्थापित किसान कॉल सेंटर (के.सी.सी.) किसानी ज्ञान के एकल पोखर के बतौर देश भर के किसानों के लिए वरदान सिद्ध हो रहे हैं। कृषि व संबंधित क्षेत्रों से जुड़े अपने तमाम सवालों के समाधान किसान निःशुल्क (टोल फ्री) टेलीफोन नंबर 1551 डायल कर प्राप्त कर सकते हैं। कृषकों के लिए यह समाधान देश भर में फैले 84 के.सी.सी. केंद्रों पर तैनात कृषि विशेषज्ञों द्वारा प्रदान किए जाते हैं।

'यह कॉल सेंटर किसानों को पहले स्तर का समर्थन देते हैं। पहले स्तर पर समाधान नहीं मिलने पर किसानों के सवाल द्वितीय स्तर पर पहुंचाए जाते हैं, जहां विभाग द्वारा चुने गए विशेषज्ञ होते हैं और तमाम बेजवाब, अनुत्तरित तथा रिकार्डेड सवाल संबद्ध निदेशालयों (तृतीय स्तर समर्थन) को भेजे जाते हैं, जहां से डाक के जरिए उनके समाधान भेजे जाते हैं'। आम तौर पर कॉल सेंटर कृषि स्नातक या फिर विज्ञान, कृषि व डेयरी उद्योग से संबंधित लोग होते हैं।

व्यष्टि वित्त और वाणिज्यिक बैंकों की भूमिका

◉ डॉ. सुरेश कुमार
उप महाप्रबंधक
भारतीय स्टेट बैंक, मुंबई

भारत में ग्रामीण ऋण का संस्थागत तंत्र **संगठित ऋण वितरण प्रणाली** की बहुमुंखी रणनीति के बावजूद वांछित परिणाम देने में विफल रहा है। ग्रामीण लोगों की ऋण संबंधी जरूरतें व्यापक हैं, जैसे उत्पादक जरूरतें (अल्पकालिक और दीर्घकालिक दोनों), जोखिमों के विरूद्ध बीमा के रूप में ऋण और उपभोग संबंधी जरूरतें पूरी करने के लिये ऋण। भारतीय किसानों की ऋणग्रस्तता बहुत बड़ी है। देश के लगभग 48.6% किसान ऋणग्रस्त हैं। राष्ट्रीय सेवा योजना (एनएसएस) के 2005 के अनुमानों के अनुसार आंध्र प्रदेश में तो 82% किसान ऋणग्रस्त हैं।

देश में आर्थिक उदारीकरण के दौर में सामाजिक बैंकिंग को धक्का लगा है। **प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्रों को दिए जाने वाले ऋण** में बैंकों का हिस्सा घटता गया है। केंद्र सरकार ग्रामीण क्षेत्रों ऋण का प्रवाह तेज करने के बारे में गंभीरता से सोच रही है। इसके लिए वह **व्यष्टि ऋण-परियोजनाएं** स्थापित करने पर विचार कर रही है।

> महिलाओं को लक्षित करने पर व्यष्टि वित्त के लाभ कई गुना हो जाते हैं। समावेशात्मक वित्त या वित्तीय समावेशन में व्यष्टि वित्त की भूमिका और भी महत्वपूर्ण हो जाती है।

व्यष्टि ऋण का आकार

व्यष्टि वित्त (माइक्रो फायनेंस) संस्थाओं की संख्या हाल के वर्षों में बढ़ी है, फिर भी वह अभी तक उल्लेखनीय अनुपात ग्रहण नहीं कर सकी है। 2000-01 में **स्वयं सहायता समूह (एसएचजी) बैंक सहलग्नता कार्यक्रम** के तहत दिए गए ऋण कुल राशि के 0.5% से भी कम थे, जो बैंकिंग तंत्र द्वारा कृषि और उससे संबद्ध कार्यों को संवितरित किए गए थे। मार्च 2006 के अनुसार 22,38,565 स्वयं सहायता समूहों ने 11,39,800 लाख रुपए का बैंक ऋण प्राप्त किया था। दिसंबर 2006 के अनुसार 2.38 लाख नए स्वयं सहायता समूहों को 13571 करोड़ रुपए का बैंक ऋण प्रदान किया गया। 2006-07 में 3.85 लाख स्वयं सहायता समूहों को सहायता प्रदान करने का लक्ष्य रखा गया था। **स्वयं सहायता समूह बैंक सहलग्नता** की प्रगति आगे सारणी में दर्शाई जा रही है।

व्यष्टि ऋण क्या है?

1997 में वाशिंगटन डीसी में आयोजित व्यष्टि ऋण सम्मेलन के घोषणा पत्र में व्यष्टि ऋण कार्यक्रम को इस प्रकार परिभाषित किया गया है, 'आय सृजित करने वाली स्वरोज़गार परियोजनाओं के लिए गरीब लोगों को छोटे ऋण देना, ताकि वे अपना और अपने परिवारों का भरण-पोषण कर सकें।

व्यष्टि वित्त संस्थाएं अपने ग्राहकों को स्वरोज़गार के लिए ऋण देने के अलावा सेवाओं और संसाधनों का एक सम्मिश्रण उपलब्ध कराती हैं, जिसमें अक्सर बचत की सुविधाएं, प्रशिक्षण, नेटवर्किंग और **समकक्षी सहायता** शामिल रहती हैं। राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड) व्यष्टि वित्त की परिभाषा में शहरी जीवन की समस्या को भी समेट लेता है। उसके अनुसार व्यष्टि वित्त ग्रामीण, अर्ध शहरी और शहरी क्षेत्रों में रहने वाले गरीबों के लिए बहुत छोटी राशियों की बचत, ऋण और अन्य वित्तीय सेवाओं तथा उत्पादों का प्रावधान है, जिससे वे अपनी आय का स्तर बढ़ा सकें और अपने जीवन-स्तर में सुधार ला सकें। भारतीय रिज़र्व बैंक भी इस परिभाषा को मान्यता देता है। महिलाओं को लक्षित करने पर व्यष्टि वित्त के लाभ कई गुना हो जाते हैं। **समावेशात्मक वित्त** या **वित्तीय समावेशन** में व्यष्टि वित्त की भूमिका और भी महत्वपूर्ण हो जाती है।

वैश्विक घटना के रूप में व्यष्टि वित्त को सामने आए एक अरसा हो गया है। 19 वीं सदी के मध्य में अमरीकी कानून लेखक लिसेंडर स्पूनर ने गरीबी-उन्मूलन के एक उपाय के रूप में गरीबों को उद्यम संबंधी गतिविधियों के लिए छोटे ऋण दिए जाने के संबंध में खूब लिखा। 19 वीं सदी में ही महा कवि

रविंद्रनाथ टैगोर ने बंगाल में सहकारी संस्थाओं की उन्नति के लिए काम किया और सहकारी ऋण तथा व्यष्टि वित्त पर अनेक निबंध लिखे। 1971 में वित्तीय उद्यमियों ए. विटकर और डेविड बसाऊ ने वंचित लोगों को उनका जीवन बदलने के लिए ऋण प्रदान करने हेतु ऑपर्च्यूनिटी इंटरनेशनल नामक संस्था का गठन किया। वे गरीबों के जीवन स्तर में बदलाव लाने के उद्देश्य से नई पहलों के लिए 25 से 500 डॉलर तक के ऋण प्रदान करते थे। 1976 में मुहम्मद यूनुस ने बांग्लादेश में एक ग्रामीण बैंक खोला, जो अब तक 70 लाख लोगों की मदद कर चुका है, जिनमें से 97% लाभार्थी महिलाएं हैं। भारत में नाबार्ड व्यापक रूप से गरीबों की मदद करने के लिए सामने आया है। वह 500 बैंकों के माध्यम से स्वयं सहायता समूहों की मदद कर रहा है।

व्यष्टि वित्त ने ग्रामीण विकास और गरीबी उन्मूलन के लिए राज्य चालित दृष्टिकोण से बाजार चालित दृष्टिकोण में बदलाव सुनिश्चित किया है। ऋण नियोजन और महिलाओं के संगठन की दृष्टि से स्वयं सहायता समूह मॉडल एक उल्लेखनीय नवप्रवर्तन है।

व्यष्टि वित्त की विशेषताएं

व्यष्टि वित्त के अंतर्गत बिना **संपार्श्विक** जमानत के ऋण दिया जाता है। व्यष्टि वित्त इकाइयां अपने सदस्यों को बचत और अन्य वित्तीय सेवाओं के लिए वित्त उपलब्ध कराती हैं। गरीबों के साथ बैंकिंग करने के तीन तरीके हैं परंपरागत बैंक - ऋण के माध्यम से, स्वयं सहायता समूहों को बैंक ऋण से जोड़कर और व्यष्टि वित्त संस्थाओं को बैंक ऋण देकर। दूसरी और तीसरी पद्धति के अंतर्गत लेनदेन की लागत न्यूनतम बैठती है। व्यष्टि वित्त बैंक -ऋण के विपणन की प्रक्रिया में सहायक होता है। नाबार्ड कार्यदल ने प्रतिव्यक्ति ऋण आवश्यकता ग्रामीण क्षेत्रों में 6 हजार रुपए और शहरी क्षेत्रों में 9 हजार रुपए आंकी है।

व्यष्टि वित्त ने ग्रामीण विकास और गरीबी उन्मूलन के लिए राज्य चालित दृष्टिकोण से बाजार चालित दृष्टिकोण में बदलाव सुनिश्चित किया है। **ऋण नियोजन** और महिलाओं के संगठन की दृष्टि से स्वयं सहायता समूह मॉडल एक उल्लेखनीय **नवप्रवर्तन** है। नाबार्ड के स्वयं सहायता समूह बैंक सहलग्नता कार्यक्रम ने उसे व्यष्टि वित्त का विश्व नेता बना दिया है। विश्व के व्यष्टि वित्त बाज़ार में हमारे देश का अंश 15% के लगभग है। स्वयं सहायता समूह बैंक संलग्न व्यष्टि वित्त संस्थाओं की सर्वाधिक उल्लेखनीय संवृद्धि आंध्र प्रदेश में हुई। 2000-01तक यह संवृद्धि असंतुलित रही। व्यष्टि वित्त संस्थाओं के क्षेत्रीय वितरण में प्रत्यक्ष विसंगति दूर करने के लिए 13 राज्य अर्थात असम, बिहार, राजस्थान, छत्तीसगढ़, गुजरात, हिमाचल प्रदेश, झारखंड, महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश, उड़ीसा, उत्तर प्रदेश, उत्तरांचल और पश्चिम बंगाल प्राथमिकता प्राप्त राज्य घोषित किए गए। वाणिज्यिक बैंकों, सहकारी संस्थाओं, व्यष्टि वित्त संस्थाओं, सामाजिक संगठनों आदि की सहायता से इन राज्यों में गहन प्रयास किए गए, जिससे व्यष्टि वित्त संबधी पहलों में इन राज्यों की हिस्सेदारी 2004 में 40% तक बढ़ाने में सहायता मिली जो 2000-01 में 15% से भी कम थी।

नाबार्ड की पहल को सरकारी संरक्षण प्राप्त है। उधर बांग्लादेश के ग्रामीण मॉडल के अनुरूप यहाँ विभिन्न स्तरों पर एक साथ एक समानांतर प्रणाली उभरी है, जिसमें स्वायत्त और लचीले मानदंडों वाले छोटे-छोटे समूहों और संगठित संगठनों जैसी गैर सरकारी एजेंसियों का संरक्षण चल रहा है। व्यष्टि वित्त संस्थाओं के लिए एक वैकल्पिक मॉडल उपलब्ध कराने के उद्देश्य से कुछ राज्य सरकारों ने सहकारी संस्थाओं की कार्यप्रणाली में व्यापक स्तर पर सुधार किए हैं। पर स्वयं सहायता समूह किस्म की संस्थाएं व्यष्टि वित्त संबंधी पहल का लगभग 65% बैठती है। औसतन हर स्वयं सहायता समूह ने 23,400 रुपए का ऋण लिया है और हर सहभागी परिवार का अंश 1,500 से 2,000 रुपए है।

व्यष्टि वित्त व्यवसाइयों की भारतीय रिज़र्व बैंक से लंबे समय से यह मांग रही है कि स्वयं व्यष्टि वित्त के लिए एक उपयुक्त विनियामक तंत्र विकसित किया जाए, ताकि व्यष्टि वित्त उद्योग और व्यष्टि वित्त वितरण के लिए संस्थागत तंत्र की अलग पहचान स्थापित हो सके। एक विशिष्ट और पृथक वित्तीय पहचान के अभाव में व्यष्टि वित्त उद्योग की जोखिम पूंजी, विदेशी पूंजी, उद्यम पूंजी और जमा संग्रहण तक पहुंच नहीं बन सकी है, जिससे उधार दी जा सकने वाली निधि में वृद्धि रुकी है। तथापि, 2005-06 के वार्षिक नीति विवरण में रिज़र्व बैंक ने कुछ उपाय घोषित किए हैं। अब बैंक नागरिक - सामाजिक

संगठनों, ग्रामीण कियॉस्कों और ग्रामीण ज्ञान केंद्रों को बैंकिंग संपर्की के रूप में सूचीबद्ध कर ग्रामीण ऋण के प्रति एजेंसी दृष्टिकोण अपना सकते हैं। यह निर्णय लिया गया है कि गैर-सरकारी संगठन, जिनमें धमार्थ समितियां, भागीदारी या स्वामित्व फर्में और गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियां शामिल हैं, **बाह्य वाणिज्यिक उधार** (ईसीबी) ले सकते हैं। किंतु इन संगठनों के पास ऋण वितरण का उपयुक्त ट्रैक रिकार्ड होना चाहिए। अहमदाबाद स्थित 67 करोड़ रुपए के उत्कृष्ट ऋण पोर्टफोलियो वाले एक व्यष्टि वित्त रिटेलर फ्रेंडस ऑफ वीमेनस वर्ल्ड बैंकिंग, भारत ने 2005-06 में ईसीबी-मार्ग से 11.7 लाख डॉलर की निधि प्राप्त की है।

व्यष्टि वित्त और भारतीय बैंक

बैंकों को व्यष्टि वित्त के कार्य में अनेक जोखिमों और बाधाओं का सामना करना पड़ता है, जिनमें चूक का जोखिम, उच्च लेनदेन लागत, आवास परियोजनाओं के वित्तपोषण के लिए पट्टेदारी का अभाव, आय के सृजन में नियमितता की कमी, फसल, बर्तन और अन्य संपत्तियों जैसे अस्वीकार्य संपार्श्विक आदि शामिल हैं। किन्तु जोखिमों और अपर्याप्त प्रतिलाभों के बावजूद व्यष्टि वित्त **अर्थक्षम व्यवसाय** का उत्कृष्ट अवसर उपलब्ध कराता है। व्यष्टि वित्त के अंतर्गत ऋण आवश्यकता लगभग 50,000 करोड़ रुपए है। अगर हम भावी लाभार्थियों के रूप में सापेक्ष और सर्वथा गरीब परिवारों को शामिल कर लें, तो कुल जनसंख्या का कम से कम 40% हिस्सा बाजार के आकार में शामिल किया जा सकता है। इस कारण बैंक व्यष्टि वित्त में ज्यादा से ज्यादा रुचि प्रदर्शित कर रहे हैं। बैंक ऊपर उल्लिखित जोखिमों को एक फ्रेमवर्क विकसित करके न्यूनतम कर सकते हैं, जिसके तहत ग्रामीण वित्तपोषण का प्रामाणिक अनुभव रखने वाली व्यष्टि-वित्त संस्थाओं, गैर-सरकारी संगठनों और एजेंसियों के साथ मिलकर काम किया जा सकता है। अनुभव के आदान-प्रदान से कम चूक जोखिम वाले आदर्श लक्ष्य समूह का चयन करने में सहायता मिलेगी। ये संगठन बैंकों को चूक जोखिम न्यूनतम करने और लक्ष्य समूह की मांग के अनुरूप उत्पाद तैयार करने में बहुमूल्य अंतर्दृष्टि प्रदान कर सकते हैं।

गैरजमानती ऋण के मामले में बैंकों को संगठनात्मक प्रथाओं और विनियामक मानदंडों का पालन करना होता है, जो व्यष्टि वित्त संबंधी पहलों के मामले में प्रेरक नहीं होता। इन प्रथाओं में बदलाव लाना भी एक समय साध्य घटना है। फिर भी, बैंकों को अपनी विपणन और मूल्यांकन क्रियाविधि में व्यष्टि वित्त प्रस्ताव को उपयुक्त रूप में शामिल करना चाहिए, क्योंकि व्यष्टि वित्त अत्यधिक संभावनाशील क्षेत्र है।

बैंक उन व्यष्टि उद्यमियों की मदद कर सकते हैं, जो अपने उत्पादों के विपणन के अवसर बढ़ाना चाहते हैं। बैंकों को संभावित लक्ष्य समूहों की जरूरतों का अध्ययन करने के लिए विशेषीकृत कक्ष सृजित करने होंगे और तैयार, असरदार और विविधीकृत उत्पाद लाने होंगे। भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक, नाबार्ड, नीको, राष्ट्रीय लघु उद्योग विकास निगम (NSIC) और व्यष्टि वित्त के क्षेत्र में कार्यरत ऐसी अन्य संस्थाओं के साथ निकट समन्वय स्थापित करना होगा। उपयुक्त **जोखिम प्रबंधन** प्रक्रिया की दृष्टि से यह आवश्यक है। अगर बैंकों को निर्धनतम समूहों की सहायता करनी है, तो बैंक निधियों के बेहतर जोखिम प्रबंधन के लिए किसी न किसी तरह की सरकारी और पंचायत स्तरीय सहायता अपेक्षित होगी। व्यष्टि वित्त सहायता के लिए विशेषीकृत बैंक शाखाएं होनी चाहिए। इन शाखाओं का स्टाफ लाभार्थियों की जरूरतों का और जिन उद्योगों में लक्ष्य समूह कार्यरत है, उनका बाजार सर्वेक्षण और सामाजिक आर्थिक अध्ययन के प्रति समर्पित होना चाहिए। विश्वभर में व्यष्टि वित्त के सर्वाधिक सफल उद्यम दर्शाते हैं कि उनमें नकदी प्रवाह के साथ समूह ऋण, समकक्षी गारंटी और उपयुक्त **चुकौती अनुसूची** का सामंजस्य रहा है। उन्होंने सूचना प्रौद्योगिकी का भी सक्षम तरीके से इस्तेमाल किया।

निष्कर्ष यह कि व्यष्टि वित्त एक संभावनापूर्ण क्षेत्र है, जिसके द्वारा बैंक अपने व्यवसाय का विविधीकरण कर सकते हैं। इसके लिए उनका दृष्टिकोण सहयोगात्मक होना चाहिए। लाभार्थियों को विकास की प्रक्रिया में शामिल करने के लिए संस्थागत समन्वय की भावना रखनी अनिवार्य है। बैंकों में व्यष्टि वित्त कार्य की प्रक्रिया में समन्वय स्थापित करने की क्षमता होनी चाहिए। वे विविधीकृत वित्तीय सेवाएं प्रदान करने में भी सक्षम हैं, जिससे व्यष्टि वित्त संबंधी पहलों को सुदृढ़ बनाने में मदद मिल सकती है।

सारणी

स्वयं सहायता समूह बैंक सहलग्नता की प्रगति *

वर्ष	बैंकों द्वारा वित्तपोषित नए स्वयं सहायता समूह			बैंक ऋण (करोड़ रुपए)		
	वर्ष के दौरान राशि	संवृद्धि %	संचित राशि	वर्ष के दौरान राशि	संवृद्धि %	संचित राशि
2002-03	2,55,882	29	7,17,360	1,022.34	87	2,048.68
2003-04	3,61,731	41	10,79,091	1,855.53	81	3,904.21
2004-05	5,39,365	49	16,18,456	2,994.25	62	6,898.46
2005-06	6,20,109	15	22,38,565	4,499.09	50	1,397.55
2006-07#	2,37,927		24,76,492	2,114.31		13,511.86

*मौजूदा स्वयं सहायता समूहों को पुनः दिए गए ऋणों सहित।
31 दिसंबर 2006 के अनुसार
स्रोत : आर्थिक सर्वेक्षण 2006-07

प्रयुक्त शब्दावली

संगठित ऋण वितरण प्रणाली	Organized Credit Delivery System
प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र को दिये जाने वाले ऋण	Priority Sector Lending
व्यष्टि ऋण परियोजनाएं	Micro Credit Projects
व्यष्टि वित्त	Micro Finance
स्वयं सहायता समूह-बैंक सहलग्नता कार्यक्रम	Self Help Group-Bank Linkage Programme
समकक्षी सहायता	Peer Support
समावेशात्मक वित्त	Inclusive Finance
वित्तीय समावेशन	Financial Inclusion
संपार्श्विक	Collateral
ऋण नियोजन	Credit Deployment
नवप्रवर्तन	Innovation
बाह्य वाणिज्यिक उधार	External Commercial Borrowings (ECB)
अर्थक्षम व्यवसाय	Viable Business
जोखिम प्रबंधन	Risk Management
चुकौती अनुसूची	Repayment Schedule

ग्रामीण बैंकिंग के विकास में लघु उद्योगों की भूमिका

◉ डॉ. दलसिंगार यादव
पूर्व उप महाप्रबंधक
भारतीय रिज़र्व बैंक, मुंबई

लघु और मध्यम उद्यम क्षेत्र समस्त विश्व में तेजी से विकसित हो रहे क्षेत्रों में से एक है। भारतीय अर्थव्यवस्था के बढ़ते वैश्वीकरण के परिणामस्वरूप माइक्रो, लघु और मध्यम उद्यमों के सामने नई चुनौतियाँ उभर कर सामने आ रही हैं। सरकार ने इस बदलते माहौल को पहचाना है और इस क्षेत्र को ऋण, विपणन तकनीकी और बुनियादी ढाँचे के क्षेत्र में सहायता करने एवं कम विकसित क्षेत्रों में औद्योगीकरण को बढ़ावा देने पर ध्यान केंद्रित किया है।

हमारे देश में अत्यधिक जनशक्ति, श्रमसंसाधन, विविध प्रकार के बहुत ही समृद्ध भौतिक संसाधनों के साथ बहुत विस्तृत भौगोलिक क्षेत्र भी है। इन संसाधनों के भरपूर उपयोग के लिए औद्योगीकरण बहुत ही जरूरी एवं व्यवहार्य है।

अभी तक हमारे देश में औद्योगीकरण को सरकार की जिम्मेदारी समझा जाता रहा। परंतु अब कुछ वर्षों से इसमें निजी सहभागिता को भी शामिल किया जा रहा है और यह महसूस किया जाने लगा है कि कुछ क्षेत्रों में यदि सरकार के साथ-साथ निजी कंपनियों को सहभागिता का अवसर दिया जाए तो विकास की गति सुगम और तेज़ हो जाएगी एवं संसाधन जुटाने में भी आसानी होगी।

हमारे देश में अत्यधिक जनशक्ति, श्रमसंसाधन, विविध प्रकार के बहुत ही समृद्ध भौतिक संसाधनों के साथ बहुत विस्तृत भौगोलिक क्षेत्र भी है। इन संसाधनों के भरपूर उपयोग के लिए औद्योगीकरण बहुत ही जरूरी एवं व्यवहार्य है। औद्योगीकरण क्यों? इसका जवाब है- प्रतिव्यक्ति आमदनी बढ़ेगी, आमदनी बढ़ने के बाद लोगों की क्रयशक्ति बढ़ेगी तो औद्योगिक उत्पादों की मांग बढ़ेगी। अतः उनकी मांग की पूर्ति, खुले विश्व व्यापार माहौल में निर्यात के बीच के अंतर को कम करने, इफ़रात श्रमशक्ति को खपाने, अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाने और देश की सुरक्षा बढ़ाने के लिए औद्योगीकरण का रास्ता ही सबसे सुनिश्चित मार्ग है।

रोज़गार सृजन (अवसर उपलब्ध कराना)

लघु और मध्यम उद्यम क्षेत्र के योगदान के बारे में महत्व की बात यह है कि यह भारी मात्रा में रोज़गार मुहैया कराता है। यह बात भारत जैसे देश के संदर्भ में और भी संगत प्रतीत होती है, जहाँ बेरोज़गारी, न्यून रोज़गारी (अंडर एम्पलॉयमेंट) और मौसमी बेरोज़गारी (सीज़नल अनएम्पलॉयमेंट) की समस्या बहुत व्यापक है तथा औद्योगीकरण में लगाने के लिए पूंजी की अत्यंत कमी भी है। अतः श्रम शक्ति की अत्यधिक उपलब्धता और पूंजी की कमी वाली अर्थव्यवस्था की स्थिति में लघु और मध्यम उद्योग एक मात्र विकल्प प्रतीत होते हैं। लघु उद्योगों की तीसरी अखिल भारतीय गणना (2001-02) के अनुसार, हर पंजीकृत इकाई द्वारा औसतन 4.48 व्यक्तियों को और अपंजीकृत इकाइयों द्वारा औसतन 2.05 व्यक्तियों को रोज़गार दिया जाता है। (कुल लघु उद्योग इकाइयों द्वारा औसतन 2.37 व्यक्ति प्रति लघु उद्योग इकाई)। इस गणना के आंकड़ों से यह तथ्य भी सामने आया है कि प्रति एक लाख रुपए के निवेश से लघु उद्योग क्षेत्र में 1.62 व्यक्तियों को रोज़गार प्राप्त होता है जबकि विनिर्माण क्षेत्र में मात्र 0.20 व्यक्तियों को ही रोज़गार प्राप्त होता है। इससे यह बात भी साबित होती है कि लघु उद्योग से भिन्न संगठित क्षेत्र में एक व्यक्ति को रोज़गार मुहैया कराने के लिए 5 लाख रुपए का निवेश करना होता है जबकि लघु उद्योग क्षेत्र में उतने ही निवेश से 8 व्यक्तियों को रोज़गार उपलब्ध कराया जा सकता है, अर्थात्, हमारे देश में, जहाँ पूंजी की कमी आम समस्या है, लघु उद्योग क्षेत्र रोज़गार प्रदान करने में 8 गुना अधिक कारगर है। यह आलोचना की जाती है कि जब इस क्षेत्र में उत्पादकता कम है और कर्मचारी अधिक हैं तो इकाई में काम कर रहे व्यक्तियों की संख्या घटा कर उत्पादकता क्यों नहीं बढ़ाई जाती। इसका जवाब यह है कि सिद्धांत के रूप में ऐसा सोचा जा सकता है परंतु वास्तविकता तो यह है कि हमारे देश में, जहाँ एक ओर बेरोजगारी है वहीं दूसरी ओर मजदूरों की बहुलता है, तब सबसे पहले रोज़गार प्रदान करना ज्यादा जरूरी है न कि प्रति व्यक्ति उत्पादकता बढ़ाना। समय के साथ नई प्रौद्योगिकी का उपयोग

करके व मजदूरों के कौशल का स्तर बढ़ा कर, उत्पादकता भी बढ़ाई जा सकती है। फिलहाल तो गौर करने की बात यह भी है कि इस क्षेत्र का 'निवेश उत्पादन अनुपात' संगठित क्षेत्र के 'निवेश उत्पादन अनुपात ' के समान ही है। अतः हमारे देश में बड़ी लागत वाले बड़े उद्योगों के साथ-साथ लघु और मध्यम उद्योग लगाने पर ध्यान केंद्रित किया जाए तो बेरोज़गारी की समस्या से भी निपटा जा सकता है और औद्योगीकरण भी हो सकता है।

लघु स्तरीय उद्योग की संरचना

भारत सरकार के लघु उद्योग मंत्रालय ने देश में लघु स्तरीय उद्योगों के बारे में अभी तक तीन सर्वेक्षण किए हैं। वे सर्वेक्षण 1972,1987 और 2002-03 में किए गए थे। 2002-03 में किए गए सर्वेक्षण में 2001-02 तक के आंकड़े शामिल किए गए थे। तीसरे सर्वेक्षण के प्रयोजन से भारतीय लघु उद्योग क्षेत्र को दो वर्गों **लघु स्तरीय औद्योगिक उपक्रम** (**एस एस आई**) और **लघु स्तरीय सेवा और कारोबार उद्यम (एस एस एस बी ई**) में विभक्त किया गया था। हम संक्षेप में उन आंकड़ों को यहां प्रस्तुत कर रहे हैं, जिससे बड़ी ही रोचक स्थिति सामने आती है।

वर्ष 2001-02 में लघु उद्योग व लघु स्तरीय सेवा और कारोबार उद्यम क्षेत्र (एसएसआई) में कुल 1,05,21,190 इकाइयां (13,74,974 पंजीकृत व 91,46,216 अपंजीकृत) थीं। उनमें से 55 प्रतिशत इकाइयां ग्रामीण क्षेत्रों में थीं। कुल लघु उद्योग उपक्रमों में से लगभग 44.46 लाख से अधिक इकाइयां (42.26 प्रतिशत) लघु उद्योग इकाइयां (एसएसआई) थीं और शेष लगभग 60.75 लाख (57.74 प्रतिशत) लघु स्तरीय सेवा कारोबार उद्यम इकाइयां (एसएसएसबीआई) थीं। अतिलघु औद्योगिक इकाइयां (टाइनी यूनिटस्) जिनका मशीनों और संयंत्रों में 25 लाख रुपए तक का निवेश था, उनकी संख्या 44.26 लाख थी। यह संख्या लघु उद्योग इकाइयों का 99.5 प्रतिशत है। अतः वर्तमान परिभाषा के अनुसार अधिकतर इकाइयां अति लघु औद्योगिक इकाइयां (टाइनी) ही है।

लघु स्तरीय उद्योग क्षेत्र या तो **घरेलू उद्यम** (हाउस होल्ड एंटरप्राइजेस) हैं या **गैर घरेलू** (नॉन हाउस होल्ड एंटरप्राइजेस)। घरेलू उद्यम अपने आवासीय स्थल से ही इकाई का संचालन करते हैं। गैर घरेलू उद्यम अन्य विनिर्माण क्षेत्र की इकाइयां हैं जो स्थापना के रूप में कार्य करती हैं।

ऋण मिलने में कठिनाइयां

उक्त आंकड़ों से स्पष्ट होता है कि अधिकतर लघु उद्योग ग्रामीण क्षेत्रों में कार्यरत हैं और उद्योगों का आधार धन है तथा जहां धन की बात होती है वहां बैंकों के बिना गाड़ी आगे नहीं बढ़ती है। अतः बैंक और उद्योग एक दूसरे पर आश्रित हैं।

यद्यपि एस.एम.ई. क्षेत्र देश की अर्थव्यवस्था में बहुत योगदान कर रहा है परंतु बैंकों से मिलने वाले कुल बैंक ऋण में इस क्षेत्र को मिलने वाले ऋण की मात्रा वांछित मात्रा से कम रही है। इस क्षेत्र के विकास में यह बहुत बड़ी कमी रही है। देश की औपचारिक ऋणदायी संस्थाओं से वांछित मात्रा और समय पर ऋण न मिलने के कारण इन्हें अनौपचारिक ऋण संस्थाओं का सहारा लेना पड़ता है या ऋण न मिल पाने के कारण कारोबार के अवसर हाथ से निकल जाते हैं। अतः निधियों की कमी के कारण उन्हें घाटा उठाना पड़ता है या अवसरों को छोड़ना पड़ता है। औपचारिक ऋणदायी संस्थाएं, जैसे वित्तीय संस्थाएं, बैंक आदि, एस.एम.ई. के बारे में विश्वसनीय और पर्याप्त जानकारी उपलब्ध न होने के कारण ऋण के प्रस्तावों पर निर्णय नहीं कर पाते हैं। यदि उस कमी को पूरा कर दिया जाए तो ऋण प्रस्तावों को समय पर मंजूर करके विकास का माहौल बनाया जा सकता है। यदि समय पर और पर्याप्त मात्रा में ऋण मिल जाते हैं तो उन अवसरों का लाभ उठाकर एस.एम.ई. अपना कारोबार सुचारू रूप से चला सकते हैं।

वित्तीय सहायता : इकाइयों व बैंकों के सामने समस्याएं

अक्सर यह कहा जाता है कि बैंक लघु व मध्यम उद्यमों को ऋण देने में आनाकानी करते हैं, अपर्याप्त मात्रा में ऋण देते हैं या ऋण मंजूरी में देरी करते हैं। इस तथ्य में कितनी सच्चाई है, यह जानने के लिए उद्यमियों के दृष्टिकोण के साथ-साथ बैंकों के दृष्टिकोण से भी लघु व मध्यम उद्यमों को देखना व समझना होगा।

लघु उद्योगों की तीसरी गणना के दौरान रुग्ण इकाइयों से

उनकी रुग्णता के कारण पूछे गए थे। रुग्ण इकाइयों में लगभग 46 प्रतिशत इकाइयों ने 'कार्यशील पूंजी की कमी' को रुग्णता का महत्वपूर्ण कारण बताया है। हो सकता है कि इकाई के रुग्ण होने के अन्य कारणों, यथा प्रबंध की समस्या, मजदूरों से संबंधित समस्या, उपकरणों की समस्या जैसे आंतरिक कारणों या फिर मार्केटिंग की समस्या जैसे अन्य कारणों को न पहचानते हुए अथवा इन कारणों को महत्वपूर्ण न समझकर, उद्यमियों ने बैंकों को दोष देना अधिक सुविधाजनक समझा हो। दोषारोपण की सच्चाई व गहराई तक पहुंचने के लिए कुछ आंकड़ों पर नज़र डालना उचित होगा।

लघु उद्योगों की तीसरी गणना (2001-02) के अनुसार 31 मार्च 2002 को कुल 105.21 लाख इकाइयों में से मात्र 7.39 प्रतिशत इकाइयों (7,77,639) को ही ऋण प्राप्त था। इसमें भी अगर संस्थागत स्रोतों से ऋण प्राप्त करने वाली इकाइयों की संख्या देखी जाए तो वह मात्र 4.55 प्रतिशत (4,78,404) पाई गई। ऐसा प्रतीत होता है कि ये आंकड़े काफी हद तक कम आंके गए हैं क्योंकि रिज़र्व बैंक द्वारा प्रकाशित आंकड़ों के अनुसार मार्च 2002 में वाणिज्यिक बैंकों में ही लघु औद्योगिक इकाइयों के ऋण खातों की संख्या 19.00 लाख थी। रिज़र्व बैंक के आंकड़ों के आधार पर गणना की जाए तो भी मात्र 18.05 प्रतिशत इकाइयों (कुल 105.21लाख इकाइयों में से) को ही अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों से ऋण प्राप्त हो सका है जो कि निश्चित रूप से यह दर्शाता है कि अधिकांश इकाइयों ने या तो ऋण लेने के लिए बैंकों के द्वार नहीं खटखटाए या उन्हें ऋण नहीं मिल पाया। फिलहाल इस बारे में कोई अध्ययन नहीं किया गया है और न ही कोई ठोस आंकड़े उपलब्ध हैं कि कितनी इकाइयां ऋण लेने में रुचि नहीं रखती हैं व रुचि रखने वाली इकाइयों में से कितनों को बैंक से ऋण प्राप्त हो पाया है। अगर मोटे तौर पर अनुमान के आधार पर यह मान भी लिया जाए कि आधी इकाइयां ही ऋण लेने में रुचि रखती हैं (जो शायद बहुत ही कम आंका गया अनुमान है) तब भी यह तो तय है कि बैंक मुश्किल से 38 प्रतिशत इकाइयों की ऋण आवश्यकताओं को ही पूरा कर पाए हैं।

अगर मोटे तौर पर अनुमान के आधार पर यह मान भी लिया जाए कि आधी इकाइयां ही ऋण लेने में रुचि रखती हैं (जो शायद बहुत ही कम आंका गया अनुमान है) तब भी यह तो तय है कि बैंक मुश्किल से 38 प्रतिशत इकाइयों की ऋण आवश्यकताओं को ही पूरा कर पाए हैं।

अगर पिछले पांच वर्षों में सार्वजनिक निजी क्षेत्र तथा विदेशी बैंकों द्वारा लघु उद्योग क्षेत्र को दी जाने वाली ऋण सहायता का निवल बैंक ऋण में भाग देखा जाए तो स्पष्ट होता है कि बैंक लघु उद्योगों को ऋण देने में उतनी रुचि नहीं दिखा रहे हैं जितनी कि कुछ वर्ष पहले दिखाते थे।

सारणी

सार्वजनिक, निजी क्षेत्र तथा विदेशी बैंकों द्वारा लघु उद्योग क्षेत्र को ऋण की उपलब्धता*

वर्ष	राशि (करोड़ रुपए)	निवल बैंक ऋण का प्रतिशत भाग
2002	62917	11.8
2003	63855	9.4
2004	71208	9.4
2005	83216	8.3
2006	101385	उपलब्ध नहीं है

*(स्रोतः सिडबी की वार्षिक रिपोर्ट 2004-05,2005-06 तथा रिज़र्व बैंक की भारत में बैंकिंग प्रवृत्ति एवं प्रगति संबंधी विभिन्न रिपोर्ट)

स्वतंत्रता प्राप्ति के समय देश की अर्थव्यवस्था व औद्योगिक स्थिति आज जैसी नहीं थी। उस समय कृषि सबसे बड़ा क्षेत्र था जिसके विकास व संवर्द्धन के लिए सारी शक्ति लगाई जाती थी। परंतु वह स्थिति धीरे-धीरे बदलती गई। गांव की ग्रामीण जनता व किसानों का कृषि से मोह भंग होने लगा तथा लोग गांव छोड़कर शहर की ओर पलायन करने लगे। कारण यह कि गांव में रोज़गार नहीं था। जीवन यापन के लिए न्यूनतम आवश्यक वस्तुओं व सुविधाओं का अभाव था। अतः पलायन जारी रहा। 1947 में ग्रामीण व शहरी जनसंख्या का अनुपात 80:20 था जो धीरे-धीरे परिवर्तित होता गया और आज वह अनुपात 72:28 का हो गया है। परिस्थिति में तेजी से परिवर्तन आने लगा और लघु तथा कुटीर या ग्रामीण उद्योग बंद होने के कगार पर आ गए। सरकार ने यह लक्षण घातक समझा तथा इसे बचाने और देश को विकसित देशों की श्रेणी में लाने एवं सकल

घरेलू उत्पाद तथा प्रति व्यक्ति आय बढ़ाने के लिए नीति संबंधी कार्रवाई प्रारंभ की। लघु और मध्यम उद्योगों के संवर्द्धन एवं इनके विकास के लिए अनेक उपाय किए गए। लघु उद्योग धीरे-धीरे अपने पैर जमाने लगे और जल्दी ही बेरोज़गारी व गरीबी से निजात दिलाने और विनिर्माण क्षेत्र को सुदृढ़ करने के लिए सुनिश्चित माध्यम के रूप में उभरने लगे। आज लघु और मध्यम उद्यम विश्वभर में बहुत ही सक्षम, अर्थक्षम तथा रोज़गार के प्रमुख स्रोत के रूप में प्रतिष्ठित हो रहे हैं।

लघु और मध्यम उद्यमों के ऋण प्रवाह को बढ़ाने के दृष्टिकोण से सितंबर 2005 में रिज़र्व बैंक ने इस क्षेत्र के अनियमित ऋण खातों हेतु एक ऋण पुनर्संरचना तंत्र की योजना तैयार की है व सभी वाणिज्यिक बैंकों को इसे लागू करने के लिए निदेश दिए गए हैं। इस योजना का लाभ वे सभी कार्पोरेट लघु और मध्यम उद्योग उठा सकते हैं जिनकी बैंक /बैंकों से संघीय ऋण व्यवस्था में कुल निधि आधारित व निधीतर आधारित ऋण की राशि 10 करोड़ रुपए से कम है।

सितंबर 2005 में ही रिज़र्व बैंक ने लघु और मध्यम उद्यमों के 10 करोड़ रुपए से कम के अनर्जक ऋणों की वसूली / निपटान हेतु एक योजना (एक बारगी निपटान योजना) भी जारी की है।

बैंकों द्वारा वित्तपोषित परंतु रुग्ण इकाइयों की स्थिति पर रिज़र्व बैंक करीबी नज़र रखता है। इनमें से आर्थिक रूप से संभाव्य इकाइयों के पुनर्वास हेतु समय-समय पर दिशा-निर्देश जारी किए जाते हैं। हाल ही में वर्ष 2005 में गठित सी. एस. मूर्ति समिति ने यह सिफ़ारिश की है कि रिज़र्व बैंक अर्थक्षमता और राहत तथा रियायत संबंधी मापदण्डों के बारे में जारी किए गए सभी दिशा निर्देश वापिस ले ले। इसके अतिरिक्त राज्यवार इकाइयों के पुनर्वास की समीक्षा हेतु क्षेत्रीय कार्यालय स्तर पर राज्य स्तरीय अंतरसंस्थागत समिति गठित की गई है।

रिज़र्व बैंक ने सभी अग्रणी बैंकों के संयोजकों को निदेश जारी किए हैं कि वे ग्रामीण विकास और स्वरोज़गार प्रशिक्षण संस्थान के समान प्रशिक्षण केंद्र खोलें। सिंडीकेट बैंक, केनरा बैंक, पंजाब नेशलन बैंक व बैंक ऑफ महाराष्ट्र ने ग्रामीण विकास और स्वरोज़गार प्रशिक्षण संस्थान के समान अनेक प्रशिक्षण केंद्र स्थापित किए हैं।

विभिन्न समितियों ने समय-समय पर विशेष लघु उद्योग शाखाएं खोलने पर ज़ोर दिया है। हाल ही में रिज़र्व बैंक ने बैंकों को निदेश दिए हैं कि हर जिले में कम से कम एक विशेष लघु उद्योग/लघु और मध्यम उद्यम शाखा खोली जाए। लघु उद्यमों को बेहतर सेवा प्रदान करने के दृष्टिकोण से सभी बैंकों को निदेश दिए गए हैं कि ऐसी शाखाएं जिनमें 60 प्रतिशत या अधिक ऋण लघु उद्योगों को दिया गया है, उन्हें विशेष लघु उद्योग/लघु और मध्यम उद्यम शाखा के रूप में वर्गीकृत किया जाए।

इस क्षेत्र को समय पर ऋण की उपलब्धता को सुनिश्चित करने के लिए बैंकों को निदेश दिए गए हैं कि वे पच्चीस हजार रुपए तक के ऋण आवेदनों का निपटारा दो सप्ताह में तथा पांच लाख रुपए तक के आवेदन पत्रों का निपटारा चार सप्ताह के भीतर किया जाए।

लघु उद्यम क्षेत्र में प्रतिभूतिकरण को बढ़ावा देने के दृष्टिकोण से 2004-05 की वार्षिक नीति वक्तव्य की मध्यावधि समीक्षा के दौरान कुछ घोषणाएं की गई हैं। यह तय किया गया है कि बैंकों द्वारा ऐसी प्रतिभूतिकृत आस्तियों में निवेश को (जो लघु उद्योगों को प्रत्यक्ष वित्त हो) लघु उद्योग को प्रत्यक्ष ऋण के बराबर माना जाएगा बशर्ते कि वे कुछ विशेष शर्तों का पालन करें।

अगस्त 2005 में वित्त मंत्री (भारत सरकार) द्वारा संसद में लघु और मध्यम उद्यमों के विकास व उन्हें ऋण की उपलब्धता को बढ़ाने हेतु एक विशेष पैकेज की घोषणा की गई है। तदनुसार रिज़र्व बैंक ने सभी बैंकों को निदेश दिए हैं कि वे अगले पांच वर्ष तक लघु और मध्यम उद्यमों को वितरित किए जाने वाले ऋण में प्रति वर्ष 20 प्रतिशत की वृद्धि करें। इसका उद्देश्य लघु उद्योग क्षेत्र को उपलब्ध ऋण को 2004-05 के 67,600 करोड़ रुपए के स्तर से दुगुना कर 2009-10 तक 1,35,200 करोड़ रुपए तक पहुंचाना है। यह बहुत महत्वाकांक्षी लक्ष्य है व सभी बैंकों को कमर कस कर इस लक्ष्य की प्राप्ति में जुटना होगा, कार्यनीति बनानी होगी, नवोन्मेष उत्पाद बाज़ार में लाने होंगे व अथक परिश्रम करना होगा। लघु और मध्यम

उद्यम क्षेत्र की असीम संभावनाओं को देखते हुए तथा वर्ष 2005-06 में लघु उद्योग क्षेत्र को ऋण प्रवाह में लगभग 21 प्रतिशत की वृद्धि को देखते हुए यह आशा की जाती है कि बैंक यह लक्ष्य प्राप्त कर सकेंगे।

उपर्युक्त पैकेज के अनुसार ही रिज़र्व बैंक ने अपने सभी क्षेत्रीय कार्यालयों में क्षेत्रीय निदेशकों की अध्यक्षता में अधिकार प्राप्त समिति का गठन किया है। राज्य स्तरीय बैंकर समिति के संयोजक, जिन बैंकों का उस राज्य में लघु और मध्यम उद्यम के ऋणों में प्रमुख हिस्सा है उनके दो वरिष्ठ अधिकारी, सिडबी के क्षेत्रीय कार्यालय का प्रतिनिधि, राज्य सरकार के उद्योग निदेशक, लघु और मध्यम उद्यम/लघु उद्यम संघ के एक या दो पदाधिकारी व राज्य वित्त निगम/ राज्य औद्योगिक विकास कार्पोरेशन के वरिष्ठ अधिकारी इस अधिकार प्राप्त समिति के सदस्य होंगे। यह समिति समय-समय पर अपनी बैठकें आयोजित करेगी जिसमें इस क्षेत्र को वित्त की उपलब्धता, रुग्ण इकाइयों के पुनर्वास में प्रगति की समीक्षा की जाएगी। यह राज्य सरकार व वित्तीय संस्थाओं के बीच समन्वय का कार्य करेगी जिससे कि इस क्षेत्र को ऋण उपलब्ध कराने में आने वाली अड़चनों को दूर किया जा सके।

इन समस्याओं से निजात पाने के लिए और साथ ही इस क्षेत्र को ऋण मिलने में सुधार लाने के लिए कई महत्वपूर्ण कदम उठाये गये हैं। ये संक्षेप में इस प्रकार हैं:

- क्लस्टरों में स्थित शाखाओं और सिडबी के बीच तालमेल के लिए एक योजना बनायी गयी है। इस योजना का नाम है **स्माल इंटरप्राइज फाइनांशियल सेंटर।** ये योजना लघु उद्योग मंत्रालय तथा बैंकिंग डिवीजन, वित्त मंत्रालय, भारत सरकार और सिडबी, आइबीए और कुछ चुने हुए बैंकों से सलाह लेने के बाद तैयार की गयी है। शुरुआत के तौर पर सिडबी ने इस तरह के 149 सेंटर खोलने का फैसला लिया है। सिडबी ने अब तक **16 बैंकों** के साथ समझौते पर हस्ताक्षर किये हैं। ये हैं : **बैंक ऑफ इंडिया, यूको बैंक, येस बैंक, बैंक ऑफ बड़ौदा, ओरियंटल बैंक ऑफ कामर्स, पंजाब नेशनल बैंक, देना बैंक, आंध्रा बैंक, इंडियन बैंक, कारपोरेशन बैंक, आईडीबीआई बैंक, इंडियन ओवरसीज बैंक, यूनियन बैंक ऑफ इंडिया, भारतीय स्टेट बैंक, स्टेट बैंक ऑफ सौराष्ट्र और फेडरल बैंक।** 31 मार्च 2007 की स्थिति के अनुसार 130.59 करोड़ रुपये की वित्तीय सहायता वाले 36 कारोबारी प्रस्ताव एसईएफसी व्यवस्था के अंतर्गत अनुमोदित किये जा चुके हैं। इनमें सिडबी ने 65.34 करोड़ रुपये के मीयादी ऋण दिये हैं। सहयोगी बैंकों ने 19.38 करोड़ रुपये के मीयादी ऋण दिये हैं और 45.87 करोड़ रुपये वर्किंग कैपिटल के जरिये दिये हैं। इतना ही नहीं, सिडबी ने एक और बड़ा काम ये किया है कि अपनी सभी 60 शाखाओं का नाम **स्माल एंटरप्राइज फाइनांशियल सेंटर** के रूप में तय किया है।

- 5 सितम्बर 2005 से सिर्फ एसएमई सेक्टर के लिए एक रेटिंग एजेंसी शुरू की गयी है। इसका नाम है **एसएमई रेटिंग एजेंसी ऑफ इंडिया** अर्थात एसएमइआरए। इस रेटिंग एजेंसी को सिडबी, डुन एंड ब्रैडस्ट्रीट, क्रेडिट इन्फार्मेशन ब्यूरो लिमिटेड तथा सरकारी क्षेत्र के 6 बैंकों ने मिल कर बनाया है । इन बैंकों के नाम हैं: बैंक ऑफ बड़ौदा, बैंक ऑफ इंडिया, केनरा बैंक, ओरियंटल बैंक ऑफ कामर्स, पंजाब नेशनल बैंक और यूनियन बैंक ऑफ इंडिया।

- **नेशनल स्माल इंडस्ट्रीज कारपोरेशन** द्वारा एक क्रेडिट रेटिंग योजना शुरू की गयी है ताकि छोटे छोटे उद्योगों को इस बात के लिए प्रोत्साहित किया जा सके कि वे अपनी क्रेडिट रेटिंग प्रतिष्ठित क्रेडिट रेटिंग एजेंसियों से करवा सकें। इससे उन्हें ऋण मिलने में मदद तो मिलेगी ही, जो संस्थाएं उन्हें ऋण देती हैं, उनके लिए भी ये अच्छी और राहत देने वाली बात होगी। एनएसआइसी द्वारा शुरू की जा रही योजना में इस बात की व्यवस्था की गयी है कि 40,000 रुपये प्रति यूनिट की अधिकतम सीमा को मानते हुए क्रेडिट रेटिंग एक्सरसाइज की लागत के 75 प्रतिशत की राशि उन लघु औद्योगिक इकाइयों को वापस दे दी जायेगी जो एक समयी यानी वन टाइम सुविधा का लाभ उठाते हैं। एनएसआइसी के जरिये Crisil,Icra,

Dun and Bradstreet, Onicra, Care तथा Fitch जैसी 6 क्रेडिट रेटिंग एजेंसियों ने लघु औद्योगिक इकाइयों की क्रेडिट रेटिंग करने के लिए सहमति दी है।

- सरकार ने छोटे और मध्यम उद्यमों के लिए ऋण बढ़ाने के लिए एक पॉलिसी पैकेज की घोषणा की थी। इस नीति की खास बातें इस प्रकार हैं:
  - बैंकों द्वारा एसएमई सेक्टर के वित्तपोषण के लिए सेल्फ टार्गेट तय करना
  - एसएमई सेक्टर को औपचारिक रूप से ऋण मिले, इसके लिए उन तक अपनी पहुंच बढ़ाने के लिए उपाय करना
  - एसएमई सेक्टर के वित्त पोषण के लिए क्लस्टर आधारित नजरिया अपनाना
  - एसएमई सेक्टर के लिए ऋण की वापसी की मीयाद बदलना और उनके लिए एक समयी यानी वन टाइम सेटलमेंट योजना बनाना
  - माइक्रो, स्माल एंड मीडियम एंटरप्राइज डेवलपमेंट एक्ट 2006 अमल में लाना।इस अधिनियम की कुछ खास बातें इस तरह हैं:
- उद्यमों का काम के हिसाब से निर्माण और सेवा देने वाले उद्यमों के रूप में वर्गीकरण किया गया है। निर्माण इकाइयों का फिर से निवेश की राशि के हिसाब से माइक्रो, स्माल, मीडियम के रूप में वर्गीकरण किया गया है और इसी तरह का वर्गीकरण सर्विस सेक्टर के लिए भी किया गया है।
- एक एपेक्स परामर्शदात्री दल (नेशनल बोर्ड) के गठन की घोषणा। लघु उद्योग मंत्रालय के मंत्री इस दल के अध्यक्ष होंगे और इसमें लाभ पाने वाले सभी वर्गों की हिस्सेदारी होगी।
- लघु और मध्यम उद्यमों द्वारा ज्ञापन भरने की क्रियाविधि की व्यवस्था इस नीति में की गयी है।
- लघु उद्योग विभाग, भारत सरकार के सचिव की अध्यक्षता में एक सलाहकार समिति का गठन किया गया है।
- देरी से होने वाले भुगतानों से संबेधित अधिनियम के प्रावधानों को और मजबूत करना।

ऊपर जो उपाय गिनाये गये हैं, वे सभी अनुसूचित वाणिज्य बैंकों को 4 अप्रैल 2007 को एक परिपत्र के जरिये सूचित किये गये हैं।

प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र को ऋण देने के संबंध में संशोधित दिशा निर्देशों को अंतिम रूप दे दिया गया है और इसका लाभ उठाने वाले सभी वर्गों के साथ विस्तार से बातचीत करने के बाद इन्हें लागू किये जाने के लिए 30 अप्रैल 2007 को सभी अनुसूचित बैंकों को सूचित कर दिया गया है।

पहचान किये गये 388 क्लस्टरों पर खास तौर पर ध्यान देना

वार्षिक नीति वक्तव्य 2007-08 के पैरा 157 में की गयी घोषणा के अनुसार सभी एसएलबीसी कन्वेनर बैंकों को 8 मई 2007 को सूचित किया गया है कि वे एसएमई सेक्टर को ऋण सुविधाएं उपलब्ध कराने के लिए अपनी संस्थागत व्यवस्थाओं की समीक्षा करें। खास तौर पर देश के विभिन्न हिस्सों में 21 राज्यों में फैले युनाइटेड नेशंस इंडस्ट्रियल डेवलपमेंट आर्गेनाइजेशन द्वारा पहचान किये गये 388 क्लस्टरों में उन्हें इस मसले पर ज्यादा ध्यान देना है।

◆

बूंद बूंद से ही दरिया बनता है

बदलते आर्थिक परिदृश्य में लघु और मध्यम उद्यमों की प्रासंगिकता

◉ डॉ. जयन्ती प्रसाद नौटियाल
मुख्य प्रबंधक,
कार्पोरेशन बैंक,मंगलूर

भारतीय अर्थव्यवस्था में हो रहे तीव्रगामी विकास को देखते हुए कई आर्थिक चिंतक यह मानने लगे हैं कि भारत जो अतीत में सोने की चिड़िया था वह फिर सोने की चिड़िया बनने वाला है। इसका आधार है ***'मैक किंसे'*** (MC Kinsay & Co.)की भारत पर तैयार की गई आर्थिक रिपोर्ट, जिसमें 2025 तक भारत की अर्थव्यवस्था में उफान के संकेत किए गए हैं। इस अध्ययन (रिपोर्ट) का नाम भी उन्होंने ***'बर्ड ऑफ गोल्ड'*** रखा है।

मैक किंसे का यह मानना है कि भारत, विश्व में मजबूत आर्थिक शक्ति के रूप में उभर रहा है। सन् 2025 तक भारत कई मापदंडों पर विश्व के विकसित देशों में गिना जाने लगेगा। मैक किंसे के भारत पर आर्थिक अध्ययन को ध्यान में रख कर भारत के कई अर्थशास्त्री यह मानने लगे हैं कि इस अवसर का फायदा उठा कर हमें विदेशी निवेश के अवसर बढ़ाकर तथा उद्योगों में विदेशी भागीदारी को प्रोत्साहित करते हुए अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के बड़े उद्योग लगाने चाहिए।

भारतीय उद्योग के विश्व में बढ़ते कदम

हाल ही में भारतीय उद्योग जगत ने विश्व में अपनी विजय पताका फहराई है व यह सिद्ध कर दिया है कि भारत कंजरों, सपेरों और ग्वालों का देश नहीं है बल्कि यह विश्व का अध्यात्मिक गुरू और विकासमान अर्थ व्यवस्था वाला देश है जो विश्व के बड़े उद्योगों को अधिग्रहण करने की क्षमता रखता है। अभी हाल ही में हुई अधिग्रहणों की श्रृंखला ने विश्व को यह दिखा दिया है कि भारतीय उद्योग जगत, विश्व के उद्योग जगत के समान ही सक्षम है तथा विदेशों में व विदेशी धरती पर भी अपनी औद्योगिक दक्षता सिद्ध कर सकता है।

उद्योग जगत की दिशा में परिवर्तन?

इन गतिविधियों से उत्साहित भारतीय अर्थशास्त्रियों का एक वर्ग जोर-शोर से विश्व पर अपनी धाक जमाने व बड़े-बड़े उद्योगों, बड़ी परियोजनाओं व विदेशों में ग्लोबल टेंडर के माध्यम से विश्व में अपना व्यापार साम्राज्य स्थापित करने पर बल दे रहा है। इन दिनों आर्थिक विकास के बारे में विश्व में हमारी छवि सुधरी है व उद्योगों हेतु अच्छा माहौल बना है। इसलिए हमारे कुछ आर्थिक विचारक यह मानते हैं कि हमें विदेशी निवेश को भारत में लाकर बड़े उद्योगों में उनकी भागीदारी से बड़े उद्योग लगाने चाहिए ताकि विश्व स्तर पर हो रही प्रतियोगिता में हम पिछड़ने न पाएं। इतना ही नहीं बल्कि हमें विदेशों में भी अपने उद्योगों को इसी प्रकार अधिग्रहण, अंतरण, अर्जन तथा भागीदारी द्वारा बढ़ाना चाहिए जैसा कि हमने हाल ही में कर दिखाया है। इन चिंतकों का मानना है कि राष्ट्रीय स्तर पर लघु तथा मध्यम या छोटे उद्योगों से ध्यान हटा कर बड़े उद्योगों पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए। प्रकारांतर से कहें तो इन विचारकों का यह मानना है कि लघु तथा मध्यम उद्योगों पर जिला स्तर पर नियंत्रण, निगरानी व विकास किया जाए तथा राज्य सरकारें व केंद्र सरकार बड़े उद्योगों पर ध्यान केंद्रित करें।

हमें विदेशी निवेश को भारत में लाकर बड़े उद्योगों में उनकी भागीदारी से बड़े उद्योग लगाने चाहिए ताकि विश्व स्तर पर हो रही प्रतियोगिता में हम पिछड़ने न पाएं। इतना ही नहीं बल्कि हमें विदेशों में भी अपने उद्योगों को इसी प्रकार अधिग्रहण, अंतरण, अर्जन तथा भागीदारी द्वारा बढ़ाना चाहिए जैसा कि हमने हाल ही में कर दिखाया है।

लघु और मध्यम उद्योग : कुछ ज्वलंत प्रश्न

भारतीय उद्योगों की दिशा में परिवर्तन क्या सचमुच जरूरी है? क्या आने वाले समय में लघु तथा मध्यम उद्योगों का महत्व कम होने जा रहा है? क्या विश्व बाज़ार में दिन प्रतिदिन बढ़ती प्रतियोगिता में ये छोटे और मध्यम उद्योग ठहर पाएंगे? क्या उद्योगों में दिशा परिवर्तन उद्योग जगत में असंतुलन तो नहीं पैदा कर देगा?

लघु एवं मध्यम उद्योग की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

लघु एवं मध्यम तथा छोटे उद्योगों का विकास आधी सदी पूर्व से होना प्रारंभ हुआ था जब 1954 में लघु उद्योग बोर्ड की स्थापना हुई थी। यद्यपि 1951 में बने औद्योगिक विकास विनियमन अधिनियम द्वारा स्वातंत्र्योत्तर औद्योगिक विकास की रूप रेखा तैयार की गई लेकिन इसमें पूंजी आधारित भारी उद्योगों पर अधिक ध्यान केंद्रित किया गया था। अतः लघु उद्योगों के लिए 1954 में बोर्ड का गठन हुआ लघु उद्योग कृषि एवं ग्रामीण उद्योगों के लिए राष्ट्र स्तर पर एक शीर्ष संगठन भी तैयार किया गया जिसे लघु उद्योग, कृषि एवं ग्रामोद्योग विकास संगठन सीडो (SIDO)का नाम दिया गया यह संगठन लघु उद्योग के अन्तर्गत ही कार्यरत था। इसके माध्यम से लघु एवं ग्रामोद्योगों का विकास किया जाता रहा।

जहाँ तक मध्यम उद्योगों के विधिक स्वरूप का प्रश्न है,यह अभी नया ही है। सन् 2006 में 'सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यम विकास' अधिनियम (अधिनियम संख्या 27 दिनांक 16.06.2006 का 27वां अधिनियम) के पारित होने के उपरांत लघु तथा मध्यम उद्योगों में भेद किया गया तथा इस अधिनियम द्वारा इनकी आर्थिक सीमा को धारा 7 द्वारा पुनः सुपरिभाषित किया गया।

सूक्ष्म, लघु तथा मध्यम उद्यम

यदि कोई प्रतिष्ठान चाहे किसी भी नाम से पुकारा जाए अर्थात सकल स्वामित्व वाला, हिंदू अविभक्त परिवार, कंपनी, उपक्रम, व्यक्तियों का समूह, सहकारी समिति, भागीदारी फर्म आदि। इस प्रकार के नाम वाले उद्योग यदि निर्दिष्ट उत्पादन या विनिर्माण से जुड़े हों तो ये निम्न सीमा के अनुसार वर्गीकृत होंगेः-

(क) सूक्ष्म उद्योग वे हैं जिनके संयंत्र व मशीनरी में निवेश 25 लाख से अधिक न हो।

(ख) लघु उद्योग वे उद्योग हैं जिनमें संयंत्र और मशीनरी में निवेश 25 लाख से अधिक हो लेकिन 5 करोड़ से अधिक न हो।

(ग) मध्यम उद्योग वे हैं जिनमें संयंत्र और मशीनरी में निवेश 5 करोड़ से अधिक हो लेकिन 10 करोड़ से अधिक न हो।

यह प्रावधान उन उद्योगों, फर्मों पर लागू होते हैं जो उत्पादन या विनिर्माण का काम करते हैं। जो फर्में या उद्योग सेवा देने का काम करते हैं उनके लिए सूक्ष्म, लघु तथा मध्यम उद्योग के रूप में वर्गीकरण निम्नवत् होगाः-

(क) सूक्ष्म उद्योगः उपकरणों में निवेश 10 लाख से अधिक न हो।

(ख) लघु उद्योगः 10 लाख से अधिक लेकिन 2 करोड़ से कम।

(ग) मध्यम उद्योगः 2 करोड़ से अधिक लेकिन 5 करोड़ से कम।

इसे तुलनात्मक रूप में इस तालिका से समझा जा सकता है।

सूक्ष्म उद्योग

उद्योग की प्रकृति	राशि की प्रकृति	न्यूनतम	अधिकतम
उत्पादन व विनिर्माण	संयंत्र और मशीनरी पर निवेश	---	25 लाख
सेवा दायी उद्योग	उपकरणों पर निवेश	---	10 लाख
लघु उद्योग			
उत्पादन व विनिर्माण	संयंत्र और मशीनरी पर निवेश	25 लाख से अधिक	5 करोड़ से कम
सेवा दायी उद्योग	उपकरणों पर निवेश	10 लाख अधिक	2 करोड़ से कम
मध्यम उद्योग			
उत्पादन व विनिर्माण	संयंत्र और मशीनरी पर निवेश	5 करोड़ से अधिक	10 करोड़ से कम
सेवा दायी उद्योग	उपकरणों पर निवेश	2 करोड़ से अधिक	50 करोड़ से कम

इस व्यय की गणना करते समय संयंत्र और मशीनरी में निवेश में, प्रदूषण नियंत्रण, अनुसंधान और विकास तथा औद्योगिक सुरक्षा जैसे उपकरणों पर किए गए व्यय को शामिल नहीं माना जाएगा। इस प्रकार हम देखते हैं कि सरकारी प्रावधानों में इन उद्योगों को कई अन्य प्रकार की छूट दी गई है।

बिलों का भुगतान तथा लघु एवं मध्यम उद्योग

सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्योगों को भुगतान संकट से बचाने के लिए उक्त अधिनियम की धारा 15 से 18 तक प्राप्यों की वसूली के लिए विशेष प्रावधान किए गए हैं तथा निर्धारित समय पर भुगतान न होने पर सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यमों से सेवा लेने या माल खरीदने वाले चूककर्ताओं को भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा घोषित बैंक दर से तीन गुना ब्याज देना होगा।

इसी प्रकार 2006 के उक्त अधिनियम में इन उद्योगों की सुरक्षा और जीवितता हेतु पुख्ता व्यवस्था की गई है। ये सभी प्रयास यही दर्शाते हैं कि सरकार इन उद्योगों के विकास के प्रति कितनी ईमानदारी से कटिबद्ध है।

लघु उद्योग विकास की समीक्षा

चूंकि लघु उद्योग को राष्ट्रीय प्राथमिकताओं में रखा गया था परंतु इसका विकास आरंभिक दौर में अपेक्षित गति से नहीं हुआ इसलिए इसके अपेक्षित विकास के लिए अनेक समितियां व अध्ययन दल गठित किए गए। इन समितियों व अध्ययन दलों की सिफारिशों से इसमें सुधार होता गया। इन सुधारों में ऋण प्रवाह सहित उत्पाद आरक्षण नीति भी शामिल थी। इसके तहत लगभग 800 प्रकार के उत्पाद केवल लघु उद्योग के लिए अभिनिर्धारित किए गए व लघु उद्योग को प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र के अन्तर्गत वर्गीकृत किया गया ताकि राष्ट्रीयकृत बैंकों को इस क्षेत्र के लिए अनिवार्य रूप से ऋण देना ही पड़े।

लघु उद्यमों की बढ़ती ताकत

पांचवें दशक से आज तक लगातार किए जा रहे प्रयासों के परिणाम स्वरूप लघु उद्यमों ने भारत की अर्थव्यवस्था में अपना महत्वपूर्ण स्थान बना लिया है। आज यह क्षेत्र कृषि क्षेत्र के बाद सबसे बड़ा रोज़गार दिलाने वाला क्षेत्र है। मोटे अनुमान से इस क्षेत्र में लगभग 3 करोड़ लोगों को रोज़गार मिल रहा है तथा निर्यात में भी इस क्षेत्र की भागीदारी लगभग 40% है। समग्र औद्योगिक उत्पादन में भी लघु उद्योगों का योगदान लगभग 42 से 45% के बीच है। आज लघु उद्योगों के तहत लगभग 8000 उत्पाद तैयार किए जा रहे हैं। अतः आज के दौर में भी लघु उद्योग अपनी खास पहचान बना चुका है। इसका अनुमान हम इस तालिका से लगा सकते हैं।

लघु उद्योगों का निष्पादन

मद	01-02	02-03	03-04	04-05	2005-06
यूनिटों की संख्या	10.5	11.0	11.4	11.9	12.3
मिलियन में रोज़गार	24.9	26.0	27.1	28.3	29.5
मिलियन में निवेश	1,54,349	1,62,317	1,70,,219	1,78,699	1,88,113
रु. करोड़ में उत्पादन मूल्य					
रु. करोड़	2,82,270	3,11,993	3,57,733	4,18,263	4,71,244
निर्यात					
रु. करोड़	71,244	86,013	97,644	उ.न.	उ.न.

टिप्पणी : अप्रैल- सितंबर 2005 के उत्पादन आंकलन
उ.न. उपलब्ध नहीं। चूंकि मध्यम उद्योग की संकल्पना सन 2006 से आरंभ हुई है अतः इसके आंकड़े अभी उपलब्ध नहीं है। स्रोत लघु उद्योग मंत्रालय, भारत सरकार

स्थायित्व का अभाव

यद्यपि लघु एवं मध्यम उद्योगों का आज भारत के आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण स्थान है, परन्तु इसकी सबसे बड़ी समस्या यह है कि इसकी जीवितता दर बहुत कम है। थोड़ी सी भी कठिनाई आने या प्रतियोगिता कठिन होने पर ये उद्यम उसी प्रकार बंद होने शुरू हो जाते हैं जिस प्रकार हवा का झोंका आते ही टिमटिमाते दीपक बुझने लगते हैं। झंझावात या तूफान से टकराने या ऐसी स्थिति में अपना अस्तित्व बनाए रखना लघु तथा मध्यम उद्योगों को भारी पड़ता है। मध्यम उद्योगों की जीवितता लघु उद्योगों की अपेक्षा अधिक लम्बी होती है। अतः इन उद्योगों के संरक्षण हेतु सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उपक्रम विकास अधिनियम 2006 में अनेक प्रावधान किए गए हैं।

लघु और मध्यम उद्योगों की प्रासंगिकता

लघु एवं मध्यम उद्योगों की प्रासंगिकता भारत में सदैव बनी रहेगी क्योंकि आर्थिक रूप से उदीयमान होते हुए भारत की अर्थव्यवस्था की रीढ़ ग्रामीण उद्योग, कृषि, लघु व मध्यम उद्योग ही हैं। इसलिए ही भारत सरकार ने केवल लघु उद्योग ही नहीं बल्कि कुटीर उद्योग, नन्हे उद्योग, सूक्ष्म उद्योग, सहकारी उद्योग जैसी संकल्पनाओं को वरीयता दी है व देती आ रही है क्योंकि भारत की आबादी, यहां के स्थानीय संसाधन, ग्रामीण

शिल्प, कारीगरी, ग्रामीण कला आदि को आगे बढ़ाने के लिए बड़े उद्योगों की नहीं बल्कि इन छोटे और मध्यम उद्योगों की जरूरत है। वस्तुतः आज से दो तीन दशक पहले जो कृषितर ग्रामीण और कुटीर उद्योग विकसित हुए थे उनमें से कुछ उद्योग आज विशाखीकृत होकर लघु एवं मध्यम श्रेणी में आ चुके हैं। इन्हीं उद्योगों को और बढ़ावा देकर इन्हें ही बड़े उद्योगों में परिणित करने से ही हम सही दिशा में आगे बढ़ पाएंगे, अन्यथा औद्योगीकरण की अंधी दौड़ में न हम अपने संसाधन बचा पाएंगे न अपनी निरंतर बढ़ती आबादी को रोज़गार दे पाएंगे और न ही धन (लाभ) का वितरण अधिकतम लोगों तक पहुंचा पाएंगे।

वस्तुतः आज से दो तीन दशक पहले जो कृषितर ग्रामीण और कुटीर उद्योग विकसित हुए थे उनमें से कुछ उद्योग आज विशाखीकृत होकर लघु एवं मध्यम श्रेणी में आ चुके हैं।

लघु व मध्यम उद्योग ही क्यों?

लघु एवं मध्यम उद्योगों से चहुंमुंखी विकास होता है तथा विकास की गति सहज और प्राकृतिक होती है। यह भारत की आर्थिक प्रगति के लिए अनुकूल है। अप्राकृतिक वृद्धि या अप्राकृतिक विकास हमेशा ही हानिकारक होता है। अतः किसी भी राष्ट्र में वे ही उद्योग सफल होते हैं जो उसके सामाजिक, सांस्कृतिक परिवेश के अनुकूल हों तथा प्राकृतिक संसाधनों व जनबल को ध्यान में रख कर स्थापित किए जाते हों।

अतः चाहे रोज़गार के अवसर उत्पन्न करने हों या ग्रामों का विकास करना हो, चाहे निर्यात हो या संसाधनों का समुचित उपयोग हो, लघु तथा मध्यम उद्यम हमेशा ही प्रासंगिक रहेंगे। इनकी प्रासंगिकता पर प्रश्न चिन्ह लगाना उचित नहीं है।

मैक किंसे के विशेष संदर्भ में लघु तथा मध्यम उद्योग

'मैक किंसे का भारत संबंधी अध्ययन' को उन्होंने **बर्ड आफ गोल्ड** अर्थात *सोने की चिड़िया* नाम दिया है। इस रिपोर्ट ने विश्व भर के अर्थ शास्त्रियों को आश्चर्य में डाल दिया है। यह रिपोर्ट वर्ष 2005 से 2025 के काल खंड को अर्थात आगामी 20 वर्षों को ध्यान में रख कर तैयार की गई है। इस अध्ययन का गंभीरता पूर्वक अध्ययन करने से स्पष्ट हो जाता है कि आने वाले समय में भारत की विकासमान अर्थ व्यवस्था में भी लघु और मध्यम उद्योगों का महत्व सर्वाधिक रहेगा। मैक किंसे के अध्ययन के कुछ बिंदुओं पर गौर करें ये बिंदु लघु एवं मध्यम उद्यमों को प्रभावित कर सकते हैं। (तालिका देखिए)

मैंक किंसे ने अपने अध्ययन में यह भी बताया है कि वंचित श्रेणी जो 2005 में 54% है यह 2025 में घटकर 22% रह जाएगी तथा उच्च मध्यम तथा उच्च वर्ग की संख्या बड़ी तेजी से बढ़ेगी।

उक्त अध्ययन के परिणाम

यद्यपि ऊपरी तौर पर देखने से लगता है कि इस अध्ययन का लघु एवं मध्यम उद्योगों से प्रत्यक्ष संबंध नहीं है परन्तु सेवा क्षेत्र एवं खपत के जो क्षेत्र और उनमें विकास के जो संकेत इस अध्ययन में दिए गए हैं प्रायः वे सभी उत्पाद लघु और मध्यम उद्योगों द्वारा ही तैयार किए जाते हैं। इस अध्ययन का सूक्ष्म अध्ययन करने पर यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि हमारी आर्थिक प्रगति का जो पैटर्न बन रहा है तथा सरकार जिस मॉडल द्वारा आर्थिक विकास चाहती है उसमें लघु एवं मध्यम उद्यमों का वर्चस्व हमेशा रहेगा यह सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है।

सरकारी नीतियां एवं लघु तथा मध्यम उद्यम

लघु तथा मध्यम उद्यमों हेतु सरकार की नीति बिल्कुल स्पष्ट है। इस क्षेत्र को ऋण दिए जाने से संबंधित आदेशों और अनुदेशों के अवलोकन से यह स्पष्ट हो जाता है कि सरकार यह चाहती है कि भारत के आर्थिक विकास में इन उद्यमों की भागीदारी सर्वाधिक रहे। इसके कई कारण हैं। सर्व प्रमुख कारण तो यह है कि इन उद्यमों में रोज़गार सृजन के अनेक अवसर उपलब्ध होते हैं साथ ही इससे जन बल पलायन पर भी रोक लगती है। साथ ही एक साथ बड़ी मात्रा में पूंजी की व्यवस्था जहां कठिन है वहीं बड़े उद्यमों में जोखिम भी बड़ा होता है जबकि लघु तथा मध्यम उद्यमों में जोखिम की मात्रा भी अनुपाततः कम होती है।

निष्कर्ष

केवल भारत ही नहीं बल्कि विश्व के अनेक देशों में

भी लघु एवं मध्यम उद्यमों को बढ़ावा दिया जा रहा है, फिर भारत जैसी आर्थिक व्यवस्था में लघु एवं मध्यम उद्यमों का विकास करना हमारे आर्थिक विकास के लिए नितांत जरूरी है। भारतीय आर्थिक परिवेश में चाहे हम किसी भी आर्थिक मॉडल को क्यों न चुने उसके केंद्र में लघु एवं मध्यम उद्यम को रखना ही होगा।

अतः निष्कर्ष के रूप में कह सकते हैं भारतीय अर्थ तंत्र में लघु एवं मध्यम उद्यमों की प्रासंगिकता सदैव बनी रहेगी।

तालिका

मैक किंसे की अध्ययन रिपोर्ट के बिंदु		सूक्ष्म एवं मध्यम उद्योगों पर प्रभाव
1.	भारत का विपुल जन बल और सेवा क्षेत्र उसकी शक्ति है	भारत के विपुल जनबल और सेवा क्षेत्र में इसकी मजबूत पकड़ को देखते हुए हमें ऐसे ही उद्योग लाभ पहुंचा सकते हैं जिनमें इन दोनों का सदुपयोग हो सके। अतः सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्योग हमारे लिए सबसे उपयोगी होंगे। बड़े उद्योगों में स्वचालन आधिक्य होने से रोजगार के अवसर सीमित हो जाते हैं।
2.	1985 में साक्षरता दर 45% थी जो 2005 में 62% हो गई है।	साक्षरता दर बढ़ने से हम नव साक्षरों को नए उद्योगों की ओर उन्मुख कर सकते हैं। सरकार द्वारा उद्योगों हेतु दी जा रही सुविधाओं की जानकारी भी इन्हें आसानी से उनकी मातृ भाषा या सरल हिंदी में दी जा सकती है।
3.	भारत में बचत दर 2005 में सकल घरेलू उत्पाद का 32.4% रही जिस की तुलना उच्च बचत वाले देशों जैसे दक्षिण कोरिया (32.8%) और जापान (26.4%) जैसे देशों से की जा सकती है।	बचत दर का विकसित देशों के समतुल्य हो जाना अर्थ व्यवस्था के सुदृढ़ीकरण का परिचायक है। इसी बचत को लघु तथा मध्यम उद्योगों की ओर मोड़ा जा सकता है।
4.	भारत में खपत सकल घरेलू उत्पाद का 62% होगी जिसकी तुलना अमेरिका (70%) जैसे विकसित देश से की जा सकती है।	खपत में वृद्धि उद्योगों हेतु उत्साहजनक संकेत होती है इससे विनिर्माण व उत्पादन दोनों में वृद्धि को प्रोत्साहन मिलता है।
5.	भारत 2025 तक विश्व का पांचवां सबसे बड़ा उपभोक्ता बाजार होगा। 1.अमेरिका 2.जापान 3.चीन 4.यू.के. 5. भारत	उपभोक्ता संस्कृति का विकास, उत्पादन एवं विनिर्माण तथा सेवा क्षेत्र को सर्वाधिक प्रोत्साहित करता है। अतः इस दृष्टि से भी लघु एवं मध्यम उद्योगों का भविष्य उज्ज्वल दिखाई दे रहा है।
6.	सकल घरेलू उत्पाद में 8.4% की वृद्धि होगी।	इस वृद्धि में सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्योगों की भागीदारी सर्वाधिक रहेगी। यह आज की उद्योग प्रवृत्ति विश्लेषण से पता लगता है।
7.	2025 में घरेलू आय के पांच वर्ग होंगे 1. वंचित श्रेणी (गरीब) वार्षिक आय रु. 90,000 2. गरीबी से थोड़ा उपर रु. 90,000 से 2 लाख 3. निम्न मध्यम वर्ग रु. 2 लाख से रु. 5 लाख 4. उच्च मध्यम वर्ग रु. 5 लाख से रु. 10 लाख 5. उच्च वर्ग रु. 10 लाख से ऊपर	इन अनुमानों से भी यह स्पष्ट है कि हमारे व्यवसाय व उद्योग जगत का स्वर्णयुग आने वाले 20 साल हैं। अतः लघु तथा मध्यम उद्योगों को अभी से अपनी स्थिति सुदृढ़ कर लेनी चाहिए ताकि 2025 तक वे मैक किंसे में बताए गए अवसरों का पूर्ण लाभ उठा सकें।

◆

ग्रामीण क्षेत्र में बैंकिंग विपणन

◉ रविकुमार शर्मा
मार्केटिंग ऑफिसर
पंजाब नैशनल बैंक, नई दिल्ली

वर्तमान दौर में हर एक संस्था जो बाज़ार का एक हिस्सा है वह नये बाज़ारों की तलाश में प्रयासरत है। इसके पीछे जो महत्वपूर्ण कारण है वह यह है कि वर्तमान बाज़ार या तो संतृप्त हो चुके हैं या उनकी वृद्धि दर बहुत ही कम है। नये बाज़ार की तलाश में आज सबकी निगाहें ग्रामीण बाज़ार की तरफ हैं। चाहे वह भौतिक वस्तुएं बनाने वाली कंपनी हो या कोई सेवा प्रदाता कंपनी जैसे वित्त सेवा प्रदाता बैंकिग संस्थान।

ग्रामीण बाज़ार क्यों?

शहरी बाज़ार संतृप्त हो चुके हैं। शहरी बाज़ारों में प्रतिस्पर्धा अधिक है और विकास की संभावनायें कम हैं। भारतवर्ष की 70% जनसंख्या आज भी गांवों में निवास करती है। भारत आज भी एक कृषिप्रधान देश है। भारतीय अर्थव्यवस्था ग्रामीण क्षेत्र पर निर्भर है। अतः कृषिप्रधान देश भारत का आधारभूत ढांचा ग्रामीण क्षेत्र पर निर्भर है। ग्रामीण क्षेत्र में यदि एक दो कंपनियों को छोड़ दें तो बहुत ही कम कंपनियों ने अपनी पैठ की है। आईटीसी, एचएलएल आदि कुछ कंपनियां हैं जो ग्रामीण बाज़ार में सफल रही हैं। परन्तु इन सभी संस्थाओं को यह जरूर समझना होगा कि ग्रामीण बाज़ार शहरी बाज़ार से भिन्न है अतः उनके लिए विशिष्ट विपणन रणनीति की आवश्यकता होगी।

इस बाज़ार की संभावनाओं को देखते हुए कुछ बड़े औद्योगिक घराने भी इस क्षेत्र में उतरने का विचार कर रहे हैं। इतने ज्यादा खिलाड़ियों के मैदान में उतरने पर विपणन और बेहतर सेवा ही सफलता का मूल मंत्र होगा।

वित्त क्षेत्र और ग्रामीण बाज़ार

यदि हम ग्रामीण बाज़ार की तरफ नज़र डालें तो ग्रामीण क्षेत्र में वित्तीय संस्थानों की उपस्थिति नगण्य रही है। यदि किसी वित्तीय संस्था की उपस्थिति ग्रामीण क्षेत्र में रही है तो वो है सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक। इस क्षेत्र में सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों का एकल साम्राज्य रहा है लेकिन लंबे कार्यकाल तक उपस्थिति के बावजूद सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों ने ग्रामीण क्षेत्र में उपस्थित संभावनाओं का पूर्ण दोहन नहीं किया है। यह वह क्षेत्र है जहां उनका वर्चस्व रहा है परन्तु जल्द ही यह वर्चस्व खत्म होने वाला है। निजी क्षेत्र के बैंक अब इस बाज़ार में सार्वजनिक क्षेत्र के बैकों को चुनौती देने जा रहे हैं। बांग्लादेश जैसे छोटे और पिछड़े देश में सूक्ष्म वित्त की सफलता ने वित्तीय संस्थाओं का ध्यान ग्रामीण क्षेत्र में उपलब्ध अपार संभावनाओं की तरफ आकृष्ट किया है। इस बाज़ार की संभावनाओं को देखते हुए कुछ बड़े औद्योगिक घराने भी इस क्षेत्र में उतरने का विचार कर रहे हैं। इतने ज्यादा खिलाड़ियों के मैदान में उतरने पर विपणन और बेहतर सेवा ही सफलता का मूल मंत्र होगा।

ग्रामीण बाज़ार और विपणन

विपणन वह हथियार है जिससे ग्रामीण क्षेत्र में बढ़ती प्रतिस्पर्धा का सामना किया जा सकता है। ग्रामीण उपभोक्ता की पसंद-नापसंद, उसका व्यवहार और गतिविधि की बेहतर समझ और विश्लेषण ही इस बाज़ार में सफलता की कुंजी है। ग्रामीण बाज़ार शहरी बाज़ार से भिन्न होता है। ग्राहक व्यवहार भी भिन्न होता है। वे संस्थाएं जो अपने आपको ग्रामीण परिवेश में ढाल पायेंगी वे ही सफल हो पायेंगी।

ग्रामीण बाज़ार

ग्रामीण बाज़ार में विपणन के मूल सिद्धांत तो समान रहते हैं पर उनका क्रियान्वयन भिन्न होता है। ग्रामीण कारक इस बाज़ार पर प्रभावी होते हैं। अतः इस बाज़ार को शहरी बाज़ार के समकक्ष रखना या तुलना करना एक भूल होगी। इस बाज़ार के विभिन्न पहलुओं को हम निम्नांकित बिन्दुओं के माध्यम से अवलोकन कर सकते हैं:-

(क) ग्रामीण बाज़ार के गुणः

उपभोक्ता जागरूकताः पहले ग्रामीण क्षेत्र का उपभोक्ता उतना जागरूक नहीं था न ही उसके पास चुनाव के अवसर होते थे। उसके पास तो सिर्फ हाब्सन्स विकल्प (Hobson's Choice) होता था अर्थात जो विकल्प उपलब्ध है चाहे या अनचाहे उसे ही

चुनना था। परन्तु टीवी, रेडियो और अखबार ने आज तस्वीर बदल दी है। आज का ग्रामीण उपभोक्ता जागरूक भी है और वह प्रश्न करना जानता है। यदि वित्तीय संस्थान यह मान कर चल रहे हैं कि ग्रामीण उपभोक्ता जागरूक नहीं है तो यह उनकी भूल है और गलत जानकारी उनके ऊपर ही पलट वार कर सकती है।

ग्राहक वफादारी: यदि हम उन कंपनियों के अनुभवों से सीख लें जो पहले से ग्रामीण बाज़ार में उपस्थित हैं तो हम यह पायेंगे कि ग्रामीण उपभोक्ता शहरी उपभोक्ता की तुलना में अधिक वफादार होता है। ग्रामीण उपभोक्ता अपने ब्रांड या संस्था जिसकी सेवा का वह उपभोग कर रहा है उसे तब तक नहीं बदलता जब तक कि उसे अत्यधिक असुविधा का सामना न करना पड़े। इसका तात्पर्य यह है कि ग्रामीण उपभोक्ता अत्यधिक वफादार होता है। अतः पुराने ग्राहकों को तोड़ना एक टेढ़ी खीर होगी परन्तु एक बार आ जाने पर बनाये रखना आसान होगा।

ग्राहक ईमानदारी: ग्रामीण क्षेत्र का उपभोक्ता ज्यादा ईमानदार होता है अतः बैंकों को अपनी वसूली करने में सहूलियत होती है। यदि परिस्थितियां प्रतिकूल न हों तो बैंकों को अपने ऋणों की वसूली की चिन्ता नहीं होगी। धोखाधड़ी और जालसाज़ी की घटनायें ग्रामीण क्षेत्रों में बहुत ही कम देखने को मिलती हैं। ग्रामीण उपभोक्ता इन परेशानियों से दूर ही रहना चाहता है क्योंकि ज्यादातर ग्रामीण अपने पुश्तैनी जमीनों और मकानों में रहते हैं और जालसाज़ी या धोखाधड़ी करके वे अन्यत्र नहीं जा सकते तथा उन्हें अपनी इज्जत खोने का डर होता है।

ग्राहक संबंध: ग्रामीण क्षेत्र में ग्राहक संबंध बहुत मायने रखते हें। ग्रामीण बाज़ार शहरी बाज़ार से इस मामले में बिल्कुल विपरीत हैं। ग्रामीण बाज़ार में व्यक्तिगत स्तर पर ग्राहक संबंध बहुत मायने रखते हैं। ग्राहक उस बैंक को ज्यादा पसंद करता हैं जहां का कर्मचारी उससे उसके बच्चों, परिवार और खेती के बारे में हालचाल पूछता है। केवल व्यापारिक स्तर पर संबंध रखने को ग्रामीण उपभोक्ता पसंद नहीं करता।

अनियमित आय एवं असमान आय वितरण : ग्रामीण बाज़ार की एक प्रमुख विशेषता है अनियमित आय। ग्रामीण उपभोक्ता कृषि पर निर्भर होता है और कृषि में फसल तैयार होने पर ही आय होती है। इसके पहले सारी लागत होती है। जमीन का असमान वितरण भी असमान आय वितरण को जन्म देता है। इस कारण से बैंकिंग व्यवस्था को यह समझना होगा कि फसल कटते समय या जुताई के समय, बीज डालते समय बैंकिंग व्यवस्था का कार्य अधिक होगा अन्यथा बाकी समय कार्यस्तर कम होगा। फसल कटने के बाद ग्रामीण क्षेत्र में धन उपलब्धता बढ़ जाती है और यही वसूली का सही समय होता है बाकी समय तो सिर्फ ऋण वितरण का होता है।

गैर तकनीकी ग्राही ग्राहक: ग्रामीण उपभोक्ता गैर तकनीकी ग्राही होता है। वह तकनीकी को देखकर दूर भागता है। जो भी तकनीकी आधारित सेवायें उसे प्रदान की जायें उसमें यह ध्यान रखना अति आवश्यक है कि वह तकनीकी रूप से इस्तेमाल में क्लिष्ट न हों। यदि सेवा तकनीकी आधारित होगी तो ग्रामीण उपभोक्ता उसे इस्तेमाल करने से हिचकेगा। मानवीय संबध और मानव आधारित सेवा ग्रामीण क्षेत्र के लिए महत्वपूर्ण है। दूसरा महत्वपूर्ण पहलू यह है कि ग्रामीण क्षेत्र का ज्यादातर उपभोक्ता अशिक्षित है और इस कारण से भी वह तकनीकी आधारित सेवा का इस्तेमाल करने में अपने आप को अक्षम पाता है। हाल ही में कुछ बैंकों ने ग्रामीण क्षेत्र के ग्राहकों के लिए बायोमेट्रिक एटीएम सेवा की शुरूआत की है।

साधारण एवं सरल उपभोक्ता: ग्रामीण उपभोक्ता सरल एवं साधारण होता है। वह उसी वस्तु, सेवा या संस्था से अपने आपको संबंधित करता है जो उसके स्तर की हो। यदि कोई बैंक शीशे से निर्मित अपने भवन में कोट पैंट वाले कर्मचारीयों को रखता है तो उनसे यह उम्मीद करना बेमानी होगा कि यह संरचना ग्रामीण ग्राहकों को अपनी तरफ आकर्षित करेगी। ग्रामीण ग्राहक ज्यादा तामझाम पसंद नहीं करता। वह तो सामान्य चीजें ही पसंद करता है।

(ख) विपणन रणनीति

स्थानीय भाषा: विपणन की सबसे प्रमुख आवश्यकता होती है ग्राहकों को आकर्षित करना तथा अपने उत्पाद या सेवा को बेचना। ग्राहक आपसे सेवा तभी खरीदेगा जब उसे सेवा स्थानीय भाषा में प्राप्त होगी। स्थानीय भाषा एवं स्थानीय संस्कृति में मिश्रित सेवा ही उनके दिलों को छू सकती है। विपणन का एक सिद्धांत यह भी कहता है कि ग्राहकों को आकर्षित करने में ही बहादुरी नहीं है अपितु बहादुरी है तो उन्हें अपने पास बनाये रखने में। संप्रेषण तभी प्रभावी होगा जबकि वह स्थानीय भाषा में

हो।

स्थानीय व्यक्तिः विपणन रणनीति का एक अहम हिस्सा यह है कि सेवा प्रदाता व्यक्ति यदि स्थानीय हो तो उसका प्रभाव भिन्न होता है। व्यक्ति उससे अपना अधिक लगाव महसूस करता है। ग्रामीण क्षेत्र में इस बात पर लोग ज्यादा बल देते हैं। स्थानीय व्यक्ति के नौकरी छोड़ कर जाने की संभावना भी कम होती है। ग्रामीण विपणन के लिये यह एक प्रभावी उपाय है कि सेवा प्रदाता व्यक्ति स्थानीय हो। स्थानीय व्यक्ति लोगों की समस्याओं को बेहतर ढंग से समझ सकता है और उनका निस्तारण कर सकता है।

व्यक्तिगत संबंध एवं मानवीय पहलू : ग्रामीण विपणन के लिए यह आवश्यक है कि तकनीकी पहलू की बजाय मानवीय पहलूओं पर ज्यादा जोर दिया जाये। यदि कोई ग्राहक ग्रामीण क्षेत्र में स्थित बैंक में आता है तो उसकी अपेक्षा त्वरित सेवा ही नहीं होती बल्कि बैंक के लोगों से मिलने की भी होती है। अतः एक सेवा प्रदाता के रूप में आपका व्यवहार अलग होना चाहिए। ग्राहक प्रबंधन में सेवा तंत्र की आवश्यकता ज्यादा होती है। बैंक कर्मियों के लिए यह आवश्यक है कि वे ग्राहक के परिवार की जानकारी रखें और समय आने पर उपयुक्त उत्पाद की सलाह दें। आक्रामक विपणन रणनीति ग्रामीण बाज़ार में प्रभावी नहीं है। यदि कोई वित्त संस्थान आक्रामक रणनीति उपयोग में लाता है तो उसे भौतिक के न्यूटन के तीसरे सिद्धांत का उदाहरण बनने से कोई नहीं रोक सकता।

ग्रामीणोन्मुखी वित्त उत्पादः यदि विपणनकर्ता यह सोचते हैं कि सभी क्षेत्रों के लिए एक ही उत्पाद प्रभावी होता है तो वे गलत हैं। ग्रामीण क्षेत्रों के लिए वित्त उत्पाद अलग होने चाहिए। ऊपर दिये गये ग्रामीण बाज़ार के गुणों को ध्यान में रखते हुए ग्रामीण बाजार के लिए उत्पाद बनाये जाने चाहिए। ऐसे ऋण उत्पाद जहां देर से किश्त अदायगी पर कोई जुर्माना न हो। ग्राहक को अपने किश्त एवं मात्रा की आजादी हो। ऐसे उत्पाद उनके लिए अनुकूल हैं। सूखा पड़ने पर ऋण को बिना अतिरिक्त जुर्माना भार के अगले वर्ष या बाकी वर्षों में समावेशित करना। सूक्ष्म वित्त आधारित उत्पाद भी ग्रामीण क्षेत्रों में बहुत प्रभावी हैं।

स्थानीकृत विपणन रणनीति : ग्रामीण बाज़ार के लिए यह आवश्यक है कि विपणन रणनीति का विकास स्थानीय कारकों को ध्यान में रखकर किया जाये। क्षेत्र में ग्राहक की किस्म, उनकी आय, आयु, लिंग, जमीन की उर्वरता, फसल चक्र, पट्टा धन, बाजार आदि को ध्यान में रख कर विपणन रणनीति का विकास ही सफलता की कुंजी है।

इसके आगे हम यदि जायें तो यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि वित्त सेवा प्रदाता को उस ग्रामीण बाजार में जहां वह कार्यरत है उनका निश (Niche) विशेषज्ञ बनना होगा और निश मार्केटिंग की रणनीति अपनानी होगी। तभी वह स्थानीय संस्कृति, लोकाचार के अनुसार अपने उत्पाद विकसित कर सकेगा। उसकी खासियत यह होती है कि वह अपने स्थानीय बाज़ार के रग-रग से वाकिफ होता है और बाह्य प्रतिस्पर्धा से उस बाज़ार में हर मामले में आगे होता है।

मूल्य नियंत्रण : ग्रामीण उपभोक्ता दाम अर्थात मूल्य के प्रति बहुत संवेदनशील होता है। यदि हम विपणन के चार स्तंभ (Ps) की बात करें तो उनमें से एक है मूल्य। शहरी उपभोक्ता सेवा और मूल्य दोनों पर ध्यान देता है और बेहतर सेवा के लिए वह अतिरिक्त मूल्य अदा कर सकता है लेकिन ग्रामीण उपभोक्ता शायद ही अतिरिक्त सेवा के लिए अधिक मूल्य अदा करे। विपणन में मूल्य का इस्तेमाल सावधानीपूर्वक किया जाना चाहिए।

प्रचार माध्यम : विपणन का अहम हिस्सा है प्रचार। जो प्रचार माध्यम शहरी उपभोक्ता के लिए लागू हैं वे ग्रामीण उपभोक्ता के लिए नहीं हैं। ग्रामीण उपभोक्ता के लिए प्रभावी टीवी चैनल दूरदर्शन, रेडियो पर आकाशवाणी है और अखबार में स्थानीय अखबार है। नाटक और स्थानीय बाजार, साप्ताहिक हाट प्रचार के लिए अच्छे माध्यम हो सकते हैं। स्थानीय सांस्कृतिक कार्यक्रमों में भाग लेकर बैंक अपने उत्पादों का प्रचार कर सकते हैं। ग्रामीण विपणन सतही तौर पर तो आसान लगता है परन्तु यह समझना अति आवश्यक है कि ग्रामीण उपभोक्ता की जरूरतें अलग है और उनका गलत आंकलन संस्था के लिए हानिकारक साबित हो सकता है और एक सही कदम सफलता के द्वार खोल सकता है। सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के साथ यह एक सकारात्मक पहलू है कि वे ग्रामीण क्षेत्र में पहले से उपस्थित हैं और ग्रामीण उपभोक्ता सरकारी तंत्र पर ज्यादा विश्वास करता है। इस कारण से यदि सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक सही समय पर पहल करें और प्रभावी विपणन तंत्र विकसित करें तो उन्हें सफलता जल्दी मिलेगी।

ग्रामीण बैंकिंग और बैंक एश्योरेन्स

◉ डॉ. सुबोध कुमार
एवं
हरीश चन्द्र रतूड़ी
हे.नं.ब. गढ़वाल विश्वविद्यालय

देश में बीमा बहुत उज्ज्वल भविष्य वाला व्यवसाय माना जा रहा है। बीमा कम्पनियों ने वितरण माध्यमों की तलाश शुरू की तब सबसे पहले बैंकों के साथ करार किये। बैंकिंग और बीमा व्यवसाय के सम्मिलन को 'बैंक एश्योरेन्स' संज्ञा दी गयी। प्रारम्भ में, बैंक एश्योरेन्स के रेफरल मॉडल को अपनाया गया लेकिन यह मॉडल अपनी कतिपय सीमाओं के कारण हमारे यहाँ सफल नहीं रहा। इसके बाद, कॉरपोरेट एजेन्सी मॉडल चलन में आया और इसे पर्याप्त लोकप्रियता मिली। सरकारी और निजी, दोनों क्षेत्रों में बैंक और बीमा संस्थाओं में गठबन्धन किये गए जिनके तहत बैंकों में बीमा उत्पाद विक्रय किये जा रहे हैं। निजी बीमा कम्पनियों ने सरकारी बैंकों को कॉरपोरेट एजेन्सी दी क्योंकि सरकारी बैंकों के पास बड़ा शाखा तन्त्र है। इस समय अनुसूचित बैंकों की 66970 शाखाएं हैं, इनमें 32080 ग्रामीण शाखायें और 15018 अर्धशहरी क्षेत्र की शाखायें सम्मिलित हैं । यहाँ चिन्ता की बात यह है कि शोध अध्ययन संकेत करते हैं कि हमारे सार्वजनिक बैंकों में ग्राहक सेवा गुणवत्ता की स्थिति संतोषजनक नहीं है। ऐसी स्थिति में, बीमा सेवाओं का विपणन और संचालन ऐसे आउटलेट से करना बहुत फलदायी नहीं हो सकता। बीमा में सेवा से पूर्व और विपणन के बाद दोनों ही दशाओं में विशिष्ट सेवा सम्बन्ध प्रबन्धन की जरूरत रहती है। निजी फोन कम्पनियाँ ग्राहक सेवा पर काफी ध्यान केंद्रीत कर रही हैं। साथ ही, ये कम्पनियाँ नवीनतम टैक्नॉलॉजी सम्पन्न हैं, यहाँ सीआरएम साफ्टवेअर का उपयोग किया जाता है। जब कोई उपभोक्ता एअरटेल कस्टमर सर्विस से कुछ जानकारी लेता है तो अन्त में उत्तरदाता पूछता है कि आप उसके उत्तर से संतुष्ट हैं अथवा नहीं। ग्राहक की संतुष्टि न होने की दशा में वह एक बार पुनः प्रयास करेगा और असफलता की स्थिति में दूसरे सम्बद्ध नम्बर उपलब्ध करायेगा। इतना ही नहीं, इसके बाद आपको एक एसएमएस मिलेगा कि आप अभी हुए हमारे संवाद से संतुष्ट हैं अथवा नहीं, अन्यथा हमारे उच्च अधिकारी से अमुक नम्बर पर बात कर लें । संतुष्टि की स्थिति में भी वह प्रत्युत्तर का आग्रह करते हैं । रिजर्व बैंक ने वित्तीय समावेशन (financial inclusion) अवधारणा का सूत्रपात किया है जिसके अन्तर्गत वित्तीय सेवाओं को आधारभूत आवश्यकताओं के रूप में स्वीकार किया गया है । बैंकों पर 'नो फ्रिल्स एकाउण्ट' खोलने सम्बन्धी अनिवार्यता लागू की गई है । यह, ग्रामीण बैंकिंग का एक पक्ष है । दूसरा पक्ष है, निजी बैंक, ग्रामीण क्षेत्र को व्यावसायिक रणनीति के तहत लाभदायक अवसर के रूप में चिन्हांकित कर रहे हैं । आईसीआईसीआई बैंक ने ग्रामीण और अर्ध शहरी आबादी में खाता खोलने के लिए न्यूनतम राशि 500 रूपये प्रस्तावित की है, जबकि अभी तक बैंक में खाता खोलने के लिए न्यूनतम राशि 5000 रूपये है । इस समय आईसीआईसीआई बैंक की उपस्थिति 135 जिलों में है, इनमें से 80 जिलों में यह योजना प्रारम्भ की जा रही है । योजना के संचालन के लिए प्रस्तावित जिलों में माइक्रो फाइनेन्स संस्थाओं, सेल्फ हेल्प ग्रुप, स्वयंसेवी संगठनों, चीनी मिलों और अन्य उद्योगों की सहायता ली जायेगी। आईसीआईसीआई बैंक देश के प्रत्येक जिला मुख्यालय पर शाखा खोलने लिये प्रयासरत है। बैंक ने रिज़र्व बैंक के पास अपनी 4000 शाखायें खोलने के लिए आवेदन किया है। बैंक की इन सभी शहरी और ग्रामीण शाखाओं का उपयोग सहयोगी बीमा कम्पनी आईसीआईसीआई प्रूडेन्शियल के उत्पादों की बिक्री के लिये भी हो सकता है । अतः इस शाखा विस्तार से बैंक एश्योरेन्स के क्षेत्र में महत्वपूर्ण वृद्धि दर्ज होगी।

> ग्रामीण विकास अब केवल सरकार का विषय नहीं अपितु व्यवसाय जगत का आश्रय बन चुका है । विविध उद्योग इस तथ्य को पहचान चुके हैं कि आने वाले वर्षों में लाभदायकता का क्षेत्र भारतीय गाँव बनेंगे।

ग्रामीण विकास अब केवल सरकार का विषय नहीं अपितु व्यवसाय जगत का आश्रय बन चुका है । विविध उद्योग इस तथ्य को पहचान चुके हैं कि आने वाले वर्षों में लाभदायकता का क्षेत्र भारतीय गाँव बनेंगे। गाँवों में वस्तुओं और सेवाओं की

माँग में वृद्धि दर शहरों की तुलना में पाँच गुना ज्यादा है। ग्रामीण क्षेत्र अनेकानेक सेवाओं और सुविधाओं से वंचित है। उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ है। साथ ही, उपभोक्तावाद ने उन्हें अपने प्रभाव में लिया है। फलतः, ग्रामीण जीवन स्तर में सकारात्मक बदलाव हुए हैं। अब, शहर और गाँव में अन्तर कम होने की ओर है। शेयर बाजार भी ग्रामीण क्षेत्र में पहुँचने की तैयारी कर रहा है लेकिन इसमें अभी थोड़ा समय लगेगा। सैल्यूलर कम्पनियों का विस्तार इस दृष्टि से बहुत तेजी से हुआ है। मोबाईल फोन के उपभोक्ता वर्ग का बहुत बड़ा साम्राज्य स्थापित हो चुका है।

बैंक एश्योरेन्स के क्षेत्र में यह बड़ी चुनौती के रूप में प्रकट होने वाली स्थिति है कि मोबाइल सेवा कम्पनियाँ बीमा व्यावसायियों के साथ अपने वितरण ढाँचे का उपयोग करने के लिये सहमत हो जायें। इस क्षेत्र में शुरूआत हो चुकी है। भारती एक्सा लाइफ इंश्योरेन्स कम्पनी ने एअरटेल के साथ अनुबन्ध किया है कि एअरटेल के कस्टमर केअर पर फोन करके भारती एक्सा लाइफ इंश्योरेन्स के उत्पादों की जानकारी हासिल की जा सकेगी और कम्पनी के रिलेशनशिप सेन्टर पर बीमा सेवायें भी उपलब्ध होंगी। फोन सेवा प्रदाता और बीमादाता के मध्य इस सम्बन्ध को नाम दिया गया - 'टेल्क एश्योरेन्स'।

किन्तु, इस रास्ते में बड़ी बाधा है - बीमा विपणन के लिए प्रशिक्षित स्टाफ का अभाव। बैंक अधिकारी को भी आईआरडीए द्वारा निर्धारित बीमा विषयक प्रशिक्षण दिया जाना जरूरी है, उसके बाद ही उसे पॉलिसी विक्रय के लिए अधिकृत किया जा सकता है।

स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया ने बीमा व्यवसाय में प्रवेश के लिए अपनी सहयोगी कम्पनी, 'एसबीआई लाईफ' स्थापित की है। इसी क्रम में ओरिएण्टल बैंक ऑफ कामर्स ने भी विदेशी सहयोग से जीवन बीमा व्यवसाय करने के लिए पृथक कम्पनी के समामेलन के लिए आवेदन किया है। ओरिएण्टल बैंक ऑफ कामर्स की शाखाओं पर ओरिएण्टल इश्योरेंस कम्पनी के सामान्य बीमा के उत्पाद पहले ही विक्रय किये जा रहे हैं । दूसरे कई बड़े बैंक भी समान पैटर्न पर जीवन बीमा कम्पनी प्रारम्भ करने की तैयारी में हैं। बैंकों का इस प्रकार बीमा व्यवसाय में संलग्न होना भी बैंक एश्योरेन्स का ही एक दूसरा मॉडल है। यह जोखिम आधारित मॉडल है इसमें एक बैंक अपनी सभी शाखाओं का उपयोग बीमा बिक्री के लिए कर सकता है । किन्तु, इस रास्ते में बड़ी बाधा है - बीमा विपणन के लिए प्रशिक्षित स्टाफ का अभाव। बैंक अधिकारी को भी आईआरडीए द्वारा निर्धारित बीमा विषयक प्रशिक्षण दिया जाना जरूरी है, उसके बाद ही उसे पॉलिसी विक्रय के लिए अधिकृत किया जा सकता है। ट्रेनिंग सम्बन्धी नियमों के बारे में इन्शोरेंस काउन्सिल की ओर से आईआरडीए से आग्रह किया गया है कि बीमादाताओं को फ्लेक्सिबल विकल्प दिया जाना हितकर होगा, जिसमें बीमादाता अपने स्टाफ की जरूरत के मुताबिक कम अथवा अधिक अवधि की ट्रेनिंग आयोजित कर सके।

बैंक द्वारा अपनी बीमा कम्पनी की स्थापना करने पर सभी शाखायें बीमा विक्रय केन्द्र के रूप में उपलब्ध हो जाती हैं। पिछली कई वर्षों से बैंकों में एक चलन प्रारम्भ हुआ - एटीएम का साझा उपयोग। इस प्रकार बीमा विक्रय के प्रयोजन से कुछ बैंक परस्पर समझौता कर सकते हैं कि उनकी शाखाओं पर दूसरे बैंक की सहयोगी बीमा कम्पनी की पॉलिसियाँ बेची जायेंगी। बैंकों के मध्य ऐसे समझौते बीमा प्रसार को तीव्र गति देने में बहुत सहायक होंगे साथ ही यह गतिविधि बैंकों की लाभदायकता की स्थिति पर अनुकूल प्रभाव उत्पन्न करेगी।

उदारीकरण के प्रारम्भ में, यह आशंका व्यक्त की गई थी कि ग्रामीण जनता और ग्रामीण बैंकिंग उपेक्षित हो जायेंगे। यह बात एक अर्थ में सही उतरी क्योंकि बैंकों ने अपनी अलाभप्रद शाखाओं को बन्द करना प्रारम्भ कर दिया। बाद में भी, हानि में चल रही शाखाओं को बन्द करना एक निश्चित व्यावसायिक रणनीतिक उपाय के रूप में स्वीकार कर लिया गया और व्यवहार में लाया जाने लगा। अब दूसरे तथ्यों पर दृष्टि डालें - बैंकों की कुल जमा का आधा हिस्सा गाँवों से आता है; ग्रामीण बैंकिंग को सम्भाव्य बाजार के रूप में स्वीकृति मिली; रिज़र्व बैंक ने वित्तीय सेवाओं को आवश्यक सेवाओं के रूप में मान्यता देकर वित्तीय समावेशन (Financial Inclusion) के लिए दिशा निर्देश निश्चित किये; 'नो-फ्रिल्स' खाते जैसे प्रयोग शुरू हुये; सम्पूर्ण कॉरपोरेट जगत ग्रामीण अर्थ व्यवस्था के लिए व्यावसायिक रणनीति बनाने में व्यस्त हुआ; इन बातों का परिणाम यह हुआ है कि गाँव और ग्रामीण उपेक्षित होने के बजाय 'लाइफ टाईम' में आ गये। अतः सरकारी और निजी दोनों उद्यमियों की कारोबारी गतिविधि के केन्द्रो में ग्रामीण

बाजार स्थापित हो गये। पिछले पांच वर्षों में ग्रामीण बैंकिंग के स्वरूप में परिवर्तन हुआ, वहाँ नई संस्थाओं - एनजीओ, माइक्रो फाइनेन्स संस्थान, स्वयं सहायता समूह और सामाजिक संगठनों का प्रवेश हुआ। इस प्रकार ग्रामीण बैंकिंग ने नया आकार लेना शुरू किया और यह नवसृजित ग्रामीण बैंकिंग संरचना क्रमशः परिपक्वता की ओर अग्रेसर होती दिखाई दे रही है। भारतीय ग्रामीण बैंकिंग पुनः परिभाषित हो रही है, जिस क्षेत्र को दायित्व के रूप में मान्यता प्राप्त थी अब उसे अधिक लाभप्रद अवसर के रूप में स्वीकृति मिल चुकी है।

बैंक एश्योरेन्स : स्वॉट विश्लेषण

अधिमान	अवसर
बीमा उत्पादों की जटिलता की समझ और परख	बैंक के फीस आधारित लाभ में वृद्धि का अवसर
रोअर बाजार आधारिता	कम्प्यूटराईजेशन आदि के कारण बैंक
विनियोगपरक बीमा प्लान्स की प्रचुरता	के मानव संसाधन आधिक्य का सदुपयोग
पाँच दशकों से अर्जित विश्वास और साखा की धरोहर	बैंक के शाखा नेट वर्क और इन्फ्रास्ट्रक्चर कर दोहरा उपयोग
बैंकिंग और बीमा दोनों ही वित्तीय सेवायें हैं	ग्राहक को बैंकिंग और बीमा दोनों सेवायें एक ही काउण्टर पर देकर आकर्षित करना
बैंक एश्योरेन्स संसार के प्रमुख देशों में पहले से परीक्षित अवधारणा एवं परम्परा	उत्पाद श्रृंखला का विस्तार एवं विविधीकरण

न्यूनतायें	चुनौतियाँ
दूरस्थ ग्रामीण एवं सुदूर अंचलों में पहुँच नहीं	सहयोगी संस्था की न्यून ग्राहक सेवा गुणवत्ता का प्रतिकूल प्रभाव
बीमा ग्राहक के लिये बैंक की शाखा में उपस्थिति अनिवार्य	ग्रामीण आर्थिक संरचना का पूर्व अध्ययन और विश्लेषण अपेक्षित
बीमा के लिये अपेक्षित 'आग्रह' का अभाव	भारत में बैंक एश्योरेन्स के विभिन्न मॉडल परीक्षण अधीन
बैंक एश्योरेन्स अन्य लागत-लाभ विश्लेषणकिया जाना है,	जीवन बीमा का अत्यधिक दीर्घ आवधिक अनुबन्ध होना
अनुमानित लागत/लाभ मेंअन्तर हो	सकता है
प्रत्येक बैंक का सीमित ग्राहक आधार	बैंकों मे बीमा के लिये अपेक्षित विपणन कौशल का अभाव

बीमा क्षेत्र में सुधार के लिए गठित मल्होत्रा कमेटी ने 1994 में जारी अपनी रिपोर्ट में ग्रामीण बीमा के प्रसार की आवश्यकता को स्वीकार किया और इसके लिये व्यवहारिक उपाय भी बताये । ग्रामीण क्षेत्र में बीमा के विस्तार के लिये कमेटी द्वारा दिये गए प्रमुख सुझाव थे -

- ग्रामीण जनता की आवश्यकता के अनुरूप विशेष प्रकार की पॉलिसियाँ जारी की जानी चाहिए । अवधिक पॉलिसियाँ सुरक्षा की दृष्टि से सबसे सस्ती है। अतः टर्म प्लान्स के प्रचलन को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।
- डाक विभाग द्वारा संचालित जीवन बीमा सुविधा ग्रामीण जनता को भी दी जाये और इसके लिए ग्रामीण क्षेत्रों के डाकघरों में प्रशिक्षित कर्मचारी नियुक्त किये जायें।
- राज्य सहकारी संगठनों को जीवन बीमा कारोबार के लिए सहकारी समितियाँ स्थापित करनी चाहिए जो ग्रामीण क्षेत्रों में कारोबार चलायें।
- ग्रामीण बीमा के विक्रय के लिए पंचायतों, महिला मण्डलों, सहकारी समितियों, स्वयंसेवी संगठनों आदि को प्रोत्साहित किया जाये।
- यदि जीवन बीमा कारोबार के लिये किसी कम्पनी को अनुमति दी जाती है तब यह शर्त लगाई जाये की एक निर्धारित सीमा तक उसे ग्रामीण बीमा करना अनिवार्य होगा।

समिति द्वारा दिये गये अधिकांश सुझावों पर अमल हुआ है। इसके मूल में दो कारण सक्रिय हैं - पहला, सरकारी नीति और दूसरा, जो और भी अधिक प्रभावी घटक बन रहा है, वह है, व्यावसायिक रणनीतिक दृष्टिकोण। कमेटी के सुझावों में उल्लेखनीय बात यह है कि इसमें ग्रामीण बीमा के लिये नए वितरण माध्यमों का आश्रय लेने की सलाह दी गई है। वर्ष 2000 में निजीकरण के बाद, बीमा व्यवसाय में वितरण माध्यमों का विकास हुआ है। टेक्नॉलॉजी के विस्तार के साथ इस दिशा में बहुत तेजी से परिवर्तन और प्रगति हुई है। नए बीमादाता नए डिस्ट्रीब्यूशन चैनलों का उपयोग कर रहे हैं।

'वितरण माध्यम की अनुपलब्धता' बीमा के ग्रामीण क्षेत्र में प्रसार के मार्ग में सबसे बड़ी अड़चन रही है। भारतीय जीवन बीमा निगम के शाखा कार्यालय केवल शहरों तक सीमित हैं। निगम की असफलताओं में प्रमुखता से उल्लेख किया जाता है कि पचास वर्षों में भी गावों में बीमा आच्छादन नहीं किया जा

सका। निगम के एजेण्ट्स की भी सीमित संख्या है। यद्यपि निगम ने ग्रामीण अभिकर्ताओं के लिए अतिरिक्त पारिश्रमिक की व्यवस्था की है किन्तु इन सबका कोई महत्वपूर्ण प्रभाव नहीं बन सका। मल्होत्रा कमेटी की रिपोर्ट में सिफारिश की गई थी कि गांवों में जीवन बीमा पोस्ट ऑफिस के माध्यम से कराया जाये।

इस दिशा में किंचित प्रयास हुए भी किन्तु उनका परिमाण और प्रभाव नगण्य रहा है। मल्टी कॉमोडिटी एक्सचेंज ने पोस्ट ऑफिस के साथ करार किया है कि किसान कॉमोडिटी मार्केट के पोस्ट ऑफिस के माध्यम से निवेश कर सकेंगे। पोस्ट ऑफिस के 'पोस्टल लाइफ इन्शोरेन्स के नाम से अपने भी बीमा उत्पाद हैं। लेकिन, ये सीमित उपभोक्ता वर्ग के लिए प्रस्तावित बीमा योजनायें हैं और यह अत्यन्त संकुचित उत्पाद श्रृंखला है। पोस्ट ऑफिस भी अपने बीमा व्यवसाय के विस्तार के लिए प्रयासरत है। विभाग ने भी अभिकर्ता नियुक्त करना प्रारम्भ किया है जबकि पूर्व में यह कार्य विभागीय स्टाफ द्वारा ही सम्पादित किया जाता था। ऐसी स्थिति में जब वितरण माध्यमों की खोज का कार्य बहुत तत्परता और तीव्रता से चल रहा है और वितरण माध्यमों का उद्‌भव और विकास हो रहा है, पोस्ट ऑफिस की शाखायें भी बेहतर विकल्प हो सकते हैं। यदि जीवन बीमा के लिए उपयुक्तता नहीं बनती है तो भी साधारण बीमा के लिये पोस्ट ऑफिस अवश्य श्रेष्ठ माध्यम सिद्ध होगा। अन्य जिन प्रयोगों पर कार्य चल रहा है, वे परीक्षण अवस्था में हैं। बीमा कम्पनियों का फोन कम्पनियों के साथ गठबन्धन का उदाहरण अगर लिया जाये तो इस मार्ग में कई बाधायें और आशंकाये हैं। दोनों ही ऑपरेटर्स की बाजार में कोई लम्बी स्टैंडिंग नहीं है। दोनों सहयोगियों की बाजार में उपस्थिति पाँच वर्ष से अधिक नहीं है। अतः बीमा जैसे व्यवसाय के लिए अपेक्षित विश्वसनीयता हासिल करने में इन्हें अभी समय लग सकता है।

टैल्क एश्योरेन्स : स्वॉट विश्लेषण

अधिमान	अवसर
घर बैठे बिना बैंक/बीमा कार्यालय गए, बीमा सुविधा उपलब्ध, विक्रयकर्ता घर आकर सम्पर्क कर लेंगे	बीस करोड़ से भी अधिक फोन उपभोक्ता ग्राहक आधार संतुष्ट ग्राहकों को और विक्रय करना सरल
सॉफ्टवेअर आधारित उत्कृष्टतम ग्राहक सम्बन्ध प्रबन्धन व्यवहार	रिलेशनशिप सेन्टर एवं वितरण तन्त्र का दोहरा उपयोग
ग्रामीण जनसंख्या तक पहुँच	ग्राहकों को फोन और बीमा सेवायें एक ही स्थान पर मिलने का आकर्षण
वितरण नेटवर्क की विद्यमानता	फोन उपभोक्ता अपने सेवा प्रदाता के सतत् सम्पर्क में रहता है, रिचार्ज आदि के लिये
अधुनातम टैक्नॉलॉजी सम्पन्नता और विस्तृत अनुभव	बजार में प्रतिस्पर्धाजनित अवसरों की उपलब्धता
न्यूनतायें	**चुनौतियाँ**
बीमा के जटिल उत्पादों के लिये विशिष्ट विशेषज्ञता की जरूरत	बीमा के लिये प्रशिक्षित एवं दक्ष पेशेवरों की कमी
बीमा विक्रय के लिए व्यक्तिगत 'आग्रह' की अपेक्षा	टैल्क एश्योरेन्स अभी परीक्षित मॉडल और परम्परा नहीं है
बाजार में फोन कम्पनियों का परिचय/ स्टैंडिंग मात्र पाँच-सात साल पुराना	वास्तविक परिणामों का अध्ययन भविष्य में ही संभव
वित्तीय बाजार के अनुशासन एवं बीमा नियमन से अनभिज्ञता	बीमा के लिये विशेषज्ञ विपणन कौशल की आवश्यकता
लागत-लाभ विश्लेषण किया जाना वांछित	आईआरडीए के नियमों के अनुपालन में मुश्किल

बीमा उद्योग में निजी उद्यमियों के प्रवेश की अनुमति मिलने के बाद, क्रान्तिकारी परिवर्तन घटित हो रहे हैं । निजी कम्पनियों के व्यवसाय में आने से पूर्व बीमा व्यवसाय के लिए एकमात्र माध्यम था - 'बीमा एजेण्ट'। नई कम्पनियों के लिए यह साधन बहुत उपयुक्त नहीं था और न ही पर्याप्त था । इसलिये उन्होंने नए चैनल की तलाश शुरू की और परिणामस्वरूप इस क्षेत्र में नवीन आउट लेट का उद्‌भव हुआ । शहरी क्षेत्र में बीमा व्यवसायी, बैंकों के साथ मिलकर बीमा उत्पाद विक्रय करने लगे। बीमा और बैंकिंग सेवाओं का सम्मिलन - 'बैंक एश्योरेन्स' विकसित देशों में पहले ही सफल हो चुका है । किन्तु, ग्रामीण क्षेत्रों में और विशेष रूप से सुदूर क्षेत्रों में सहयोगी बैंकों की उपस्थिति न होने के कारण गाँव में बीमा विक्रय के लिये दूसरे साधनों की आवश्यकता महसूस हुई । वित्तीय और सामाजिक संस्थाओं के साथ साझेदारी के अतिरिक्त

एक नया चलन अस्तित्व में आया - 'सैल्यूलर कम्पनियों के साथ बीमा कम्पनियों का सहयोग'।

ग्रामीण बीमा के लिये प्रयुक्त वितरण माध्यम

परम्परागत एवं बैंक एश्योरेन्स चैनल	नवीन और प्रस्तावित चैनल
बीमा शाखायें	टेल्क एश्योरेंस/सैल फोन की कस्टमर
एजेण्ट	केअर सर्विस
सरकारी क्षेत्र के बैंक	रिलेशनशिप सेंटर
निजी क्षेत्र के बैंक	बीमा शॉप/शॉप एश्योरेन्स कॉन्सैप्ट,
आवश्यक खाद्यवस्तु भंडार	
क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक	माइक्रो फाइनेन्स इन्सटीट्यूटस
सहकारी बैंक	स्वयंसेवी संगठन (एनजीओ)
पोस्ट ऑफिस	स्वयं सहायता समूह
स्कूल एवं कॉलेज	महिला ग्राम संगठन
सरकारी प्रतिष्ठान	सहकारी संस्थायें/समितियाँ
	औद्योगिक प्रतिष्ठान, चीनी मिलें

ग्रामीण बीमा प्रसार में बाधायें

- ✓ प्रशिक्षित स्टाफ की कमी
- ✓ ग्रामीण परिवेश का वैशिष्ट्य
- ✓ विज्ञापन माध्यमों का अभाव
- ✓ टेलीफोन, फैक्स आदि संचार सेवाओं की कमी
- ✓ ग्रामीण आर्थिक संरचना के स्वरूप और प्रवृत्ति का विश्लेषण
- ✓ वितरण माध्यमों की अनुपलब्धता

सेल फोन कम्पनी के कार्मिक बीमा उत्पादों के विषय में उस तरह परिचित नहीं हो सकते जिस तरह बैंक कर्मी सामान्य रूप से होते हैं। बैंकर, बीमा और विनियोग क्षेत्र की समझ और विशेषज्ञता सहज रूप से रखते हैं। बीमा उत्पाद सर्वथा जटिल होते है, इनकी विशिष्टताओं को समझना आसान नहीं होता है। इस दृष्टि से एक सुझाव हो सकता है कि फोन कम्पनियाँ अपने स्टाफ को आईआरडीए द्वारा निर्धारित प्रशिक्षण अथवा दूसरा कोई समकक्ष अथवा सम्यक् प्रशिक्षण दे दें।

समग्र ग्रामीण परिवेश बीमा व्यवसाय के लिये बहुत अनुकूल नहीं है ग्रामीण वर्ग में प्रायः जीवन बीमा के प्रति उतनी रूचि और जागरूकता नहीं है जितनी शहरी क्षेत्रों में हैं। इसके अनेक कारण है जैसे, शिक्षा स्तर की न्यूनता, बीमा सुविधाओं से अनभिज्ञता, बीमा के प्रति उदासीनता, संयुक्त परिवार व्यवस्था और ईश्वर आस्था, परम्परागत रीति-रिवाजों से मार्गदर्शित होना, ग्रामीण ग्राहकों के मंद एवं विलम्बित निर्णय। ग्रामीण परिवेश में परिवर्तन का कार्य 'ग्राहक शिक्षा' के माध्यम से हो सकता है। ग्राहक शिक्षा को उपभोक्ता कानून और व्यावसायिक नैतिक मानदण्ड अनिवार्यता के रूप में स्थापित कर रहे हैं। इसका एक सकारात्मक प्रभाव व्यावसायिक संवर्धन भी होगा। विज्ञापन को विपणन का प्रमुख अस्त्र माना जाता है, किन्तु गाँवों में संचार माध्यमों के अभाव में विज्ञापन के उपाय किये जाना दुष्कर है क्योंकि वहाँ शहरों जैसे होर्डिंग्स लगाना न सम्भव है और न उपयुक्त, केबल आपरेटर्स के माध्यम से टीवी पर होने वाला प्रचार साधन भी वहां उपलब्ध नहीं होता। बीमा ऐसा विषय है कि इसकी योजना मात्र पम्पलेट वितरण से नहीं बेची जा सकती है । वर्तमान में, बीमा उत्पाद श्रृंखला में कई प्रकार की स्कीमें हैं जो एक दूसरे से बिल्कुल पृथक और भिन्न प्रयोजन वाली है। एक ओर, बीमा की नई पॉलिसीज शेयर बाजार से सम्बद्ध है, दूसरी ओर पेन्शन प्लान हैं जो प्रकृति में एक दूसरे के विपरीत हैं। साथ ही, दुर्घटना बीमा और शुद्ध जीवन बीमा का ग्रामीण बाजार खुदरा क्षेत्र के लिए बड़ा आकर्षण बना हुआ है। विभिन्न सांख्यिकीय समंकों के आधार पर अनुमान व्यक्त किये गये हैं कि अब आर्थिक केन्द्र देश के गाँव बनेगें । इसी कम में, बैंकिंग और बीमा सेवाओं के लिए भी अर्द्धशहरी और ग्रामीण इलाकों में बहुत अधिक सम्भावनाओं का आंकलन किया गया है। इसी आधार पर सरकारी और निजी, दोनों क्षेत्र के उद्यमी गाँवों में अपना व्यवसाय स्थापित करना प्रारम्भ कर चुके हैं। यहाँ पर ध्यान देना जरूरी है कि गाँवों की बाजार संरचना और शहरों की बाजार संरचना में अन्तर है। साथ ही, ग्रामीण बाजार में भी कई श्रेणियाँ हैं, जैसे - अत्यधिक दूर दराज के क्षेत्रों में सामाजिक ढाँचे में भी भिन्नता है। ग्रामीण विपणन में प्रवेश करते समय क्षेत्र विशेष के परिवेश और संरचना पर ध्यान देना जरूरी होगा । ग्रामीण बाजार में जिन व्यवसायों को सफलता मिली है उनका अध्ययन भी उपयोगी होगा।

शुद्ध बीमा योजनायें वे हैं जिनकी अपेक्षाकृत कीमत बहुत कम होती है किन्तु लाभ भी उसी प्रकार सीमित है। अतः

बीमा के प्रसार के लिए कम्पनियों को व्यक्तिगत कन्वेसिंग का ही सहारा लेना होगा। एफएमसीजी की मार्केटिंग में 'विडियो और व्हील्स' का उपयोग बहुत प्रभावी रहा है और विपणन विशेषज्ञ प्रमुखता से सिफारिश करते हैं। इसमें, प्रचार के लिए एक *वैन* का उपयोग किया जाता है, और विडियो फिल्म को माध्यम बनाया जाता है। इसके साथही वहाँ विक्रय स्टॉल की भी व्यवस्था होती है। यह प्रयोग बीमा को लोकप्रिय बनाने में भी सहायक हो सकता है।

बीमा व्यवसाय चलाने के लिए कार्य क्षेत्र में समुचित संचार साधनों का होना जरूरी होता है। बीमा कारोबार में प्रस्ताव पत्र एकत्र करने से लेकर, पालिसी निर्गत करने, समय-समय पर प्रीमियम अनुस्मारक देने और दावा भुगतान आदि सभी अवसरों पर संचार माध्यमों पर निर्भरता बनी रहती है। ग्रामीण क्षेत्रों में अभी त्वरित डाक सेवा, सक्षम टेलीफोन व्यवस्था और फैक्स जैसे साधनों का अभाव है। ऐसी स्थिति में, बीमा पॉलिसियों का विक्रय और सही बीमा सेवाएं दे पाना बहुत कठिन होगा। यहां यह बात बहुत रोचक है कि अगर फोन कम्पनी ही बीमा कारोबार में सहभागी बन जाती है तब संचार सुविधा बाधक के स्थान पर बीमा व्यवसाय में प्रेरक का स्थान ले सकती है। बीमा और फोन सेवा का सम्मिलन अर्थ व्यवस्था में बहुत महत्वपूर्ण घटना है। इस गठबन्धन में बीमा कारोबार को वितरण माध्यम की खोज का समाधान मिलता है। **किन्तु, मोबाइल फोन सेवा और बीमा उत्पादों की प्रकृति में साम्य का अभाव है। अतः इस प्रयोग के सफल होने के मार्ग में बाधाएं भी हैं क्योंकि बीमा में विक्रय से पूर्व, विक्रय के दौरान और विक्रय के बाद भी व्यक्तिगत परामर्श, मार्गदर्शन और सहायता जरूरी होती है।**

ग्रामीण बाजार का विश्लेषण किये जाने की आवश्यकता है । सुदूर ग्रामीण और शहरों के समीपवर्ती गावों में उपभोक्ता के व्यवहार में उल्लेखनीय अन्तर मिलता है। इसके अलावा, दुर्गम स्थलों पर ग्राहक मनोविज्ञान और भी अधिक पृथक होगा। भौगोलिक भिन्नता के साथ ही आर्थिक संरचना का स्वरूप भी अलग मिलेगा। आय के स्तर के अलावा आय के भिन्न स्रोत भी माँग को प्रभावित करते हैं। यहाँ ग्रामीण जनसंख्या की व्यावसायिक संरचना को समझना उपयोगी होगा। एक अध्ययन में उल्लेख किया गया है कि वर्ष 2001 में जीवन बीमा निगम ने अपनी 55 प्रतिशत पालिसियाँ ग्रामीण क्षेत्रों में बेचीं। इसके अलावा ग्रामीण क्षेत्र में जारी होने वाले किसान क्रेडिट कार्ड की संख्या शहरी क्षेत्र में जारी क्रेडिट कार्ड की संख्या से काफी अधिक है। यह बात सही है कि ग्रामीण भारत की बढ़ती हुई क्रय शक्ति ने कार्पोरेट जगत के लिए आशाजनक सम्भावनाएं बना दी हैं किन्तु संमकों के सावधानी पूर्वक अध्ययन और विश्लेषण की जरूरत है। तभी कोई उद्योग अपने उत्पादों के भावी बाजार की सही छवि बना सकता है।

> ग्रामीण विपणन में प्रवेश करते समय क्षेत्र विशेष के परिवेश और संरचना पर ध्यान देना जरूरी होगा। ग्रामीण बाजार में जिन व्यवसायों को सफलता मिली है उनका अध्ययन भी उपयोगी होगा।

शहरों के मुकाबले देश में ग्रामीण इलाकों में बीमा कारोबार का विस्तार तेजी से हो रहा है । बीमा के प्रति ग्रामीण जनसंख्या में जागरूकता आयी है । **एसोचेम** द्वारा कराये गये एक अध्ययन में उल्लेख किया गया है कि निजी कम्पनियों के आने से बीमा क्षेत्र का परिदृश्य बदल गया है। सर्वे के अनुसार तीन वर्षों में भारत के बीमा कारोबार में 500 फीसदी की वृद्धि हो सकती है। वर्तमान में यह व्यवसाय 10 अरब डालर का है जिसके तीन वर्षों में बढ़कर 60 अरब डालर तक पहुंचने की उम्मीद की जा रही है। इसमें ग्रामीण भारत की भागीदारी 58 प्रतिशत से अधिक होगी। यह अनुमान लगाया जा रहा है कि वर्ष 2010 तक ग्रामीण क्षेत्र में बीमा कम्पनियों का कारोबार 35 अरब डालर का हो जायेगा। इसमें जीवन बीमा व्यवसाय 20 अरब डालर होगा और साधारण बीमा 15 अरब डालर होगा। उल्लेखनीय बात यह है कि इस समयावधि में शहरी क्षेत्र में केवल 25 अरब डालर का बीमा व्यापार होगा जो कि ग्रामीण क्षेत्र की तुलना में 10 अरब डालर कम होगा। चैम्बर की मान्यता है कि गाँव में बीमा व्यापार का और अधिक विस्तार हो सकता है, अगर सुदूर ग्रामीण इलाकों में बीमा कम्पनियों की पहुँच पूरी तरह से हो पाती हैं। कम्पनियाँ ग्रामीणों की जीवन शैली और उनकी जरूरतों के आधार पर नई योजनायें बाजार में उतार रही हैं। यही कारण है कि गाँववासी बीमा के प्रति सचेत हो रहे हैं। दूसरी ओर,

शहरों में बीमा के प्रति अपेक्षाकृत कम उत्सुकता रहती है क्योंकि वहाँ नागरिकों के पास प्रोपर्टी, शेयर बाजार और बैंक में विनियोग करने जैसे दूसरे विकल्प उपलब्ध हैं। निजी बीमा कम्पनी, बजाज एलियांज ने गरीबों के लिए तीन विशेष योजनायें प्रस्तुत की हैं - अल्प निवेश, बीमा कवच और जन विकास। अल्पनिवेश का न्यूनतम प्रीमियम 15 रूपये मासिक है । इन योजनाओं का बीमा मूल्य 5000 से लेकर 50000 रूपये तक है इनकी बीमा अवधि 10 से 15 वर्ष और प्रस्ताव की आयु 18 से 60 वर्ष मे मध्य निर्धारित है। कम्पनी की रणनीति है कि इन योजनाओं के वितरण के लिए एनजीओ, माइक्रो फाइनेंस संस्थाओं, सामाजिक संगठनों और स्वयं सेवी संस्थाओं का आश्रय लिया जाये। दूसरी निजी बीमा कम्पनी, अवीवा ने ग्रामीण व्यवसाय करने के लिए सहकारी बैंकों, सहकारी संस्थानों, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों और माइक्रो फाइनेंस संस्थानों के साथ साझेदारी की है। बजाज एलायंज लाइफ इन्शोरेंस ने 12 सहकारी बैंकों के साथ समझौता किया है जिसके अन्तर्गत ग्रामीण जनता को बीमा उत्पाद उपलब्ध कराए जायेंगे। भारती एक्सा लाइफ इन्शोरेंस गावों मे शॉप एश्योरेंस कॉन्सेपट लागू कर अपने बीमा उत्पाद बेचने की योजना बना रही है जिससे लोगों को परचून की दुकान पर बीमा पालिसी मिल सकेगी। भारत में बीमा उद्योग और विशेषकर ग्रामीण बीमा का भविष्य बहुत उज्ज्वल माना जा रहा है। विश्व की अधिकांश बीमा कंम्पनियां भारतीय बाजार में प्रवेश कर चुकी हैं। इस समय बीमा क्षेत्र में 16 कम्पनियाँ काम कर रही है जबकि वर्ष 2000 से पहले भारतीय जीवन बीमा निगम का एकाधिकार था। अधिकांश बीमा कम्पनियाँ ग्रामीण क्षेत्रों के अनुकूल पालिसियाँ बनाने की दिशा में काम कर रही हैं और उनके वितरण के लिए स्थानीय नेटवर्क स्थापित करने का प्रयास कर रही हैं। यह कार्य अभी प्रारम्भिक अवस्था में हैं। किसानों की ऋणग्रस्तता सम्बन्धी एक अध्ययन के बाद भारतीय रिज़र्व बैंक ने निर्णय लिया है कि क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की भूमिका का विस्तार किया जाये जिससे ग्रामीण बैंकिंग की समस्याओं पर नियन्त्रण रखा जा सके । इस उद्देश्य के लिए क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों को कुछ प्रोत्साहन दिये जाने का भी प्रस्ताव विचाराधीन है। इस तरह, क्षेत्रीय बैंकों की भूमिका बढ़ने पर ग्रामीण बीमा के लिये भी इन बैंकों की उपयुक्तता और अधिक हो जायेगी। कुछ जीवन बीमा कम्पनियों ने क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के साथ समझौते किये हैं जिनमें बीमा उत्पादों का विक्रय बैंक शाखाओं के माध्यम से होना है।

> बैंक इस विकल्प का भी उपयोग अधिक आसानी और दक्षता से करने की स्थिति में है क्योंकि यह दुकानदार बैंक के सम्पर्क में पहले से हैं और बैंक, अपने ग्राहक की आर्थिक स्थिति और वित्तीय चरित्र से परिचित रहता है। बैंक एन्श्योरेन्स के रूप में बैंकों के पास अपरिमित सम्भावनायें उपलब्ध हैं।

'भारत गांव में बसता है' यह उक्ति अब कार्पोरेट जगत के लिए आदर्श वाक्य बन गयी है। यही कारण है कि टूथपेस्ट और शैम्पू बनाने वाली कम्पनियों से लेकर अत्याधुनिक अस्पताल बनाने वाली कम्पनियों ने गांवों की राह पकड़ ली है। ग्रामीण क्षेत्रों में बढ़ रही समृद्धि और प्रति व्यक्ति आय में लगातार हो रही बढ़ोतरी ने भारतीय कम्पनियों को बाध्य कर दिया कि वे अपनी विपणन रणनीति में दूर-दराज गाँवों में रहने वाले व्यक्ति की इच्छा, अपेक्षा और जरूरतों का ध्यान रखें। आइटीसी पहली कंपनी है जिसने गांव में ही गांववालों की जरूरत के मुताबिक छोटे शॉपिंग माल खोलने पर विचार किया है। एफएमसीजी कम्पनी गोदरेज 'गोदरेज आधार' के नाम से गांवों में 1000 दुकानों की श्रृंखला खोलने जा रही है, जिसमें बीज, खाद, रोजाना इस्तेमाल की चीजें मिलेंगी । टाटा समूह ने 'टाटा किसान संसार' के नाम से इसी प्रकार की दुकान श्रृंखला शुरू की है। उत्पादन करने वाली कम्पनियों के अलावा, शेयर्स का कारोबार करने वाले बड़े ब्रोकर और म्यूचुअल फन्ड्स को भी ग्रामीण जनसंख्या में बड़ी सम्भावनायें दिखाई देने लगी हैं। एनएसएसओ द्वारा प्रकाशित एक सर्वेक्षण से यह संकेत मिलते हैं कि ग्रामीण जनसंख्या की आय की स्थिति में सुधार हुआ हैं। साथ ही, सर्वेक्षण में यह भी निष्कर्ष दिया गया है कि उदारीकरण के बाद उपभोक्तावादी संस्कृति ने अपना प्रभाव जमाया है। मल्टी कॉमोडिटी एक्सचेंज ने डाक विभाग के साथ मिलकर देश भर में ग्रामीण सुविधा केन्द्र खोलने की योजना बनाई है, इनके माध्यम से ग्रामीणों को कॉमोडिटी बाजार में निवेश करने के लिए प्रेरित किया जायेगा ताकि कॉमोडिटी मार्केट में उछाल का लाभ उन्हें भी पहुँच सके।

विगत कुछ वर्षों में बैंकों की सम्बद्धता स्वयं सहायता समूह, माइक्रो फाइनेंस संस्थाओं, गैर सरकारी संगठनों (एनजीओ), स्वयं सहायता समूहों जैसे संगठनों से हुई है। बैंक इन संगठनों के माध्यम से व्यवसाय कर रहे हैं। कृषि वित्त और किसान क्रेडिट कार्ड के सन्दर्भ में इस प्रकार की संस्थाओं की प्रमुख भूमिका रही है। यहाँ उल्लेखनीय यह है कि इन सभी एजेन्सीज को बीमा उत्पादों के वितरण चैनल के रूप में भी चिन्हांकित किया जा रहा है। निजी बीमा कम्पनियों ने क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों और सहकारी बैंकों के साथ अनुबन्ध किये हैं। विपणन में पहल करने वाले विक्रेता को एक अतिरिक्त लाभ मिल जाता है। अतः नये साधनों के प्रयोग में जो पहले शुरुआत करेगा उसे कुछ बढ़त हासिल होगी। बैंक, इस संगठन समूह से पहले से व्यवहार कर रहे हैं। उन्हें अपनी उत्पाद श्रृंखला में बीमा पॉलिसीज को जगह देनी है। इससे उनकी फीस आधारित आय में तुरन्त इजाफा हो जायेगा।

सूक्ष्म वित्त के अपने फायदे हैं, यह कम जोखिम वाला क्षेत्र है । एक अध्ययन में प्रकाशित हुआ कि निर्धन महिलाओं को दिये गये ऋण खातों में वित्तीय अनुशासन श्रेष्ठ कोटि का रहा। अभी तक जो क्षेत्र समस्यापरक आंके जाते थे, उन्हें अब सम्भावना क्षेत्र के तौर पर रूपान्तरित किया जा रहा है। बीमा कम्पनियों ने गैर परम्परागत साधनों का प्रयोग पॉलिसियों के विक्रय के लिए प्रारम्भ कर दिया है। इसमें परचून की दुकान पर पॉलिसी उपलब्ध कराने का विकल्प भी सम्मिलित है। यहाँ रोचक बात यह है कि बैंक इस विकल्प का भी उपयोग अधिक आसानी और दक्षता से करने की स्थिति में है क्योंकि यह दुकानदार बैंक के सम्पर्क में पहले से हैं और बैंक, अपने ग्राहक की आर्थिक स्थिति और वित्तीय चरित्र से परिचित रहता है। बैंक एन्श्योरेन्स के रूप में बैंकों के पास अपरिमित सम्भावनायें उपलब्ध हैं। बस, आवश्यकता है कि अवसर का युक्तिपरक पूर्ण विदोहन किया जाय। बीमा व्यवसाय के मार्ग में सबसे बड़ी बाधा है - विपणन माध्यमों की न्यूनता। शहरों के मुकाबले गाँवों में यह समस्या अधिक जटिल है । ग्रामीण अंगों में विद्यमान संभावनाओं की ओर आकर्षित होते हुए निजी कम्पनियों ने डिस्ट्रीब्यूशन चैनल के विकास के लिए काम शुरू कर दिया है। बीमा में 'शॉप कान्सेपट' और 'टेल्क एन्श्योरेन्स' जैसे प्रयोगों का श्रेय निजी कम्पनियों को ही दिया जायेगा । बीमा माध्यमों के विकास में निजी कम्पनियों का योगदान महत्वपूर्ण है किन्तु इन नये विकल्पों का बेहतर संरक्षण और अनुप्रयोग करने में बैंक अधिक समर्थ हैं। जहां तक बैंक के ग्राहक हैं, चाहे वह परचून दुकान का स्वामी हो, अथवा फोन उपभोक्ता, बैंक दक्षता से उन्हें बीमा उत्पाद विक्रय कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त स्वयं सहायता समूह और गैर सरकारी संगठन भी अनिवार्य रूप से बैंक के खातेदार होते हैं। सभी संस्थायें भी बीमा व्यवसाय में बैंक एन्श्योरेन्स के लिए मध्यस्थ की भूमिका बखूबी निर्वाह कर सकती है। इसी प्रकार अनेक पेन्शन भोगी हैं जो बैंक से पेन्शन लेते हैं। पेन्शनर्स के लिए भी स्वास्थ्य बीमा आदि कतिपय विशिष्ट बीमा उत्पाद है, जिनकी बिक्री उन्हें सहजता से की जा सकती है। बैंकिंग में पेन्शनर्स वर्ग को सुरक्षित और लाभप्रद व्यावसायिक अवसर के रूप में उपयोग किया जा रहा है। इस अवसर का दोहरा लाभ उठाया जा सकता है, यदि इन्हें उपयुक्त बीमा सेवा भी प्रदान की जाये। बैंक नवसृजित बीमा वितरण माध्यमों का प्रयोग कम लागत और कम प्रयास करके अधिक अच्छे ढंग से करने की स्थिति में हैं। वित्तीय क्षेत्रों में बैंकों की कई दशकों की अर्जित साख, विश्वसनीयता और विशेषज्ञता है।

◆

बीमा एक आग्रह है

वित्तीय समावेशन एवं लघु बीमा

विजय प्रकाश श्रीवास्तव
संकाय-सदस्य
बैंक ऑफ इंडिया, भोपाल

बैंकिंग की भांति भारत में बीमा उद्योग में भी तेजी से परिवर्तन हो रहे हैं। 1950 में देश में बीमा उद्योग का राष्ट्रीयकरण कर दिया गया था। मल्होत्रा समिति की 1993 में दी गई रिपोर्ट में बीमा उद्योग में उदारीकरण की सिफारिश की गई। बीमा विनियामक और विकास प्राधिकरण अधिनियम 1999 के लागू होने के बाद बीमा कारोबार को निजी क्षेत्र के लिए खोल दिया गया।

आबादी के लिहाज से भारत भले ही दुनिया का दूसरा बड़ा देश हो लेकिन विश्व के जीवन बीमा कारोबार में भारत का हिस्सा सिर्फ .66 प्रतिशत है। इससे जाहिर होता है कि इस कारोबार में मौजूद संभावनाओं का पूरा लाभ नहीं उठाया गया है। विभिन्न अनुमानों के अनुसार देश में बीमा योग्य जनसंख्या के केवल 20 प्रतिशत का बीमा कराया गया है। आबादी का बहुसंख्यक हिस्सा अभी भी बीमा की पहुँच से बाहर है।

लघु वित्त जहां समाज के अल्प आय वर्ग को साधन उपलब्ध कराता है वहीं लघु बीमा के माध्यम से उन्हें सुरक्षा प्रदान की जा सकती है। इसी दृष्टि से वित्तीय समावेशन के लिए अब लघु वित्त की महत्ता को भी स्वीकार कर लिया गया है।

भारतीय अर्थव्यवस्था इस समय गतिशीलता के एक नए दौर में हैं। भारत के सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) में रिकार्ड वृद्धि दर दर्ज की गई है और देश में एक तकनीकी क्रांति भी आई हुई है। भारतीय अर्थव्यवस्था इस समय दुनिया की सबसे तेजी से विकसित हो रही अर्थव्यवस्थाओं में से एक है। हमारी अर्थव्यवस्था में इस जीवंतता की तरफ पूरी दुनिया का ध्यान है। देश में समृद्धि निश्चित रूप से बढ़ रही है लेकिन गरीबी कम करने में देश ज्यादा प्रगति नहीं कर पाया है। समृद्धि के बीच गरीबी की यह स्थिति हमारे नीति निर्माताओं के लिए चिंता का विषय बनी हुई है। देश की आबादी का दो तिहाई से अधिक हिस्सा गांवों में निवास करता है, जो बुनियादी या मूलभूत सुविधाओं की दृष्टि से महानगरों एवं शहरों से काफी पीछे हैं। लेकिन गरीबी सिर्फ गांवों में देखने को नहीं मिलती। महानगरों, बड़े शहरों एवं कस्बाई इलाकों में भी गरीब बड़ी संख्या में मौजूद हैं।

स्वतंत्रता के बाद से भारत ने आर्थिक विकास का लम्बा रास्ता तय किया है लेकिन मौजूदा हालात यही दर्शाते हैं कि आर्थिक विकास गरीबी उन्मूलन की गारंटी नहीं है। अब इस वास्तविकता को महसूस किया जा रहा है कि गरीबी की समस्या को दूर करने एवं आर्थिक विषमताओं को कम करने हेतु अब तक किए गए संगठित एवं असंगठित प्रयास पर्याप्त नहीं रहे हैं। यह धारणा भी जोर पकड़ती जा रही है कि विकास के लाभों को निचले स्तर तक पहुंचाना जरूरी है और ऐसा किए बगैर भारत को विकसित देशों की श्रेणी में ला पाना कठिन होगा।

देश की गरीब एवं वंचित आबादी को वित्तीय सेवाओं के दायरे में लाने के लिए वित्तीय समावेशन को एक कारगर उपाय के रूप में देखा जा रहा है। भारत सरकार एवं भारतीय रिज़र्व बैंक दोनों के द्वारा पिछले कुछ समय से वित्तीय समावेशन पर काफी जोर दिया जा रहा है। वित्तीय समावेशन के लिए लघु वित्त को एक महत्वपूर्ण साधन के रूप में मान्यता मिल चुकी है। लघु वित्त जहां समाज के अल्प आय वर्ग को साधन उपलब्ध कराता है वहीं लघु बीमा के माध्यम से उन्हें सुरक्षा प्रदान की जा सकती है। इसी दृष्टि से वित्तीय समावेशन के लिए अब लघु वित्त की महत्ता को भी स्वीकार कर लिया गया है।

बीमा कंपनियां अपनी योजनाओं के दायरे में उच्च एवं मध्यम वर्ग को शामिल करने के प्रयासों में पहले से जुटी रही हैं पर अब उनका ध्यान साधनहीन एवं गरीब लोगों पर भी है। लघु बीमा इसी वर्ग के लिए है। लघु वित्त की भांति लघु बीमा भी असंगठित क्षेत्र के लोगों के लिए है।

कुछ ही वर्षों पहले तक बीमा को असंगठित क्षेत्र में कार्यरत लोगों के लिए उपलब्ध विकल्प नहीं माना जाता था। असंगठित क्षेत्र के किसान, खेतिहर मजदूर, दिहाड़ी श्रमिक

आदि आते हैं जो निरक्षरता, अज्ञानता एवं अपने अनियमित रोज़गार आदि के कारण अपने को संगठित नहीं कर पाते जिससे बहुत से मामलों में उनके व्यक्तिगत एवं सामूहिक हितों की सुरक्षा नहीं हो पाती।

गरीब लोगों के लिए बीमा प्रीमियम के भुगतान में कठिनाई आना स्वाभाविक है। हालांकि उनकी संख्या के अनुसार वे बाज़ार का एक बड़ा हिस्सा बन सकते हैं परतु उनकी कमज़ोर आर्थिक स्थिति के कारण बीमा कंपनियों ने इस वर्ग पर ध्यान नहीं दिया। शहरी आबादी की तुलना में ग्रामीण आबादी से बीमा सेवाओं की दूरी ज्यादा है।

परन्तु अब इस दूरी को कम करने की कोशिश हो रही है। इस कोशिश में सरकार, लघु वित्त एजेंसियों, गैर-सरकारी संगठनों के साथ बीमा कंपनियां तथा बीमा विनियामक और विकास प्राधिकरण भी शामिल हैं।

लघु बीमा की व्याख्या

सच कहा जाय तो लघु बीमा की अवधारणा नयी है और इस कारण से इसके लिए संदर्भ जुटा पाना मुश्किल है। लघु बीमा स्वास्थ्य, जीवन या संपत्ति बीमा का वह रूप है जिसमें अल्प योगदान पर बीमा सुरक्षा प्रदान की जाती है। सुरक्षा सीमित या व्यापक हो सकती है। लघु बीमा समाज के कमजोर वर्ग को जोखिमों से समूह आधारित सुरक्षा प्रदान करता है। लघु बीमा की और परिभाषाएं भी दी गई हैं परंतु सभी परिभाषाओं में निर्धन वर्ग को बीमा सुविधाएं उपलब्ध कराने की बात कही गई है। लघु बीमा में जीवन एवं संपत्ति दोनों हेतु बीमा योग्य जोखिमों के लिए सुरक्षा प्रदान करना शामिल है। लघु बीमा की एक खास बात यह है कि यह व्यक्तियों को सुरक्षा प्रदान करने के साथ-साथ लघु वित्त संस्थाओं के जोखिमों को भी कम करने के लिए उपयोग में लाया जाता है।

गरीब लोग ऋण जीवन यापन एवं जीवन स्तर में सुधार के लिए लेते हैं। ऋण से उत्पादक कार्य शुरू कर वे अपनी आय में वृद्धि कर सकते हैं एवं वाजिब आकस्मिक जरूरतों को पूरा कर सकते हैं। प्राकृतिक आपदाओं से गरीब लोगों का नुकसान अधिक होता है। उन्हें दुर्घटना, बीमारी, मौसम आदि की मार भी झेलनी होती है जो उनकी मुसीबतों को और बढ़ा देती हैं। इस वर्ग के अधिकांश लोगों को यह पता नहीं होता है कि जीवन में आने वाली इन कठोर मुसीबतों के असर को कम करने के लिए बीमा एक साधन या विकल्प के रूप में मौजूद है।

इन हालातों में हम लघु वित्त एवं लघु बीमा की उपयोगिता को बखूबी समझ सकते हैं। लघु वित्त से जहां गरीब वर्ग को आय बढ़ाने का अवसर मिलेगा वहीं लघु बीमा आकस्मिक मुश्किलों के समय सुरक्षा तंत्र उपलब्ध कराएगा। ऐसा माना जाने लगा है कि निर्धन लोगों के जीवन में आने वाली विभिन्न जोखिमों को ध्यान में रख कर लागू लघु बीमा उपायों से भारत जैसे विकासशील देश में जहां शासन की ओर से नागरिकों को सामाजिक सुरक्षा प्रदान करने की कोई स्थापित व्यवस्था नहीं है। आर्थिक, सामाजिक उत्थान को आगे बढ़ाने में मदद मिलेगी।

बीमा विनियामक और विकास प्राधिकरण की पहल

लघु बीमा को मान्यता देते हुए बीमा विनियामक और विकास प्राधिकरण ने वर्ष 2005 में इस हेतु दिशानिर्देश जारी किए जिसको बीमा विनियामक और विकास प्राधिकरण (लघुबीमा) विनियमावली, 2005 के नाम से जाना जाता है। इन विनियमों में बीमा कंपनियों को लघु बीमा सेवाएं प्रदान करने की अनुमति दी गई है। जीवन बीमा कंपनियां जीवन लघु बीमा एवं सामान्य बीमा कंपनियां लघु सामान्य बीमा हेतु योजनाएं शुरू कर सकती हैं। साथ ही एक जीवन बीमा कंपनी सामान्य बीमा कंपनी के साथ मिल जुल कर जीवन बीमा के साथ सामान्य लघु बीमा सेवा भी उपलब्ध करा सकती है। इसी प्रकार की अनुमति सामान्य बीमा कंपनियों को जीवन बीमा उपलब्ध कराने के लिए भी है।

इस विनियमावली में लघु बीमा योजनाओं के वितरण हेतु लघु बीमा अभिकर्ता भी नियुक्त करने का प्रावधान है। गैर-सरकारी संगठन (एनजीओ), स्वयं सहायता समूह एवं लघु वित्त संस्थाएं अभिकर्ता के रूप में कार्य कर सकती हैं। लघु बीमा अभिकर्ताओं हेतु एक आचरण संहिता बनायी गयी है। एक लघु बीमा अभिकर्ता एक से अधिक जीवन बीमा कंपनी और एक से अधिक सामान्य बीमा कंपनी के लिए कार्य नहीं कर सकता । बीमा कंपनी द्वारा अभिकर्ताओं को प्रशिक्षण दिया जाना अनिवार्य

है। यह प्रशिक्षण स्थानीय भाषा में दिया जाना चाहिए।

लघु बीमा को दो अलग-अलग दृष्टिकोणों से मान्यता मिली हुई है। इन दृष्टिकोणों के आधार पर लघु बीमा के महत्व एवं उपादेयता को समझा जा सकता है।

सामाजिक दृष्टिकोण

दुनिया बेशक कहाँ से कहाँ पहुँच गई हो गरीबी एवं सामाजिक अलगाव से दुनिया को मुक्ति नहीं मिल पाई है। विकसित देशों तक को इस समस्या का सामना करना पड़ रहा है परन्तु विकासशील एवं अल्प विकसित देशों के लिए यह और भी बड़ी चुनौती है। सरकारों, सामाजिक संगठनों एवं डोनर एजेंसियों सभी के द्वारा इस चुनौती की गंभीरता को महसूस किया जा रहा है एवं इससे निबटने के उपाय किए जा रहे हैं।

लघु वित्त अब वित्तीय सेवाओं का समुच्चय बनता जा रहा है जिसमें बचत व ऋण के साथ बीमा भी शामिल है। लघु बीमा गरीबों के जीवन में स्थिरता लाता है एवं इसके साथ उन्हें ऋण देने वालों के जोखिमों को भी कम करता है।

जोखिम का सामना किसी को भी करना पड़ सकता है परन्तु गरीब परिवार जोखिमों के प्रति ज्यादा संवेदनशील होते हैं एवं उनमें जोखिमों का सामना करने का सामर्थ्य भी कम होता है। गरीबों को ऋण एवं बचत की सुविधा उन्हें जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं के लिए आश्वस्त कर सकती है। बीमा की सामाजिक एवं आर्थिक सुरक्षा उनमें विश्वास उत्पन्न करने में सहायक है। एक प्रकार से देखा जाय तो अनौपचारिक अर्थव्यवस्था में एवं असंगठित क्षेत्र की आबादी के लिए आय की क्षति, आर्थिक नुकसानों, प्राकृतिक आपदाओं, बीमारी, दुर्घटना एवं मृत्यु जैसी घटनाओं के लिए बेहतर जोखिम सुरक्षा चाहिए। इस आबादी के लिए औपचारिक तथा अनौपचारिक दोनों प्रकार की जोखिम प्रबंधन प्रणाली को मजबूत करने की जरूरत है।

सरकारें लघु बीमा उत्पादों के लिए उपदान अर्थात सब्सिडी उपलब्ध करा कर इसमें महत्वपूर्ण योगदान दे सकती हैं। विनियामक की भूमिका यहां यह सुनिश्चित करने की होगी कि इस हेतु प्रावधानों को उदार बनाया जाये ताकि संबंधित वर्ग तक योजनाओं का लाभ पहुंचने में दिक्कत न हो। विनियामक को लघुबीमा सेवा प्रदानकर्ताओं के काम-काज पर निगरानी भी रखनी होगी ताकि उनके द्वारा अनियमितताएं न बरती जा सकें।

लघु वित्त के साथ लघु बीमा की संबद्धता

अल्प कीमत वाली जन बीमा योजनाओं को पूर्व में ज्यादा सफलता नहीं मिली। बीमा कंपनियों के विक्रय प्रतिनिधियों में ऐसी एक-एक पॉलिसी बेचने के लिए उत्साह की कमी भी देखने को मिली क्योंकि प्रत्येक पॉलिसी से होने वाली आय कुछ ज्यादा नहीं थी। लेकिन अल्प आय समूहों को सामूहिक बीमा पॉलिसी बेचना बीमा कंपनियों के लिए किफायती साबित हो रहा है। लघु वित्त के साथ लघु बीमा योजनाओं को जोड़ने से कई बीमा कंपनियां बैंकों की ग्रामीण शाखाओं के साथ मिलकर कार्य करने को आगे आई हैं। पिछले कुछ वर्षों में लघु वित्त की अवधारणा न केवल मजबूत हुई है बल्कि इसने यह सिद्ध कर दिया है कि गरीब वर्ग को समूहों में संगठित कर साख योग्य बनाया जा सकता है। लघु वित्त अब वित्तीय सेवाओं का समुच्चय बनता जा रहा है जिसमें बचत व ऋण के साथ बीमा भी शामिल है। लघु बीमा गरीबों के जीवन में स्थिरता लाता है एवं इसके साथ उन्हें ऋण देने वालों के जोखिमों को भी कम करता है। अब लघु बीमा को क्रमशः लघु वित्त का घटक बनाने पर जोर दिया जाने लगा है और लघु वित्त की भांति इसे भी वाणिज्यिक रूप से व्यवहार्य माना जाता है। बीमा कंपनियां अब लघु वित्त को एक बड़े व्यापारिक अवसर के रूप में देखने लगी हैं।

भरपूर संभावनाओं वाला क्षेत्र

लघु वित्त का उद्भव हमारे समय की एक महत्वपूर्ण सामाजिक आर्थिक घटना है। लघु वित्त की स्वीकार्यता दिनोंदिन बढ़ रही है। लघु वित्त संगठनों के लिए बीमा को ऋण एवं बचत सुविधाओं के साथ जोड़ना हर प्रकार से वाजिब लगता है। इससे वित्तीय प्रबंधन सहज होगा, मौजूदा बाज़ार की संभावनाओं का पूरा लाभ उठाया जा सकेगा एवं उपलब्ध नेटवर्क एवं वितरण माध्यमों का अधिकतम उपयोग करना संभव होगा।

अभी तक लघु बीमा, बीमा का सबसे कम विकसित अंग है। लेकिन लघु वित्त की सफलता लघु बीमा की सफलता के प्रति आश्वस्त करती है। लघु बीमा की मदद से गरीब लोगों का

आर्थिक मुख्य धारा में दीर्घकालिक समावेशन सुनिश्चित किया जा सकता है। यह लघु वित्त संस्थाओं को भी मजबूत करेगा।

कुछ प्रश्न

लघु बीमा को लेकर कुछ प्रश्न भी उठाये जाते हैं। क्या निर्धन वर्ग हेतु जोखिम प्रबंधन के लिए बीमा अपने आप में पर्याप्त है? बीमा को किस हद तक लघु वित्त एवं लघु वित्त संस्थाओं के साथ जोड़ा जा सकता है और जोड़ा जाना चाहिए?

निस्संदेह लघु बीमा को लघु वित्त के साथ संबद्ध करना ऋणियों के लिए दोनों सुविधाओं की कीमत को कम करेगा। अगर बीमा साथ में है तो ऋण पर ब्याज दरों में थोड़ी रियायत दी जा सकती है। ठीक इसी प्रकार जहां ब्याज से आय हो रही हो वहां प्रीमियम की दरें कम रखी जा सकती हैं। माना जाता है कि बीमारी, दुर्घटना जैसी आकस्मिक घटनाएं लोगों के काम-धंधे पर नकारात्मक असर डालती हैं और इससे ऋण की वसूली पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है। उदाहरण के लिए बीमा अंतर्गत लघु स्वास्थ्य योजना बीमा बीमाकृत व्यक्ति को चिकित्सा सुविधा उसकी वित्तीय पहुंच के भीतर लायेगी। इससे व्यक्ति के कार्यकलाप जिस हेतु उसने ऋण लिया है, में व्यवधान कम होगा और इस प्रकार उसके लिए ऋण चुकाना सुगम होगा।

निर्धन वर्ग को वित्तपोषण प्रदान करना स्वाभाविक रूप से जोखिमपूर्ण है। यह जोखिम निवेश की प्रकृति की वजह से तो है ऋणी के स्वास्थ्य को होने वाले खतरों से भी है जिससे ऋण चुकाना अनिश्चित हो सकता है। जोखिम से निबटने के लिए बीमा को एक वैज्ञानिक उपाय माना जाता है। अतः लघु बीमा को व्यक्ति एवं लघु वित्त संस्था दोनों के लिए जोखिम कम करने के साधन के रूप में देखा जाना चाहिए।

भारत में लघु बीमा

हाल के वर्षों में भारत में गरीबों हेतु लघु बीमा योजनाएं शुरू करने के कार्य में तेजी आई है। इसके दो कारण हैं। लघु वित्त ने लघु बीमा कारोबार के लिए संभावनाओं के द्वार खोले हैं। दूसरी तरफ नए विनियमों में सभी बीमा कंपनियों को अपने कार्यकलापों को ग्रामीण क्षेत्रों तक पहुंचाने को कहा गया है।

लघु बीमा के विस्तार के लिए एक बात ध्यान में रखनी जरूरी है। गरीब वर्ग के लोग बीमा कराने के लिए खुद आगे शायद ही आएंगे। उन्हें इस हेतु मार्गदर्शन की आवश्यकता होगी। यह मार्गदर्शन गैर सरकारी संगठनों, बीमा कंपनियों, लघु वित्त संस्थाओं या बैंकों के प्रतिनिधियों द्वारा प्रदान किया जा सकता है।

लघु बीमा और बैंक

स्वयं सहायता समूहों एवं लघु वित्त को बढ़ावा देने में बैंकों की अहम् भूमिका रही है। इसी प्रकार बैंक लघु बीमा को अधिक से अधिक पात्र लोगों तक पहुंचाने में महत्वपूर्ण योगदान दे सकते हैं। इसमें बैंकों का प्राथमिक कार्य स्वयं सहायता समूहों के सदस्यों को लघु बीमा की उपयोगिता से परिचित कराना होगा। लघु बीमा पालिसियों को अपने वितरण चैनल के माध्यम से बेचने के लिए बैंक बीमा कंपनियों से करार कर सकते हैं जैसाकि इंडियन ओवरसीज बैंक, केनरा बैंक, पंजाब एण्ड सिंध बैंक सहित कई राष्ट्रीयकृत बैंकों एवं क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों ने भी किया है। कुछ बैंकों ने अलग कंपनी (जैसे एसबीआई लाइफ) बनाकर बीमा का कारोबार शुरू किया है। बैंक ऑफ इंडिया, यूनियन बैंक, बैंक ऑफ बड़ौदा जैसे बड़े राष्ट्रीयकृत बैंक भी ऐसा कारोबार शुरू करने की योजना बना रहे हैं। आशा की जानी चाहिए कि जिस प्रकार राष्ट्रीयकृत बैंकों ने बैंकिंग को ग्रामीण इलाकों में और जन-जन तक पहुंचाया है उसी प्रकार वे लघु बीमा को भी समाज के निर्धन एवं जरूरतमंद लोगों तक पहुंचाने में सफल होंगे। वित्तीय समावेशन में यह भी उनका भी महत्वपूर्ण योगदान होगा।

◆

संकलन : श्रीमती सावित्री सिंह
सहायक महाप्रबंधक,
कृषि बैंकिंग महाविद्यालय
पुणे

बैंकिंग चिंतन-अनुचिंतन का यह विशेषांक 'ग्रामीण और विकासोन्मुख बैंकिंग' को समर्पित है इसलिए हम इस बार कुछ ऐसी संकल्पनाओं और नए वित्तीय उत्पादों से परिचित कराना चाहते हैं जो बदलते बैंकिंग परिदृश्य में ग्रामीण/कृषि ऋण के संदर्भ में प्रयुक्त होते रहे हैं।

Institutional Credit संस्थागत ऋण

बैंकों, वित्तीय संस्थाओं और सरकारी एजेंसियों द्वारा दिया जानेवाला ऋण संस्थागत ऋण की श्रेणी में आता है। हमारे देश में सदियों पुरानी साहूकारी प्रथा का साम्राज्य रहा है और आज भी दूरदराज के गांवों में गरीब किसान अपनी आर्थिक जरूरतों के लिए इनके मोहताज बने हुए हैं। ऐसे में यदि हमारी अर्थव्यवस्था को वास्तव में प्रगति के पथ पर आगे ले जाना है तो संस्थागत ऋण की उपलब्धता बढ़ानी होगी। आम लोगों को ऋण सहज रूप से उपलब्ध हो सके इसके लिए सरकारी और गैर सरकारी संस्थाओं को आसान शर्तों पर ऋण प्रदान करना होगा।

Seasonal Fluctuations मौसमी उतार चढ़ाव

भारत में कृषि मुख्यतः मौसम पर आधारित होती है इसलिए मौसमी बदलाव से पूरी तरह से प्रभावित रहती है। अच्छा मौसम अच्छी उपज देता है जो अंततः किसानों के लिए अच्छी आय का द्योतक होता है। इस प्रकार कृषि उपजों के मूल्यों में भी मौसम के अनुसार उतार-चढ़ाव देखा जा सकता है। अतएव किसानों से की जानेवाली ऋण वसूली का निर्धारण करते समय इस कारक को भी ध्यान में रखा जाना चाहिए।

Formal Sector Credit औपचारिक ऋण क्षेत्र

औपचारिक क्षेत्र से मिलनेवाला ऋण संस्थागत ऋणों का ही पर्याय है। सरकारी मशीनरी जहां कार्यरत हो और उपभोक्ताओं को प्रचलित नियमों एवं शर्तों पर सहज ही ऋण उपलब्ध हो सके ऐसी सभी संस्थाएं औपचारिक ऋण क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करती हैं।

Subsidized Credit छूट प्राप्त ऋण

कई बार परिस्थिति विशेष को देखते हुए औपचारिक क्षेत्र से मिलनेवाले ऋण पर लागू नियमों से छूट प्रदान की जाती है। यह छूट ब्याज दर के कमी के रूप में हो सकती है या फिर ऋण के भुगतान के तौर तरीकों के बदलाव के रूप में हो सकती है। उदाहरण के तौर पर किसानों को किसी ऋण की किश्त का भुगतान किसी विशेष उपज के समय करने की अनुमति दी जा सकती है।

Social & Development Banking सामाजिक और विकासात्मक बैंकिंग

सरकार द्वारा विनियमित बैंकों को अपने उद्देश्यों में सामाजिक एवं विकासात्मक कल्याणकारी पहलुओं पर ध्यान देना होता है। भारत में सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक सामाजिक उत्थान के क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों को ऊपर उठाने के लिए सरकार द्वारा जारी किए जानेवाले दिशानिर्देशों के अनुरूप ये बैंक इन वर्गों को ऋण की उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए उपयुक्त कदम उठाते हैं। इसके अलावा अपनी विकासात्मक भूमिका के साथ न्याय करने के लिए इन्हें लघु और मध्यम उद्यमियों को उचित मात्रा में वित्तीय सुविधा उपलब्ध करानी होती है।

Multi Institutional Approch बहु-संस्थागत पहल

किसी क्षेत्र के उत्थान के लिए जब कई एजेंसियों द्वारा सहायता प्रदान की जाती है तो उसका सर्वांगीण विकास सुनिश्चित किया जा सकता है। उदाहरणार्थ हमारे देश में कृषि क्षेत्र के

विकास के लिए एक ओर जहां वाणिज्यिक बैंकों के अलावा क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों, सहकारी बैंकों, नाबार्ड द्वारा आर्थिक सहायता प्रदान की जा रही है तो वही दूसरी ओर सरकार इसके लिए आवश्यक नीतिगत पहल सुनिश्चित कर रही है।

Directed Credit निर्देशित ऋण

जब सरकार किसी क्षेत्र विशेष के लिए ऋण का आबंटन निर्धारित कर दे और उसके द्वारा विनियमित वित्तीय संस्थाओं और बैंकों को उसका पालन करना बाध्यकारी बना दिया जाए तो ऐसे ऋण निर्देशित ऋणों की परिधि में आते हैं। उदाहरणार्थ हमारे देश में छोटे और लघु स्तर के उद्यमियों की सहायता के लिए सरकार द्वारा वाणिज्यिक बैंकों को प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्रों को एक निश्चित मात्रा में ऋण उपलब्ध कराने के लिए दिया गया निर्देश।

Credit Starvation ऋण अभाव

ऋण का अभाव अर्थात उसकी बढ़ती हुई मांग जो पूरी न की जा सके। यह मांग प्रत्यक्ष उत्पादन के लिए हो सकती है या फिर स्वास्थ्य, शिक्षा जैसी अन्य जरूरतों के लिए अप्रत्यक्ष मांग भी हो सकती है। इस समय हमारी अर्थव्यवस्था में कृषि ऐसा क्षेत्र है जिसे 'ऋण अभाव' के दौर से गुजरना पड़ रहा है।

Small Borrower Account लघु ऋणी खाता

एक ऐसा खाता जिसमें ऋणी को रु. 25000/- तक ही ऋण दिया जा सकता है। वित्तीय समावेशन के इस दौर में इस तरह के खातों का चलन बढ़ने की संभावना है।

Micro Credit Approch लघु ऋण दृष्टिकोण

यह दृष्टिकोण गरीबों को अपने पैरों पर खड़ा करने के सिद्धांत पर कार्य करता है। इसमें ऐसे लोगों को ऋण उपलब्ध कराकर उन्हें स्व रोज़गार के लिए प्रेरित किया जाता है ताकि वे कम से कम अपना और अपने परिवार का भरण पोषण करने योग्य बन सकें।

Micro Finance Approch लघु वित्त दृष्टिकोण

इस दृष्टिकोण के अंतर्गत ग्रामीण, अर्ध शहरी और शहरी क्षेत्र के गरीबों को फुटकर ऋण के अलावा छोटी राशि की वित्तीय सेवाएं एवं उत्पाद प्रदान करने पर जोर दिया जाता है ताकि वे अपनी आय और जीवन स्तर को ऊंचा उठा सकें।

SHG - Bank Linkage स्वयं सहायता समूह- बैंक लिंकेज

स्वयं सहायता समूह और बैंक लिंकेज भारत में लघु वित्त का सर्वाधिक सफल मॉडल है। इस मॉडल में समूह के लोगों में पहले बचत करने की आदत विकसित की जाती है और एक अच्छी राशि का संग्रहण हो जाने के बाद नए उद्यम के लिए कम पड़नेवाली राशि की भरपाई बैंक से ऋण लेकर की जाती है। इसमें बैंक को भी ऋण जोखिम का सामना नहीं करना पड़ता क्योंकि सामाजिक प्रतिभूति के अलावा उन्हें संयुक्त देनदारी का लाभ भी मिलता है। अक्सर ऐसे मामलों में आगे चलकर बैंक इन उद्यमों में अग्रणी की भूमिका निभाने लगते हैं और इस तरह से स्वयं सहायता समूह और बैंक में एक नया संबंध विकसित हो जाता है। आज अधिकतर बैंकों की कार्पोरेट नीति में इस तथ्य पर जोर दिया जाने लगा है कि वे स्वयं सहायता समूह-बैंक लिंकेज के तहत अपनी लघु वित्त गतिविधियों का विस्तार करें।

Financial Inclusion वित्तीय समावेशन

जिन लोगों को बैंकिंग सुविधाएं उपलब्ध नहीं हैं उन्हें बैंकिंग सुविधाओं के दायरे में लाना ही वित्तीय समावेशन है। अर्थात जिन ग्रामीण / अर्द्ध शहरी/शहरी क्षेत्रों में बुनियादी बैंकिंग सेवाएं उपलब्ध नहीं हैं वहां इन सुविधाओं को उपलब्ध कराकर जनसाधारण को परंपरागत साहूकारों के चुंगल से निजात दिलाना। इस प्रक्रिया में सबसे महत्वपूर्ण है समाज के अल्प आय वर्ग के लोगों को उनकी सामर्थ्य के अनुसार कम लागत पर वित्तीय तथा बैंकिंग सेवाओं की उपलब्धता को सुनिश्चित करना। इसके लिए बैंकों को न केवल अपने शाखा विस्तार पर ध्यान देना होगा अपितु जनसाधारण तक सहज पहुंच बनाने के लिए स्थानीय स्तर पर कार्यरत विभिन्न एजेंसियों जैसे कि गैर सरकारी संगठन, स्वयं सहायता समूह, डाकघर आदि की सहायता भी लेनी होगी।

Business Facilitator व्यवसाय सुलभकर्ता

बैंक सुविधा रहित क्षेत्रों में बैंकिंग और वित्तीय सेवाएं पहुचाने के लिए बैंकों और उस क्षेत्र में कार्य करनेवाली संस्थाओं के बीच एक कड़ी स्थापित किए जाने की आवश्यकता है। इसी अपेक्षा को पूरा करने के लिए व्यवसाय सुलभकर्ता मॉडल तैयार किया गया है जिसमें स्थानीय स्तर पर कार्यरत गैर सरकारी संगठन, किसान क्लब, डाक एजेंट, बीमा एजेंट, पंचायत, ग्रामीण कियोस्क /ज्ञान केंद्र, बैंकों द्वारा वित्तपोषित एग्री क्लिनिक/ व्यवसाय केंद्र और केवीआइसी इकाइयों का समावेश है। ये सभी बैंक और उपभोक्ताओं के बीच व्यवसाय सुलभकर्ता के रूप में कार्य करते हैं और बैंकों को 1) उधारकर्ता की पहचान 2) ऋण आवेदन पत्रों को इकट्ठा कर प्रस्तुत करने 3) प्राथमिक तौर पर उनका मूल्यांकन करने 4) वित्तीय सेवाओं और उत्पादों का विपणन 5) ऋण स्वीकृति के बाद उस पर निगरानी रखने 6) स्वयं सहायता समूहों का निर्माण और उनका विकास तथा 7) वसूली पर निगरानी रखने में सहायता प्रदान करते हैं।

Business Correspondent व्यवसाय संवाहक

बैंक सुविधा रहित क्षेत्र के लोगों तक बैंकिंग/वित्तीय सेवाएं पहुंचाने के लिए जो दूसरा मॉडल अपनाया गया है वह है व्यवसाय संवाहक का। यह मॉडल पंजीकृत गैर बैंकिंग वित्तीय संस्थाओं, माइक्रोफाइनांस संस्थाओं, प्राथमिक कृषि ऋण समितियों और डाकघर जैसे संस्थागत एजेंटों /अन्य बाहरी निकायों की सहायता लेने का प्रस्ताव करता है। ऊपर वर्णित व्यवसाय सुलभकर्ता द्वारा किए जानेवाले कार्यों के अलावा व्यवसाय संवाहक 1) छोटी जमाराशियों का संग्रहण 2) स्वीकृत ऋणों का वितरण और चुकौती की राशि को उधारकर्ता से लेकर बैंकों तक पहुंचाने तथा लघु बीमा/म्युचुअल फंड जैसे उत्पादों की बिक्री का कार्य करते हैं।

Financial Exclusion वित्तीय निष्कासन

वित्तीय निष्कासन से तात्पर्य है गरीबी, अशिक्षा, दूरदराज के क्षेत्रों में निवास जैसे कारणों की वजह से जनसाधारण का बैंकिंग सेवाओं का लाभ उठाने से वंचित रह जाना। इनके अलावा अल्प आय, वित्तीय सेवाओं के बारे में जानकारी का अभाव, आधारभूत लेन देन के लिए लगाए जानेवाले प्रभार/ शुल्क को अदा कर पाने में कठिनाई और जमाराशियों को सुरक्षित रखने में असुरक्षा की भावना भी वित्तीय निष्काषन के लिए जिम्मेदार है। अंततः हम कह सकते हैं कि बैंकिंग सुविधाओं की मुख्य धारा तक किसी व्यक्ति अथवा उद्यम की पहुंच न होना ही वित्तीय निष्कासन की व्यावहारिक परिभाषा है।

Kisan Credit Card किसान क्रेडिट कार्ड

यह एक ऐसा वित्तीय उत्पाद है जो किसानों की लघु अवधि की ऋण जरूरतों को पूरा करता है। इससे एक तो वह अपनी नकदी की छोटी-छोटी जरूरतों के लिए साहूकार के शिकंजे से बच जाता है और दूसरे बैंकों के चक्कर लगाने से बच जाता है। इस कार्ड से बैंक को भी तरह-तरह के दस्तावेज़ तैयार करने और फिर उनकी सार संभल करने से छुटकारा मिल जाता है। किसान इस कार्ड का प्रयोग आवश्यकतानुसार थोड़ी-थोड़ी मात्रा में राशि के आहरण के लिए करता है या फिर ग्रामीण क्षेत्रों में खोले गए आउटलेट से अपनी जरूरत की वस्तुओं की खरीद कर सकता है।

General Credit Card सामान्य क्रेडिट कार्ड

किसान क्रेडिट कार्ड की सफलता से प्रेरित होकर कई बैंकों ने सामान्य क्रेडिट कार्ड नाम से एक दूसरा वित्तीय उत्पाद तैयार किया है जो अलग-अलग अवधि के ऋणों और फसल ऋण का मिला जुला रूप है।

No frills account नो फ्रिल खाता (सादा खाता)

एक ऐसा खाता जो न्यूनतम जमा राशि अथवा शून्य जमा शेष से खोला जाए। इस खाते की संकल्पना गरीबों और आर्थिक दृष्टि से कमजोर लोगों तक बैंकिंग सेवाओं को पहुंचाने के उद्देश्य से की गई है ताकि गरीब से गरीब व्यक्ति भी बिना किसी राशि के बैंक में खाता खोल सके और उसे ऋण सुविधा प्रदान की जा सके। लेकिन इन खातों में एक निश्चित राशि तक ही लेनदेन किए जा सकते हैं। ऐसे खाता धारक बैंक की सीमित सुविधाओं का ही उपभोग कर सकते हैं।

Non-Institutional Credit गैर संस्थागत ऋण

हमारे देश की अधिकांश ग्रामीण आबादी अभी भी अपनी ऋण संबंधी जरूरतों के लिए सदियों से चली आ रही साहूकार

प्रथा पर निर्भर करती है। शहरी क्षेत्रों में भी पेढ़ी के रूप में दुगनी ब्याज दर पर ऋण प्रदान करनेवाले गैर संस्थागत स्रोत कार्य कर रहे हैं।

Micro Finance Institutions लघु वित्त संस्थाएं

माइक्रोफाइनांस या लघु वित्त संस्थाएं ऐसी संस्थाएं होती हैं जो ग्रामीण, अर्द्धशहरी और शहरी क्षेत्र के गरीबों के लिए किफायती ऋण और छोटी राशि की अन्य वित्तीय सेवाएं उपलब्ध कराती हैं ताकि वे अपनी आय बढ़ा सकें तथा अपना जीवनस्तर सुधार सकें। ऐसे ऋण प्रदान करते समय परंपरागत प्रकार की प्रतिभूतियां नहीं ली जाती हैं। माइक्रोफाइनांस संस्थाएं/ गैर सरकारी संगठन, बैंक और अन्तिम उपभोक्ता के बीच सामाजिक मध्यस्थ की भूमिका निभाते हैं जिससे बैंकों के लिए ऋण जोखिम का खतरा काफी हद तक कम हो जाता है। इन संस्थाओं में पंजीकृत गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियों, गैर सरकारी संगठनों और समिति/ट्रस्ट अधिनियम के तहत स्थापित लघु वित्त संस्थाओं का समावेश होता है।

Pass Through Agencies संवाहक एजेंसियां

यह माइक्रोफाइनांस संस्थाओं के लिए ही प्रयुक्त होनेवाली दूसरी संज्ञा है। लघु वित्त संस्थाओं को 'संवाहक एजेंसियां' इसलिए कहा गया है क्योंकि ये वित्त/निधि के प्रवाह को एक से दूसरे तक पहुंचाने का कार्य करती हैं। बैंकों के व्यवसाय संवाहक के रूप में कार्य करनेवाली सभी एजेंसियों को अपने स्रोत बैंक के साथ एक करार करना होता है और फिर उनकी ओर से ये एजेंसियां ग्राहकों से निधि इकठ्ठा कर बैंकों में जमा करने और स्वीकृत ऋण राशि को वितरित करने का कार्य करने लगती हैं।

Pigmy Deposit Scheme पिग्मी जमा योजना

कुछ समय पूर्व तक कुछ बैंकों द्वारा यह योजना चलाई जाती थी जिसमें स्थानीय लोगों को बैंक के एजेंट के रूप में नामित किया जाता था और उन्हें बैंक के प्रतिनिधि के रूप में छोटे-छोटे जमाकर्ताओं के घर जाकर जमाराशि इकठ्ठा कर उसे बैंक में जमा कर देना होता था। यह संग्रहण दैनिक/सप्ताह में एक बार किया जाता था। लेकिन अधिकतर बैंकों को एजेंट के रूप में कार्य करने वाले लोगों की धोखाधड़ी की वजह से इस योजना में घाटा उठाना पड़ा और अंततः इसे बंद कर दिया गया।

Local Area Banks स्थानीय क्षेत्रीय बैंक

ग्रामीण क्षेत्रों में स्थानीय लोगों की बचत का लाभ उठाकर उसे स्थानीय स्तर पर ही निवेश करने के लक्ष्य से उठाया यह एक और प्रयास था जिसके तहत निजी क्षेत्र में स्थानीय क्षेत्रीय बैंकों की स्थापना की गई और उनके विनियमन का भार भारतीय रिज़र्व बैंक को सौंपा गया। यह आशा की गई थी कि इससे ग्रामीण क्षेत्रों में संस्थागत ऋण की प्राप्ति के अभाव को दूर किया जा सकेगा। लेकिन अनुभव कुछ उतने फलदायी साबित नहीं हुए और आज की तारीख में पूरे देश में केवल चार स्थानीय क्षेत्रीय बैंक ही कार्य कर रहे हैं।

The Partnership Model भागीदार मॉडल

ग्रामीण ऋण उपलब्ध कराने के संबंध में निजी क्षेत्र के नई पीढ़ी के बैंकों ने 'भागीदार मॉडल' के रूप में एक नए मॉडल को अपनाया है जिसमें माइक्रो फाइनांस संस्थाएं ऋण प्रस्तावों का मूल्यांकन, सिफारिश, वितरण और बाद में निगरानी एवं वसूली का कार्य करती हैं जबकि संबंधित ऋण उन संस्थाओं की बहियों में नहीं बल्कि उधार देनेवाले बैंक की बहियों में दर्ज रहता है। इन संस्थाओं को अपनी सेवाओं के लिए उधारकर्ताओं से सेवा प्रभार के रूप में आय प्राप्त होती है।

Ghost Account छद्म खाता

व्यावहारिक अनुभवों में यह पाया कि ग्रामीण क्षेत्रों में व्यवसाय संवाहक के रूप में कार्य करने के लिए नामित किए जानेवाले स्थानीय व्यक्ति नीयत में खोट आ जाने के कारण अक्सर छद्म नाम से बैंक में खाते खोलते और उसका लाभ स्वतः उठाते। इससे ग्रामीण गरीब की गाढ़ी कमाई भी उसके हाथ से निकल जाती। इस तरह की धोखाधड़ियों ने ही बैंकों को पिग्मी जमा योजना को बंद करने के लिए बाध्य कर दिया।

स्वयं सहायता समूह

◉ राजेन्द्र सिंह
इंडियन ओवरसीज़ बैंक
लखनऊ

80 और 90 दशक के प्रारम्भ में स्वयं सहायता दल संस्थागत व्यवहार्यता और बांग्लादेश के ग्रामीण बैंक - मॉडल की सफलता चर्चा के विषय रहे हैं। कुछ गैर-सरकारी संस्थाओं ने ग्रामीण बैंक मॉडल को देश में लागू करने की शुरूआत भी की। वर्ष 1992 के आरम्भ में राष्ट्रीय बैंक ने वाणिज्यिक बैंकों के लिए मार्ग निर्देश जारी किए जिसमें प्रायोगिक आधार पर 500 स्वयं सहायता दलों के बैंक लिंकेज की योजना बनाई गयी। स्वयं सहायता दलों-बैंक लिंकेज मॉडल अपने आप में नवोन्मेषी था जिसका उद्देश्य था कि औपचारिक बैंकिंग प्रणाली को अनौपचारिक स्वयं सहायता दलों से जोड़ दिया जाए जिससे लेन देन की लागत में कमी आए। यह बैंक और ग्रामीण निर्धनों - दोनों के लिए लाभदायक हैं क्योंकि यह एक ऐसी पारदर्शी अनुपूरक ऋण व्यवस्था है जिससे उन ग्रामीण निर्धनों तक पहुंचा जा सकता है जो अब तक किसी भी ऋण से वंचित रहे हैं। इससे स्वयं सहायता दलों के सदस्यों में मितव्ययिता आई, स्वयं सहायता को प्रोत्साहन मिला और ऋणों के उपयोग में एक अनुशासनात्मक दृष्टिकोण का सूत्रपात हुआ। यह अपने आप में एक बड़ा कदम था जिसमें बैंक ग्रामीण निर्धनों के अनौपचारिक संगठनों को बिना किसी संपार्श्विक प्रतिभूति के या शर्तों के बिना ऋण उपलब्ध करा रहे हैं। इस नई संकल्पना को अपनाने के लिए बैंकों ने काफी समय लिया। पहले तो स्वयं सहायता दलों के खाते खोलने में भी आनाकानी की जाती थी। परन्तु बाद में बैंकों के दृष्टिकोण में अभूतपूर्व परिवर्तन हुआ।

इस नई संकल्पना को अपनाने के लिए बैंकों ने काफी समय लिया। पहले तो स्वयं सहायता दलों के खाते खोलने में भी आनाकानी की जाती थी। परन्तु बाद में बैंकों के दृष्टिकोण में अभूतपूर्व परिवर्तन हुआ।

स्वयं सहायता दल की परिभाषा

यह बीस से कम व्यक्तियों का एक अपंजीकृत संगठन है, जिसमें एक ही वर्ग के समान व्यक्तियों को साझी आर्थिक समस्याओं से निपटने के लिए शामिल किया जाता है ।

इन स्वयं सहायता दलों को ऐच्छिक रूप से नियमित बचत करने की सलाह दी जाती है। इन बचतों के माध्यम से ये दल के सदस्यों को ऋण देते हैं, ऋण के लिए ब्याज लिया जाता है । अतएव इस प्रक्रिया में बचत करना, उधार लेना और वसूल करना शामिल है । यह एक तरह से वित्तीय मध्यस्थता का कार्य है जिसमें आवश्यकताओं का वरीयता के आधार पर चुनाव किया जाता है और वित्तीय खातों के रख-रखाव के लिए शर्तें और नियम बनाए जाते हैं । इससे स्वयं सहायता दल के सभी सदस्यों में एक वित्तीय अनुशासन की भावना जागृत होती है क्योंकि ऋण के रूप में जो पैसा दिया जाता है वह सदस्यों का ही होता है।

स्वयं सहायता दल के सदस्यों को बड़ी राशियों का भी लेन-देन करना पड़ता है जो इनकी व्यक्तिगत बचत से कई गुना अधिक होती है। इससे सदस्यों को बैंकिंग की बुनियादी बातों का पता चलता है और उन्हें इसका भी एहसास होता है कि पैसे की कीमत समय से है और यह एक दुर्लभ वस्तु है ।

बैंक लिंकेज

जब एक स्वयं सहायता दल बचत, उधार और वसूली की बुनियादी प्रक्रिया से अवगत हो जाता है तब इसे बैंक से लिंक कर दिया जाता है । यहां लिंकेज का अर्थ स्वयं सहायता दल को बैंक ऋण उपलब्ध कराना है। जिससे उसके संसाधन और भी बढ़ जाते हैं और साथ ही इनकी बचत में भी अतिरिक्त वृद्धि हो जाती है, यह प्रतिभूति का कार्य करती है ।

स्वयं सहायता दल के लिंकेज में बैंक ऋण प्रदान करते हैं और दल सदस्यों के लिए ऋण मांग का निर्धारण करते हैं, ऋण स्वीकृति के लिए शर्तें निर्धारित करते हैं। इस तरह बैंक ऋण उन्हीं स्वयं सहायता दलों को मिल पाता है जिनके सदस्य ऋण लेने और अदा करने में अनुभवी होते हैं। इसमें लेन-देन लागत

की (स्वीकृति, संवितरण, निगरानी और वसूली) बचत हो जाती है । साथ ही, बैंक व्यावसायिक दरों पर ऋण मुहैया कराते हैं, यहां अनुदान नहीं होता और वसूली शत-प्रतिशत हो जाती है। यहां ऋण की राशि उनके बचत पर आधारित होती है। इसमें शत-प्रतिशत वसूली के पीछे कारण यह है कि दल के सदस्यों पर एक दूसरे का दबाव होता है जिससे वसूली समय से सुनिश्चित हो जाती है ।

पाइलट प्रोजेक्ट (1992) के आधार पर राष्ट्रीय बैंक ने यह सुझाव दिया था कि बचत और ऋण राशि का अनुपात 1:1 या 1:2 और फिर 1:4 के रूप में अधिकतम होना चाहिए। यह भी सुझाव दिया गया था कि छः महीने से पहले बैंक लिंकेज नहीं होना चाहिए। इन छः महीनों के दौरान सदस्यों को बचत करना, आपस में ऋण देना और वसूली में अनुभव होना चाहिए।

स्वयं सहायता दल - बैंक लिंकेज योजना की महत्वपूर्ण बातें -

- एक ही आर्थिक परिवेश में और आस-पास रहने वाले व्यक्तियों का दल ।
- महिलाओं पर विशेष ध्यान।
- पहले बचत, फिर उधार। छोटी-मोटी निश्चित बचतें एक नियमित अन्तराल पर जिससे वित्तीय अनुशासन सुनिश्चित हो सके।
- उधार राशनिंग - स्वयं सहायता दल के सदस्यों के ऋण आवेदन पत्रों पर प्राथमिकता के आधार पर विचार करना चाहिए । इससे सदस्यों में समय पर पैसा अदा करने का दबाव रहता है ।
- अल्प अदायगी अवधि ।
- क्रमिक ऋण संवितरण ।
- कोई अनुदान नहीं ।
- स्वयं सहायता दल द्वारा ऋण राशि एवं संबंधित शर्तो का निर्धारण।
- ब्याज में कोई छूट नहीं
- पारदर्शी परिचालन - बैठकों में सामूहिक निर्णय ।

स्वयं सहायता दल की जो बैठकें आयोजित की जाती हैं वहां बैठकों में हाजिरी अनिवार्य होनी चाहिए और अनुपस्थिति पर दंड का प्रावधान होना चाहिए। जो शुल्क इस तरह इकट्ठा होता है इससे अनुशासन की इच्छाशक्ति का संदेश जाता है । इसी तरह स्वयं सहायता दलों को इस बात के लिए भी प्रेरित किया जाता है कि वे पदाधिकारियों की अदला-बदली करते रहें जिससे दलों में किसी पदाधिकारी का प्रभुत्व न बढ़े ।

इन सब बातों के अनुपालन के फलस्वरूप लेन-देन की लागत बैंक एवं सदस्य लाभार्थियों दोनों के लिए कम हुई है ।

सारणी - 1 : स्वयं सहायता दल बैंक संबद्धता कार्यक्रम

(राशि करोड़ रुपये)

वर्ष	बैंकों द्वारा वित्त पोषित कुल स्वयं सहायता दल (संख्या हजारों में)		बैंक ऋण		पुनर्वित्त	
	वर्ष के दौरान	संचयी	वर्ष के दौरान	संचयी	वर्ष के दौरान	संचयी
2004-05	539 (49.1)	1,618 (50.0)	2,994 (61.4)	6,898 (76.7)	968 (37.2)	3,086 (45.7)
2005-06	620 (15.0)	2,239 (38.30)	4,499 (50.3)	11,398 (65.2)	1,068 (10.3)	4,154 (34.6)

टिप्पणी : कोष्ठक में दिये गये आंकड़े वार्षिक प्रतिशत वृद्धि दर्शाते हैं ।
स्रोत : भारत में बैंकिंग प्रवृत्ति और प्रगति संबंधी रिपोर्ट 2005-06

इससे सभी आवश्यक वित्तीय सेवाएं सदस्यों को उनके गांव में ही मिल गयीं और उन्हें भाग-दौड़ नहीं करनी पड़ी ।

स्वयं सहायता दल - बैंक लिंकेज कार्यक्रम को स्वयं सहायता दलों की संवर्धक संस्थाओं द्वारा भारी समर्थन मिलना जारी रहा। ग्रामीण निर्धनों को स्वयं सहायता दलों में संगठित करना, वित्त के प्रबंध की क्षमता निर्माण करना और बैंक ऋण के संबंध में वाणिज्यिक आधार पर समझौता करना स्वयं-

सहायता दलों की संवर्धक संस्थाओं के लिए चुनौती पूर्ण कार्य कर रहे हैं। निर्धनों को इस बात के लिए प्रोत्साहन और सहायता दी जाती है कि वे अल्प बचतों की छोटी-छोटी राशियों की बचत के लिए स्वैच्छिक रूप से इकट्ठे हो जायें और उनकी आकस्मिक आवश्यकताएं पूरी करने के लिए उनके बीच लघु ऋणों का विस्तार करें। उक्त दल जैसे ही बड़े संसाधन संभालने योग्य हो जाता है, वैसे ही गैर सरकारी संगठन स्वयं सहायता दल को बैंक ऋण प्राप्त करवाने में सहायता करते हैं।

स्वयं-सहायता दल - बैंक लिंकेज कार्यक्रम में वर्षों में उभरे तीन मॉडलों में से लगभग 80.7 प्रतिशत स्वयं-सहायता दलों को बैंकों द्वारा मॉडल-II के अन्तर्गत वित्तपोषण मिला जिसमें गैर सरकारी संगठन और सरकारी संस्थाएं शामिल थीं। (सारणी-3 देखें)

ऐतिहासिक रूप से स्वयं-सहायता दलों का संकेंद्रण दक्षिणी राज्यों में हुआ है जिसका मुख्य कारण वहां की राज्य सरकारों की सक्रिय भूमिका है। तथापि, नाबार्ड में ग्रामीण निर्धनों की लगभग 70 प्रतिशत जनसंख्या वाले प्राथमिकता प्राप्त 13 राज्यों, जैसे उत्तर प्रदेश, उड़ीसा, पश्चिम बंगाल, मध्य प्रदेश, गुजरात, राजस्थान, छत्तीसगढ़, झारखण्ड, बिहार, उत्तरांचल, असम और हिमाचल प्रदेश में स्वयं-सहायता दल बैंक लिंकेज कार्यक्रम को गहन करने का कार्य शुरू किया

सारणी-2 : एजेन्सीवार संबद्धता की स्थिति

(मार्च के अन्त में)

(राशि करोड़ रुपये)

एजेन्सी	स्वयं सहायता दलों की संख्या (हजारों में)		प्रतिशत में अंतर		बैंक ऋण		प्रतिशत में अंतर	
	2004-05	2005-06	2004-05	2005-06	2004-05	2005-06	2004-05	2005-06
1	2	3	4	5	6	7	8	9
(i) वाणिज्यिक बैंक	843 (52.1)	1,188 (53.1)	56.7	40.8	4,159	6,987	84.4	68.0
(ii) क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक	564 (34.8)	740 (33.1)	38.9	31.2	2,100	3,322	64.3	58.2
(iii) क्रेडिट सहकारी बैंक	211 (13.0)	310 (13.9)	56.8	46.9	640	1,087	72.5	69.9
कुल (i)+(ii)+(iii)	**1,618 (100.0)**	**2,239 (100.0)**	**50.0**	**38.3**	**6,898 (100.0)**	**11,398 (100.0)**	**76.7**	**65.2**

टिप्पणी : 1 - कोष्ठक में दिये गये आंकड़े कुल में प्रतिशत अंश दर्शाते हैं।
2 - पूर्णांकन के कारण संबंधित जोड़ में आंकड़े जोड़े नहीं जा सकते।

स्रोत : भारत में बैंकिंग प्रवृत्ति और प्रगति संबंधी रिपोर्ट 2005-06

सारणी-3 : मॉडलवार संबंद्धता की स्थिति

मॉडल का प्रकार		31 मार्च 2005 की स्थिति		31 मार्च 2006 की स्थिति	
		स्वयं सहायता दलों की संख्या ('000)	बैंक ऋण (करोड़ रुपये)	स्वयं सहायता दलों की संख्या ('000)	बैंक ऋण (करोड़ रुपये)
1		2	3	4	5
(i)	बैंक द्वारा विकसित, मार्गदर्शित और वित्तपोषित स्वयं सहायता दल	343 (21.2)	1,013 (14.7)	449 (20.1)	1,637 (14.4)
(ii)	एनजीओ/सरकारी एजेंसियों द्वारा विकसित एवं बैंकों द्वारा वित्तपोषित स्वयं सहायता दल ।	1,158 (71.6)	5,529 (80.2)	1,646 (53.5)	9,200 (80.7)
(iii)	एनजीओ द्वारा विकसित117 एवं वित्तीय बिचौलियों के (4.9) रूप में एनजीओ/ औपचारिक एजेंसियों का इस्तेमाल करके बैंक द्वारा वित्तपोषित स्वयं सहायता दल ।	356	143 (7.2)	561 (5.2)	(6.4)
	कुल (i)+(ii)+(iii)	**1,618**	**6,898**	**2,239**	**11,398**

टिप्पणी : कोष्ठक में दिये गये आंकड़े कुल में प्रतिशतता दर्शाते हैं ।

~~स्रोत : भारत में बैंकिंग प्रवृत्ति और प्रगति संबंधी रिपोर्ट 2005-06~~

है। परिणामस्वरूप, दक्षिणी राज्यों में संचित स्वयं-सहायता दलों के संबद्ध ऋण में मार्च 2001 के 71 प्रतिशत से गिरावट आकर वह मार्च 2006 में 54 प्रतिशत रह गया। 2005-06 के दौरान, स्वयं-सहायता दलों के सम्बद्ध ऋण में महाराष्ट्र (60,234), उड़ीसा (57,640), पश्चिम बंगाल (43,553), उत्तर प्रदेश (42,263), राजस्थान (38,165), असम (25,215) और छत्तीसगढ़ (12,772) जैसे प्राथमिकता प्राप्त कुछ प्रमुख राज्यों में उल्लेखनीय रूप से बढ़ी । 2005-06 के दौरान, प्राथमिकता प्राप्त 13 राज्यों में स्वयं-सहायता दलों के सम्बद्ध ऋणों की संख्या 6,20,109 थी।

वर्तमान में, बैंकों के साथ जुड़े स्वयं-सहायता दलों में से कई तो तीन वर्ष से अधिक पुराने हैं। इन स्वयं-सहायता दलों ने न सिर्फ ऋण लिये हैं, बल्कि उन्होंने ऋण लेने की पुनरावृत्ति भी की है। इस बात पर बल दिया जा रहा है कि किसी पुराने स्वयं-सहायता दल का सदस्य आय उत्पादक कार्यों से लघु उद्यमों में आगे बढ़ने की स्थिति में होगा। यद्यपि, लघु उद्यम चिरकालिक बेरोज़गारी और निर्धनता की जटिल समस्या का एकमात्र हल नहीं है, फिर भी निर्धनों और अति निर्धनों की आय और सम्पत्ति में उल्लेखनीय वृद्धि करने के लिए लघु उद्यमों का संवर्धन एक सक्षम और प्रभावी रणनीति है। स्वयं-सहायता दल के सदस्य को लघु उद्यम करने योग्य बनाने के लिए बाजार के स्वरूप के समक्ष, कार्य कुशलता और उद्यमशीलता प्रबंध से तालमेल सहित प्रबंध के विभिन्न पहलुओं पर गहन प्रशिक्षण आवश्यक होता है। 2005-06 के दौरान, पुराने स्वयं-सहायता दलों के

लोगों के लिए जीविका की निरन्तरता बनाए रखने के लिए कार्य कुशलता और विकास पर केन्द्रित स्थानीय विशेष लघु उद्यम विकास कार्यक्रम शुरू किया गया। लघु उद्यम विकास कार्यक्रम में, उद्यमों में तकनीकी कार्य कुशलता, आधारभूत उद्यमशीलता उपलब्ध कराना और बाजार से सम्बन्धित पहलुओं पर पुराने स्वयं-सहायता दलों के सदस्यों की आवश्यकता तुरन्त पूरी करने का लक्ष्य रखा गया है।

वर्ष 2007-08 के केन्द्रीय बजट में की गयी घोषणा के अनुरूप नाबार्ड द्वारा स्वयं-सहायता दलों के माध्यम से कृषि और निवेश गतिविधियों के लिए ऋण की अलग व्यवस्था की नई वित्त पोषण योजना शुरू की गयी। 2006-07 के दौरान उक्त योजना के अन्तर्गत पुनर्वित्त उपलब्ध कराने के लिए 500 करोड़ रुपये की राशि निर्धारित की गयी। इस योजना के अन्तर्गत, स्वयं-सहायता दलों को अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों और सहकारी बैंकों द्वारा मात्र कृषि उत्पादन और कृषि तथा संबद्ध कार्यों सहित निवेश कार्यों के लिए दी दिये गये सावधि और नकदी ऋण नाबार्ड से 100 प्रतिशत पुनर्वित्त के लिए पात्र है। समग्र सीमा के 30 प्रतिशत तक उपभोग ऋण भी उक्त प्रयोजन के लिए पात्र हैं।

लघु उद्यम विकास कार्यक्रम में, उद्यमों में तकनीकी कार्य कुशलता, आधारभूत उद्यमशीलता उपलब्ध कराना और बाजार से सम्बन्धित पहलुओं पर पुराने स्वयं-सहायता दलों के सदस्यों की आवश्यकता तुरन्त पूरी करने का लक्ष्य रखा गया है।

लघु वित्त संस्था - बैंक लिंकेज

लघु वित्त संस्थाओं (एमएफआई) और बैंकों के बीच लिंकेज बढ़ाने के लिए निरन्तर प्रयास किये जा रहे हैं। बैंकों से लघु वित्त संस्थाओं की ओर वाणिज्यिक ऋणों का प्रवाह बढ़ाने के लिए नाबार्ड द्वारा 2005-06 के दौरान एक योजना शुरू की गयी थी ताकि लघु वित्त संस्थाओं के स्तर निर्धारण के प्रति बैंकों को वित्तीय सहायता मिल सके। उक्त योजना को अधिक उदार बनाकर 31 मार्च 2008 तक के लिए लागू किया गया है।

नाबार्ड द्वारा 'एमएफडीइएफ' से लघु वित्त संस्थाओं को पूंजी/इक्विटी सहायता नामक योजना की घोषणा की गयी जिसके अन्तर्गत नाबार्ड विभिन्न प्रकार की लघु वित्त संस्थाओं को पूंजी/इक्विटी सहायता प्रदान करता है ताकि वे निर्धन लोगों को वहनीय लागत पर वित्तीय सेवाएं देने के लिए बैंकों से वाणिज्यिक और अन्य निधियां प्राप्त करने के लिए पूंजी/इक्विटी जुटा सके और साथ ही वे तीन से पांच वर्ष की अवधि में अपने ऋण परिचालनों में पर्याप्तता ला सकें।

लघु वित्त और रिजर्व बैंक

बैंकों को नागरी समिति संगठनों की बुनियादी सुविधाएं उपयोग करते हुए एजेंसी मॉडल अपनाने की अनुमति देना, उधारदाता बैंक और लाभार्थी के बीच मध्यस्थ के रूप में कार्य करने के लिए 'बैंकिंग प्रतिनिधि' की नियुक्ति और लघु वित्त संस्थाओं के संवर्धन हेतु प्रयासों की पहचान जैसे मुद्दों की समीक्षा के लिए रिज़र्व बैंक में आंतरिक दल (अध्यक्ष : श्री एच. आर. खान) का गठन किया गया जिसने अपनी अन्तिम रिपोर्ट जुलाई 2005 में प्रस्तुत की। उक्त सिफारिशों के आधार पर और अधिक वित्तीय समावेशन सुनिश्चित करने तथा बैंकिंग क्षेत्र की पहुंच बढ़ाने के लिए बैंकों को अनुमति दी गयी कि वे कारोबार सहयोगी और कारोबार प्रतिनिधि मॉडलों का उपयोग करते हुए वित्तीय और बैंकिंग सेवाएं प्रदान करने में मध्यस्थ के रूप में गैर सरकारी संगठनों/स्वयं-सहायता दलों, लघु वित्त संस्थाओं और अन्य नागरी समिति संगठनों की सेवाएं लें ।

स्वयं सहायता दल की विशेषताएं

स्वयं सहायता दल और बैंक लिंकेज की एक मुख्य विशेषता यह रही है कि बैंक द्वारा दी गयी सूचनाओं के आधार पर सभी बैंकों में इन ऋणों की वसूली काफी अच्छी है। राष्ट्रीय बैंक की सूचनाओं के आधार पर इन ऋणों की वसूली 95 प्रतिशत से भी ऊपर है। यह सराहनीय है क्योंकि जहां लक्ष्य समूह ग्रामीण इलाकों में रहने वाले अति निर्धन हैं वहां भी वसूली 60-70 प्रतिशत के बीच है। स्वयं सहायता दल के अन्तर्गत वर्ष 2003-04 को समाप्त वर्ष में औसत ऋण 36,180/-रु. तक था ।

स्वयं सहायता दल - भविष्य

भविष्य की योजना यही थी कि वर्ष 2007 तक दस लाख

स्वयं सहायता दलों का बैंक लिंकेज किया जाए। यह हर्ष का विषय है कि तीन वर्ष पहले ही यह लक्ष्य पूरा हो गया है। ऐसी आशा की जाती है कि वर्ष 2007-08 के अन्त तक यह 20 लाख तक पहुंच जाएगा। अन्य शब्दों में हम यूं कह सकते हैं कि भारत सरकार, भारतीय रिज़र्व बैंक, राष्ट्रीय बैंक, बैंक/वित्तीय संस्थायें और गैर सरकारी संगठन सबने मिलकर पूरे विश्व में सबसे अधिक स्वयं सहायता दलों का लिंकेज किया है जो एक सराहनीय कार्य है।

पैक्स (पुअरेस्ट एरियाज सिविल सोसाइटी) से संबंधित सेन्टर फार प्रमोटिंग सस्टेनेबल लाइवलीहुड (सीपीएसएल) ने 528 स्वयं सहायता दलों का अध्ययन किया। अध्ययन के मुताबिक जो दल प्रति सप्ताह तीन रुपये से भी कम बचत करते थे उनमें 75 प्रतिशत दल तीन वर्षों के बाद स्वावलम्बी हो गए जबकि दस रुपये बचत करने वाले दल समाप्त हो गये। ऐसा भी देखा गया कि जो दल पचास पैसे प्रति सप्ताह प्रति सदस्य जमा करते थे उनमें 95 प्रतिशत स्वयं सहायता दल स्वावलम्बी बन गए।

सीपीएसएल ने कम्प्यूटर डाटाबेस के आधार पर ग्रामीण निर्धनों की आर्थिक आवश्यकताओं का विश्लेषण किया। यह अध्ययन 60 गांवों में किया गया। इससे पता चलता है कि 23 प्रतिशत लोग खेती के लिए, 16 प्रतिशत लोग इलाज के लिए और 15 प्रतिशत लोग सामाजिक रीति रिवाज पूरा करने के लिए ऋण लेते हैं ।

स्वयं सहायता दल के समक्ष चुनौतियां : ऋणों की वसूली

एक प्रश्न जो सदैव चर्चा में रहता है कि क्या स्वयं सहायता दलों से वसूली का निष्पादन भविष्य में भी ऐसा बना रहेगा? जहां तक बैंकों/वित्तीय संस्थाओं का प्रश्न है, वे स्वयं सहायता दलों के कार्य निष्पादन से संतुष्ट हैं। फिर भी जैसे-जैसे ऋण का आकार बढ़ेगा, एक शाखा के पास कई स्वयं सहायता दलों का लिंकेज होगा तो इन दलों की देख-भाल, अनुश्रवण और वसूली के लिए अधिक कारगर कदम उठाने होंगे।

अभिलेख के रख-रखाव की गुणवत्ता

जैसे-जैसे स्वयं सहायता दलों के परिचालन का आकार बढ़ता है वैसे-वैसे रिकार्ड की गुणवत्ता की आवश्यकता भी बढ़ती जाती है। स्वयं सहायता दल प्रोत्साहित करने वाली संस्थाओं का काम होगा कि वे अभिलेख के रख-रखाव पर विशेष ध्यान दें। दूसरी बात यह है कि दल के सदस्यों के कौशल बढ़ाने के लिए पूरा प्रयास किया जाना चाहिए और जांच - पड़ताल में सुधार लाना चाहिए। साथ ही आवश्यकता इस बात की भी है कि पूर्व चेतावनी प्रणाली विकसित की जाए जिससे सुधारात्मक कदम उठाए जा सकें। यहां यह बात स्पष्ट कर देनी होगी कि स्वयं सहायता दलों की संख्या महत्वपूर्ण नहीं हैं अपितु उनको कायम रखना महत्वपूर्ण है ।

सदस्यों के लिए उद्यमिता विकास

स्वयं सहायता दल के परिपक्वता अवधि के पहुंचने के बाद सदस्यों को सूक्ष्म उद्यमों और लघु उद्यमों के लिए तैयार किया जाए। इसके लिए उनमें उद्यमिता की भावना जागृत करने की आवश्यकता है जिससे वे एक उद्यम लगाकर आर्थिक रूप से स्वावलम्बी बन सके और गांवों में रोज़गार सृजन में अपना योगदान कर सकें। इसके लिए उन्हें मूलभूत सुविधाएं, प्रशिक्षण, परामर्शी सेवाएं, वित्तीय सुविधाएं और विपणन सहायता प्रदान करनी होगी। यह कदम ग्रामीण विकास को एक नई गति देगा।

लघु वित्त संस्थाओं को प्रोत्साहन

आज लघु वित्त संस्थायें भी स्वयं सहायता दलों के गठन, परिचालन और विकास में महत्वपूर्ण योगदान दे रही हैं। इन संस्थाओं के समक्ष सबसे बड़ा मुद्दा वित्तीय साधन जुटाने का है। इन संस्थाओं को विदेशों से भी साधन जुटाने में कठिनाइयां हैं। चाहे वह इक्विटी के रूप में हो या ऋण के रूप में। इन्हें बैंक वित्त पर ही निर्भर रहना पड़ता हैं। इन संस्थाओं के समक्ष भी लेन-देन की लागत एक समस्या है।

चूंकि स्वयं सहायता दलों का भविष्य लघु वित्त संस्थाओं से जुड़ा हुआ है। अतएव सुझाव है कि इन संस्थाओं को भी बचत संग्रहण करने और अन्य वित्तीय सेवाएं प्रदान करने के लिए समान अवसर मिलने चाहिए। दूसरा सुझाव यह है कि इनके सफल संचालन और नियंत्रण के लिए एक अलग से

विनियामक व्यवस्था की आवश्यकता है।

राष्ट्रीय बैंक द्वारा लघुवित्त गैर बैंकिंग वित्तीय संस्था का गठन

राष्ट्रीय बैंक ने अन्य लघु वित्त संस्थाओं के पथ-प्रदर्शन हेतु एक गैर बैंकिंग वित्तीय संस्था गठन करने का निर्णय लिया है। इस संस्था की अधिकृत पूंजी 100करोड़ रुपये होगी जिसमें जारी पूंजी (Issued Capital)20 करोड़ रुपये की होगी जिसमें राष्ट्रीय बैंक और अन्य बैंकों के बीच क्रमशः 51 प्रतिशत और 49 प्रतिशत की भागीदारी होगी।

राष्ट्रीय बैंक के अध्यक्ष के अनुसार इसे सर्वप्रथम कर्नाटक में पाइलट प्रोजेक्ट के आधार पर चलाया जाएगा। इसका नाम होगा 'नाबार्ड फाइनेन्शियल सर्विसेज लि.' (राष्ट्रीय बैंक वित्तीय सेवाएं लि.) जो कुछ ही महीनों में कार्य करना शुरू कर देंगी।

इस संस्था के सामने उच्च लेन-देन की लागत कम करना, प्रक्रिया में पारदर्शिता, ब्याज दरों में कमी और वसूली में उत्पीड़न कार्रवाई रोकने की चुनौतियां होगी।

भारतीय औद्योगिक विकास बैंक और एल.आई.सी. हाउसिंग के अनुसार लघु वित्त संस्थाएं और स्वयं सहायता दल समावेशित विकास के लिए आदर्श उपाय हैं। उन्होंने बताया कि लघु वित्त संस्थाओं को 'स्वयं विनियमन' पद्धति अपनानी चाहिए। इनके पर्यवेक्षण और विनियमन के लिए उन्होंने तीन टियर प्रणाली के गठन का सुझाव दिया है - जिला स्तर पर, राज्य स्तर पर और राष्ट्रीय स्तर पर। जिला स्तर पर लघु वित्त संस्थाओं की एक यूनिट गठित होनी चाहिए जो एक समान लेखा-परीक्षा, ऋण मूल्यांकन, आन्तरिक नियंत्रण द्वारा पर्यवेक्षण सुनिश्चित करेंगी। यहां आस्तियों का वर्गीकरण सबसे चुनौती भरा कार्य होगा। जिला स्तर लघु वित्त संस्थाओं का पर्यवेक्षण राज्य स्तर पर गठित इकाई करेगी जबकि राज्य स्तर पर गठित इकाई का पर्यवेक्षण राष्ट्रीय स्तर की इकाई करेगी।

◆

प्राथमिकता क्षेत्र उधारों पर संशोधित दिशा-निर्देश

प्राथमिकता क्षेत्र को देय उधारों के संबंध में 30 अप्रैल 2007 से प्रभावी संशोधित दिशा-निर्देशों के अंतर्गत यह अपेक्षित है कि इन उधारों का आधार ज्यादा व्यापक बनाया जाए। एतद्पश्चात प्राथमिकता क्षेत्र के लक्ष्य और उप-लक्ष्य समायोजित निवल बैंक ऋण (एनबीसी) से संयोजित किए जाएं निवल बैंक ऋण (बैंकों द्वारा एचटीएम श्रेणी में धारित गैर-एसएलआर बाण्ड) अथवा बैलेंसशीट में असम्मिलित ऋणों के बराबर ऋण राशि, इनमें से जो भी पूर्ववर्ती लेखा वर्ष में 31 मार्च की स्थिति में हो। प्राथमिकता क्षेत्र ऋण के प्रयोजनों हेतु एएनबीसी की गणना करते समय अब बकाया एफसीएनआर (बी) और एनआरएनआर की जमाराशियां नहीं घटाई जाएंगी। सभी अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के लिए प्राथमिकता क्षेत्र की व्यापक श्रेणियां निम्नानुसार हैं:

कृषि (प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष वित्तपोषण): कृषि हेतु प्रत्यक्ष वित्तपोषण के अंतर्गत लघु, मध्यम और दीर्घावधी के वे सभी ऋण शामिल है जो कृषि एवं तत्संबंधी गतिविधियों (जैसे दुग्ध उत्पादन, मत्स्यपालन, सूअरपालन, मुर्गीपालन और मधुमक्खीपालन) के लिए वैयक्तिक आधार पर किसानों के वैयक्तिक तौर पर गठित स्वावलंबी समूहों अथवा संयुक्त दायित्व समूहों की असीमित तथा कार्पोरेट इकाइयों, भागीदारी प्रतिष्ठानों और संस्थाओं को निर्धारित सीमा के दायरे में कृषि /तत्संबंधी गतिविधियों के लिए दिये गए हों। कृषि हेतु अप्रत्यक्ष वित्त के अंतर्गत वे सभी ऋण आते हैं जो कृषि एवं तत्संबंधी गतिविधियों से जुड़े विनिर्दिष्ट व्यक्तियों को दिये गए हों।

लघु उद्यम (प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष ऋण) : छोटे उद्यमों हेतु प्रदत्त प्रत्यक्ष वित्तपोषण के अंतर्गत उत्पादन और सेवा क्षेत्र (माल का उत्पादन, प्रसंस्क्रण और संरक्षण) से जुड़े सभी वैयक्ति (मायक्रो) और लघु उद्यमों को प्रदत्त ऐसे ऋण शामिल रहेंगे जिनके प्लांट और मशीनरी तथा उपकरण में निवेशित राशि निर्दिष्ट सीमा से अधिक नहीं हो। माइक्रो और लघु (सेवा) उद्यमों में सड़क और पानी के परिवहन से जुड़ छोटे परिचालक, छोटे कारोबार, पेशेवर तथा स्व-नियोजित व्यक्ति और कतिपय अन्य सेवा उद्यम शामिल हैं। लघु उद्यमों हेतु अप्रत्यक्ष वित्तपोषण के अंतर्गत किसी भी ऐसे व्यक्ति को प्रदत्त ऋण शामिल रहेंगे जो शिल्पियों, ग्रामीण और कुटीर उद्योगों, हस्तकरघा अथवा इन क्षेत्रों के उत्पादन से जुड़ी सहकारी समितियों को कच्चा माल देता हो या उनके उत्पादन की बिक्री से जुड़ा हो।

भारत में वित्तीय समेकन तथा कृषि-क्षेत्र समस्याएँ एवं समाधान

◉ डॉ. राजीव कुमार सिन्हा
(रिसर्च एसोसिएट)
ति.मॉ. भागलपुर विश्वविद्यालय
भागलपुर

भारत में कृषि क्षेत्र का महत्व इस तथ्य से भी स्वयं सिद्ध है कि यह देश की लगभग 69 प्रतिशत आबादी को अभी भी प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से रोजगार के साधन उपलब्ध कराता है । **देश के सकल घरेलू उत्पाद में 21 प्रतिशत तथा कुल निर्यात मूल्य में 11 प्रतिशत का योगदान '11वीं पँचवर्षीय योजना के प्रारूप में कृषि-क्षेत्र के विस्तार' तथा 'सुदृढ़ीकरण' के आधार को पुख्ता करता है।** 'कृषि-क्षेत्र' देश के औद्योगिक तथा सेवा-क्षेत्र को दीर्घकालिक तथा मजबूत निश्चित आधार प्रदान करता है । यद्यपि देश के सकल घरेलू उत्पाद (जी.डी.पी.) में कृषि क्षेत्र की हिस्सेदारी वर्ष 1950-51 के 55.4 प्रतिशत के उच्चतम स्तर से घटकर वर्ष 2004-05 में 21 प्रतिशत रह गयी है, तथापि 54 वर्षों की इस लम्बी अवधि में कृषि पर निर्भर जनसंख्या में अत्यधिक वृद्धि हुई है । वर्ष 1950-51 में तत्कालीन कुल जनसंख्या का 75 प्रतिशत (27 करोड़) कृषि पर निर्भर थी, जबकि वर्तमान में यह प्रतिशत रूप में घटकर (6 प्रतिशत की कमी सहित) 69 प्रतिशत रह गयी है, लेकिन परिणामात्मक रूप में यह पूर्वापेक्षा 45 करोड़ बढ़कर 72 करोड़ हो गयी। खतरनाक गति से बढ़ती जनसंख्या, निरन्तर छोटी होती जोतें, 'कृषि कार्य हेतु आवश्यक विभिन्न आदानों में सरकार द्वारा दी जाने वाली अनुदान या विभिन्न प्रकार की योजनाओं के तहत सहायता के बावजूद खेती की बढ़ती लागत, देश के उत्तर-पूर्वी हिस्सों में प्रायः प्रत्येक वर्ष आ जानेवाली विध्वंसकारी बाढ़ तथा अन्य भागों में पड़ जाने वाले सूखे के प्रकोप, कृषि क्षेत्र में कम होते निवेश आदि कारणों, बाजार में 'बिचौलियों/मध्यस्थों' की अत्यधिक एवं अनावश्यक उपस्थिति के परिणामस्वरूप कृषकों को उनके उत्पादों का समुचित मूल्य नही मिल पाने से खेती घाटे का सौदा बन गयी है। 'भारत के कृषि-क्षेत्र' के सम्बन्ध में एक और चिन्ताजनक तथा खतरनाक तथ्य यह है कि, 'क्षेत्रवार जी.डी.पी. वृद्धि दर' के पैमाने पर वर्ष 2003-04 से वर्ष 2006-07 के चार वर्षीय अवधि में (वर्ष 2005-06 की 6.06 प्रतिशत की वृद्धि को छोड़कर) इसमें लगातार कमी आती गयी है। आँकड़ों के अनुसार 'कृषि क्षेत्र की जी.डी.पी. वृद्धि दर', जो वर्ष 2003-04 में 10 प्रतिशत थी, वह 7.27 प्रतिशत गिरकर वर्ष 2006-07 में मात्र 2.73 प्रतिशत रह गयी है। इतने कम 'कृषि क्षेत्र के सकल घरेलू उत्पाद वृद्धि दर' के सहारे (जो 'दसवीं पँचवर्षीय योजना काल' में औसतन 4 प्रतिशत लक्षित थी, परन्तु इसका 2 प्रतिशत से कम रहना) '11वीं पँचवर्षीय योजना के अंत तक' जी.डी.पी. की लक्षित औसत वृद्धि दर (9 प्रतिशत) की प्राप्ति असम्भव नहीं, तो कठिन अवश्य है । इसके लिए जरूरत होगी (1) देश के 48.6 प्रतिशत ऋणग्रस्त कृषकों, 66 प्रतिशत सीमान्त किसानों में से कर्ज के बोझ तले दबे 45 प्रतिशत कृषक-गृहों को विभिन्न संस्थागत साख-एजेंसियों द्वारा प्रक्रियागत जटिलताओं को कम करके तत्काल समुचित वित्तीय सहायता देने की, (2) कृषि प्रसार सेवाओं को सुदृढ़ करके कृषि की आधुनिकतम तकनीकों की प्रायोगिक जानकारी कृषकों तक पहुँचाने की उत्तम व्यवस्था करने की, (3) कृषि से सम्बन्धित अनेकों आर्थिक (वित्तीय), जलवायुवीय, उत्पादन, उत्पादकता, उर्वरकों के प्रयोग, बैंकों द्वारा प्रदत्त कृषि साख तथा उनकी उपयोगिता/बर्बादी से सम्बन्धित कृषि-स्थैतिकीय आँकड़ों के संकलन एवं विश्लेषण हेतु कृषि आर्थिक अनुसंधान केन्द्रों, सी.एस.ओ., कृषि उत्पादन व्यय तथा कृषि मूल्य-निर्धारण में संलग्न एजेंसियों के विस्तार एवं सुदृढ़ीकरण की (4) प्रत्येक राज्य में 'किसान आयोग' के गठन एवं उन्हें सक्षमतापूर्वक संचालित करने हेतु अधोसंरचनात्मक सुविधाएँ प्रदान करने की एवं (5) एक समेकित कृषि वित्त प्रणाली विकसित करने की ।

वित्तीय समेकन

इस तथ्य में कोई संदेह नहीं कि भारत एक अत्यधिक बैंकों वाला परन्तु 'निम्न सेवा प्रदायक देश' के रूप में वर्णित है ।

लोगों की विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए देश में सार्वजनिक क्षेत्र में वाणिज्यिक बैंक, निजी क्षेत्र के बैंक, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक तथा बहुत बड़ी संख्या में 'सहकारी बैंक' हैं। इसके बावजूद बहुत बड़ी संख्या में लोग 'बैंकिंग पद्धति' से बाहर है ।

'राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन' ने अपने 'एन.एस.एस. 59 वें दौर' के प्रतिवेदन में बताया है कि देश के 89.35 मिलियन कृषक-परिवारों में से 43.42 मिलियन (48.6 प्रतिशत) ही कर्जदार के रूप में प्रतिसूचित है । समग्र 'कृषक परिवारों' में से 1 हेक्टेयर या उससे भी कम खेती योग्य भूमि के स्वामी अर्थात् मुख्यतया 'सीमान्त कृषक परिवारों' की संख्या 66 प्रतिशत है। आंकड़ों के अनुसार देश में लगभग 5,89,71,000 कृषक परिवार 'सीमान्त कृषकों' की श्रेणी में आते हैं। इनमे से लगभग 45 प्रतिशत सीमान्त कृषक ही (2,65,36,950) कर्जदारों के रूप में चिन्हित हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि अभी भी देश के कुल 'सीमान्त कृषक परिवारों' में से लगभग 55 प्रतिशत, यानी आधी से अधिक संख्या (3,24,34,050) किसी भी प्रकार के साख आच्छादन से वंचित या बाहर है। एक ओर जहाँ संस्थागत स्रोत प्रदत्त ऋण सुविधा का 57 प्रतिशत भाग का योगदान करते है, वही दूसरी ओर गैर-संस्थागत एजेंसियाँ बचे हुए 43 प्रतिशत भाग का योगदान करती हैं। अभुगतानित (न चुकाए हुए) ऋण-राशियों के प्रतिशत के रूप में ऋणों को प्रदान करने वाले साधनों (स्रोतों) की भागीदारी से सम्बन्धित आँकड़े सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों को सबसे ऊँचे पायदान पर (36 प्रतिशत) रखते हैं। महाजन (26 प्रतिशत) द्वितीय स्थान पर, सहकारी संस्थाएँ (19 प्रतिशत) तीसरे स्थान पर, अन्य गैर संस्थागत स्रोत (17 प्रतिशत) चतुर्थ पायदान पर तथा सरकार (2 प्रतिशत) सबसे निचले सोपान पर है। सभी वर्गों के कृषकों से सम्मिलित प्रति व्यक्ति औसतन 12,585 रुपये की 'न चुकाई हुई ऋण राशि' के मुकाबले 'सीमान्त कृषक' तथा 'लघु कृषकों' के मामले में यह राशि उत्साहजनक ढंग से क्रमशः 6,121 रुपये तथा 6,545 रुपये मात्र हैं। इसका मतलब यह हुआ कि बैंकों या अन्य वित्तीय संस्थाओं द्वारा कृषकों को प्रदत्त ऋण राशियों को चुकाने या वापस करने के मामले में सीमान्त एवं लघु कृषक परिवार सुखद एवं आश्चर्यजनक रूप से अन्य श्रेणियों के कृषकों से आगे है। आँकड़ेधारित विश्लेषण यह प्रदर्शित करते है कि देश में जनसंख्या का (विशेषकर ग्रामीण जनसंख्या का) बहुता बड़ा भाग संस्थागत साख-क्षेत्र से बाहर है तथा 'सूदखोरों', महाजनों से ऊँची एवं अनियमित ब्याज दरों तथा शर्तों पर कर्ज लेकर अपने कृषि सम्बन्धी उद्यमों का संचालन करते हुए शोषित होने के लिए बाध्य है। कृषकों तथा ग्रामीण जनसंख्या की इस पीड़ा को ध्यान में रखकर वर्ष 2007-08 के आम बजट के माध्यम से माननीय केन्द्रीय वित्त मंत्री, भारत सरकार द्वारा ग्रामीण बैंकों के विस्तारीकरण तथा सुदृढ़ीकरण पर विशेष बल देकर कृषि क्षेत्र को विकसित करने का प्रयास किया गया है ।

बजट (2007-08) तथा ग्रामीण बैंकों का विस्तार

बजट में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की खराब माली हालत तथा इनकी सर्वांगीण ग्रामीण विकास में अहम भूमिका की बात स्वीकार कर इनके विस्तारीकरण के प्रयासों की घोषणा किया जाना कृषि तथा ग्रामीण क्षेत्रों में वित्तीय समेकन के प्रति रचनात्मक सरकारी चिन्ता का परिचायक है।

वस्तुतः सरकार यह समझने लगी है की अगर 'कृषि क्षेत्र और ग्रामीणों' को पर्याप्त व आसानी से कर्ज उपलब्ध कराना है, तो क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों (आर.आर.बी.) को सुदृढ़ करना ही होगा। ग्रामीण क्षेत्रों में साख उपलब्ध कराये जाने में अभी भी आर.आर.बी. की भूमिका काफी उल्लेखनीय है। देश के सभी वर्गों तक समान रूप से वित्तीय सेवा पहुँचाने पर आर. रंगराजन समिति की सिफारिशों को स्वीकार करते हुए ग्रामीण बैंकों को बड़े पैमाने पर अपनी शाखाओं के विस्तार करने की छूट दे दिया जाना, सही दिशा में समयोपयोगी सोच का द्योतक है। वर्ष 2007-08 के दौरान राष्ट्र के उन 80 जिलों में ग्रामीण बैंकों की शाखाएँ खोलने की घोषणा की गयी है, जहाँ अभी तक उनकी कोई उपस्थिति दर्ज नहीं की जा सकी है। ग्रामीण बैंकों की वित्तीय स्थिति खराब होने के बाद से पिछले एक दशक के दौरान इनकी शाखाओं का काफी कम विस्तार हुआ है।

ग्रामीण बैंकों को अपने फँसे पड़े कर्जों (एन.पी.ए.) की वसूली के लिए 'प्रतिभूति तथा वित्तीय परिसम्पतियाँ पुनर्गठन (एस.ए.आर.एफ.ए.ई.एस.आई.) कानून का लाभ उठाने की

सलाह दिया जाना सरकार की ग्रामीण बैंकों की दीर्घकालीन सुदृढ़ता के प्रति अभिरूचि का परिचायक है। हालांकि, ग्रामीण बैंकों में एन.पी.ए. की स्थिति कोई बहुत ज्यादा खराब नहीं है। इस दिशा में 'वित्त मंत्रालय' द्वारा ग्रामीण बैंकों को एन.आर.ई. और एफ.सी.एन.आर खाते खोलने की मंजूरी देने की घोषणा किया जाना भी इनके वित्तीय समेकन की दिशा में एक सार्थक प्रयास माना जायेगा। इसका प्रत्यक्षतः यह अर्थ हुआ कि अनिवासी भारतीय 'ग्रामीण बैंकों' में विदेशी मुद्रा में भी खाता खोल सकते हैं। यह भी विदित है कि भारतीय रिज़र्व बैंक भी पिछले कुछ समय से काफी उदार हुआ है तथा ग्रामीण बैंकों को विदेशी मुद्रा सम्बन्धी कारोबार करने, एटीएम लगाने आदि की वांछित स्वतंत्रता दी है। यह ग्रामीण बैंकों में एकीकरण होने से ही सम्भव हुआ है जो वित्तीय समेकन के आदर्श रूप की अभिव्यक्ति है। प्रायोजक बैंकों द्वारा एकीकरण के बावजूद जिन ग्रामीण बैंकों की वित्तीय स्थिति ठीक नहीं हुई है, उन्हें सरकार की तरफ से आर्थिक मदद दिये जाने का आश्वासन भी ग्रामीण एवं कृषि क्षेत्र के सर्वांगीण विकास के प्रति सरकार की वाजिब एवम् उत्साहजनक चिंता को दर्शाता है।

समावेशित विकास तथा आर.आर.बी. आच्छादन

कुल भौगोलिक क्षेत्र के 70 प्रतिशत से अधिक भाग में ग्रामीण परिवेश रखनेवाले भारत देश में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की भूमिका स्वयंसिद्ध है। वर्तमान में, देश में 96 आर.आर.बी. कार्यरत हैं। उनकी संयुक्त गैर निष्पादक आस्तियाँ (एन.पी.ए.) 2890.47 करोड़ रुपये है, जो इनके द्वारा 31 मार्च 2006 तक प्रदत्त कुल अग्रिमों का 7.28 प्रतिशत है। हालाँकि, यहाँ थोड़ी राहत देने वाली बात है कि वर्ष 2004-05 के कुल एन.पी.ए. (8.53 प्रतिशत) की तुलना में इसमें वर्ष 2005-06 में 1.25 प्रतिशत की कमी आयी है, जिसके परिणामस्वरूप यह 7.28 प्रतिशत के स्तर पर आ गया। कहना अनुचित न होगा कि वित्तीय समावेशन अभियान में आर.आर.बी. को एक क्रांतिक भूमिका अदा करनी होगी। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि ग्रामीण साख के वितरण में आर.आर.बी. तृतीय बाँह के रूप में उभरे हैं। ग्रामीण बैंकों के वित्तीय समेकन में आर.आर.बी. के महत्व को देखते हुए ही केन्द्रीय वित्त मंत्री ने वर्ष 2007-08 के दौरान देश के आर.आर.बी. अनाच्छादित 80 जिलों में से प्रत्येक में कम-से-कम एक शाखा खोलने का निर्देश दिया है। वर्तमान में इस ग्रामीण वित्तीय सत्ता की देशभर में सम्मिलित रूप से कुल 14,494 से अधिक शाखाएँ है। साथ-ही-साथ देशभर में विद्यमान लगभग 600 जिलों में से आर.आर.बी. मात्र 525 जिलों में ही अपनी उपस्थिति दर्ज करा सके हैं। भारत जैसे कृषि प्रधान राष्ट्र में जहाँ कि अर्थव्यवस्था के विकास की पूर्व निर्धारित शर्त, ग्रामीण क्षेत्रों का सर्वांगीण विकास है, आर.आर.बी. की स्थापना तथा शाखाओं का विस्तार सभी जिलों तथा इनके प्रत्येक गाँव तक होना ही चाहिए।

कृषि क्षेत्र मे समेकित विकास-चुनौतियाँ

कृषि विकास से सम्बन्धित प्रभावशाली कदमों के विलग, कृषि-क्षेत्र के लिए वास्तविक आबंटन भौतिक रूप से नाकाफी है। वित्तीय वर्ष 2007-08 के लिए प्रस्तुत बजट में सकल घरेलू उत्पाद (जी.डी.पी.) के अनुपात के रूप में योजना व्यय लगभग स्थिर है। कृषकों की दरिद्रता दूर करने के लिए आवश्यक लाभदायक मूल्य समर्थन दिये जाने से सम्बन्धित उपायों की भी कोई विशेष चर्चा नहीं है। पुनश्च, इस प्रकार के मूल्य समर्थन के अभाव में कृषि पदार्थों के एक वर्ग पर चुंगीकर में प्रस्तावित कमी से आयातित कृषि पदार्थों की कीमत भारतीय उत्पादों से कम ही होगी, जो अन्ततः कृषकों की विशुद्ध आय में और कमी ही लायेगा। यह स्थिति किसानों की दुर्दशा को ज्यादा कठिन बना सकती है। इस प्रकार कृषि-से सम्बन्धित अधोसंरचनाओं (विशेषकर कृषि वैज्ञानिक तथा कृषि आर्थिक शोध एवं विकास) के विकास हेतु विनियोग में यथेष्ट एवं वास्तविक वृद्धि किये बिना यह सम्भव नहीं है कि कृषि क्षेत्र का धनात्मक अर्थों में व्यापक कायाकल्प हो। इन परिप्रेक्ष्यों में स्वामीनाथन समिति की अनुशंसाओं पर सरकार द्वारा अभी भी विचार किये जाने की घोषणा करना भविष्य में कृषि क्षेत्र के लिए थोड़ी आशा की किरण अवश्य दिखाता है।

भारत के प्रथम प्रधानमंत्री (पं. जवाहरलाल नेहरु) ने कृषि के सम्बन्ध में ठीक ही कहा था - 'दूसरी सभी चीजें प्रतीक्षा कर सकती हैं, परन्तु कृषि नहीं।' कृषि की इसी समय पर विभिन्न आदानों की जरूरतों की बाध्यता को ध्यान में रखते हुए राष्ट्रीय किसान आयोग द्वारा समर्पित कृषकों

के लिए राष्ट्रीय नीति के प्रारूप पर विचार किया जा रहा है। इस सम्बन्ध में केन्द्रीय वित्त मंत्रालय द्वारा वर्ष 2007-08 के आम बजट के माध्यम से कृषकों की आर्थिक अवस्था में सुधार लाने के लिए तथा उनके लिए एक न्यूनतम विशुद्ध आय सुनिश्चित करने के उद्देश्य से कई प्रस्तावों को लागू करने की योजना बनाना सकारात्मक कदम है।

वित्तीय समेकन तथा रिज़र्व बैंक की नीति

जैसा कि विदित है वित्तीय समेकन एक वहन किये जा सकने योग्य व्यय पर (मगजी खाते नहीं) बैंकिंग सेवाएं वंचित वर्ग तथा समाज के निम्न आय वर्ग के लोगों को उपलब्ध कराया जाना है। एक खुले तथा सक्षम समाज के लिए लोकोपयोगी वस्तुओं तथा सेवाओं तक अबाधित पहुँच विकास की अपरिहार्य शर्त है। चूंकि बैंकिंग सेवाएँ लोकोपयोगी होती हैं, यह अनिवार्य हो जाता है कि बिना किसी भेदभाव के बैंकिंग तथा भुगतान सेवाओं को सम्पूर्ण जनसंख्या के लिए लोक नीति के मुख्य उद्देश्य के रूप में उपलब्ध कराया जाय। बैंकिंग सेवाओं की जन-साधारण तक आसान उपलब्धता की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा वित्तीय समेकन से सम्बन्धित निम्न नीतियों को अंगीकार किया गया है-

- जब बैंक कुछ विशेष क्षेत्रों की तरफ अपेक्षित ध्यान नहीं देते हैं तब नियामकों को स्थिति में सुधार लाने के लिए आगे आना है । यही कारण है कि रिज़र्व बैंक वित्तीय समेकन पर काफी जोर देता है ।
- एक व्यवहार कुशल उपाय के रूप में वित्तीय समावेशन में स्तरोन्नयन के उद्देश्य से रिज़र्व बैंक द्वारा अपने वित्तीय वर्ष 2005-06 के वार्षिक नीति वक्तव्य में बैंकिंग क्रिया कलापों के सम्बन्ध में अपनी चिंताएँ व्यक्त की हैं। ये चिंताए बैंकों में व्याप्त होती जा रही उस प्रवृत्ति की ओर है, जिसके तहत जनसंख्या के एक बहुत बड़े भाग को बैंकिंग सेवाओं की ओर आकर्षित करने के बजाय उन्हें छोड़ा जा रहा है। इसलिए, केन्द्रीय बैंक द्वारा ऐसे बैंकों को वित्तीय समावेशन के उद्देश्य के साथ पंक्तिबद्ध करने के लिए उन्हें अपने प्रचलित (विद्यमान) व्यावसायिक व्यवहारों की पुनर्समीक्षा करने के लिए कहा गया है।
- वर्ष 2005-06 की नीति की मध्यावधि समीक्षा में अपेक्षाकृत बेहतर वित्तीय समावेशन प्राप्त करने के उद्देश्य से रिज़र्व बैंक द्वारा बैंकों को इस आशय का सदुपदेश दिया गया कि वे भारतीय जनसंख्या के बहुत बड़े वंचित या संसाधन विहीन भाग को, या तो शून्य जमा राशि पर या बहुत कम शेष (बचत) राशियों पर न्यूनतम सम्भव व्यय भारसहित बुनियादी बैंकिंग 'नो फ्रिल्स खाता' खोलने की सुविधा उपलब्ध करायें। ऐसे खातों में लेन-देन की प्रकृति तथा संख्या सीमाबद्ध की जायेगी तथा पारदर्शितापूर्ण ढँग से ग्राहकों को अग्रिम रूप से बता दी जायेगी। सभी बैंकों को ऐसे 'नो फ्रिल्स खातों' द्वारा प्रदत्त सेवाओं या सुविधाओं के विषय में व्यापक प्रचार करने की सलाह दी गयी है, ताकि अपेक्षाकृत व्यापक वित्तीय समावेशन सुनिश्चित किया जा सके।

रिज़र्व बैंक द्वारा बेहतर वित्तीय समावेशन के लक्ष्य के प्राप्ति हेतु किये गये महत्वाकांक्षी प्रयास तो निःसंदेह रूप से सराहनीय हैं, परन्तु प्रभावोत्पादक परिणाम तभी परिलक्षित होंगे, जब सभी बैंक ईमानदारी से योजना बनाकर, इन नीतियों को व्यावहारिक रूप से अमल में लाने की जहमत उठायेंगे।

वांछित परिणामोन्मुखी उपाय

शैक्षणिक, सामाजिक तथा आर्थिक रूप से पिछड़े वर्ग के लोगों की वित्तीय सेवाओं की मुख्यधारा तक आसानी से पहुँच की असमर्थता को दूर करने के लिए पंचायत स्तर पर ऐसे कमजोर वर्ग के लोगों की साख सम्बन्धी आवश्यकताओं का सर्वेक्षणाधारित पता लगाकर तद्नुरूप अपेक्षाकृत कम ब्याज दर पर साख सुविधाएं उपलब्ध करायी जानी चाहिए । देश के किसी भी प्रकार की साख-सुविधा रूपी आच्छादन से वंचित लगभग 55 प्रतिशत सीमान्त कृषकों के परिवारों (3,24,34,050) को कृषि एवं इससे सम्बन्धित अन्य व्यवसायों के प्रति उनकी अभिरूचियों तथा निर्भरता की बाध्यता (विकल्प विहिनता) का पता लगाकर उन्हें विशेष योजना बनाकर संस्थागत साख के दायरे में लाने के विशेष उपाय किये जाने चाहिए। इसके लिए सरकार द्वारा सम्पोषित/संचालित अथवा मान्यता प्राप्त प्रबन्धन संस्थानों, राज्य ग्रामीण विकास संस्थानों, ए.ई.आर.सी., विश्वविद्यालयीन ग्रामीण अर्थशास्त्र एवं सहकारिता विभाग तथा बैंक प्रशिक्षण केन्द्रों/संस्थानों के नियमित शोधकर्मियों

तथा संकाय सदस्यों की आवश्यकतानुरूप मानदेयाधारित सेवाएं ली जा सकती है।

विभिन्न साख-संस्थाओं द्वारा कृषि सम्बन्धी कार्यों के लिए प्रदत्त साख-राशियों को वापस करने या चुकाने के मामले में सीमान्त एवं लघु कृषक परिवारों के सर्वाधिक बेहतर प्रदर्शन को ध्यान में रखते हुए, ऐसी श्रेणी के कृषकों को आगे बढ़कर आसान शर्तों पर (सम्भव हो, तो प्रोत्साहन स्वरूप कुछ अतिरिक्त छूट की घोषणा करके भी) अधिक साख सुविधाएं उपलब्ध करायी जानी चाहिए। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की अनुपस्थिति वाले जिलों में इनकी शाखाएं खोल देने मात्र से ग्रामीण क्षेत्रों का कायाकल्प नहीं हो जायेगा। प्रत्येक आर.आर.बी. के कार्य क्षेत्रान्तर्गत स्थापित/कार्यरत सभी वाणिज्यिक बैंकों, प्राथमिक कृषि सहकारी साख समितियों (पैक्स/लैम्पस/एफ.एस.एस.) तथा स्वयं सहायता समूहों (एस.एच.जी.) को यह विशेष निर्देश दिया जाना चाहिए कि कृषि एवं ग्रामीण लघु तथा कुटीर उद्योगों या छोटे-मोटे व्यवसायों के संचालन हेतु आवश्यक साख-सुविधा ग्रामीणों को उपलब्ध कराये जाने के पूर्व वे सम्बन्धित क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक की शाखा से साख की व्यवहार्यता की अनुशंसात्मक प्रतिवेदन प्राप्त करें, अर्थात् आर.आर.बी. के साथ बेहतर समन्वय स्थापित करते हुए ग्रामीण साख के मामले में उन पर विशेष एवं अतिरिक्त जिम्मेदारी सौंपनी होगी। आम बजट (2007-08) में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों को एन.आर.ई. तथा एफ.सी.एन.आर. खाते खोलने की मंजूरी देने की घोषणा कर दिये जाने के आलोक में इन बैंकों के अधिकारियों एवं कर्मचारियों द्वारा बेहतर तकनीकोन्मुखी कार्य-परिणाम तथा उच्च-स्तरीय सेवा प्रदान करवाने के उद्देश्य से उन्हें विभिन्न चरणों में अधिसूचित वाणिज्यिक बैंकों तथा बेहतर कार्य परिणाम प्रदर्शित करने वाले निजी क्षेत्र के बैंकों एवं समय-समय पर, सहकारी बैंकों के प्रशिक्षण केन्द्रों में भी विशेष प्रशिक्षण कार्यक्रमों में भेजा जाना चाहिए।

भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ कृषि-क्षेत्र को विश्व व्यापार संगठन के स्वीकार कर लिए गये प्रावधानों के अनुरूप वैश्विक एवं घरेलू चुनौतियों का सामना करने के योग्य बनाने के उद्देश्य से कृषि-क्षेत्र में वित्तीय समेकन की बेहतर पद्धति एवं प्रक्रिया आवश्यक है। इसके लिए कृषकों को (विशेषकर सीमान्त, लघु कृषकों तथा कृषि-आधारित अन्य व्यवसायों द्वारा रोज़गार खोजने वाले ग्रामीणों को) समय समय पर यथेष्ट साख-सुविधाएं संस्थागत स्रोतों द्वारा उपलब्ध कराने की व्यवस्था करनी होगी। साथ-ही-साथ इनके द्वारा उत्पादित कृषि-पदार्थों तथा प्रसंस्करण के पश्चात् मूल्य-संवर्धित खाद्य वस्तुओं के लाभकारी मूल्य पर (बिचौलियों को दरकिनार करते हुए) सहकारी कृषि विपणन समितियों द्वारा बाज़ार/बिक्री की ईमानदार, व्यापक एवं सुदृढ़ व्यवस्था सुनिश्चित करनी होगी।

इन उपायों से न सिर्फ कृषि एवं ग्रामीण विकास से सम्बन्धित विभिन्न आर्थिक जरूरतों की समय पर प्रतिपूर्ति की जा सकेगी, बल्कि कृषि-क्षेत्र में अनवरत विकास की सम्मानजनक तथा रोजगारोन्मुखी स्तरों की प्राप्ति की जा सकेगी । और यही, भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए वर्तमान समय की महत्वपूर्ण मांग भी है।

बैंकों को इस रूकावट वाली भावना से बाहर आना चाहिए कि बहुत ही आक्रमक प्रतियोगी नीति तथा सामाजिक समावेश परस्पर निषेधक/निवारक हैं। जैसा कि अन्य जगहों में भी देखा गया है, बिना फ्रिल्स के सामूहिक बैंकिंग दोनों ही स्थितियों में एक उत्साहजनक परिणाम देने वाली माध्यम हो सकती है। आवश्यकता तो इस बात की है कि बुनियादी रूप से बैंकिंग सेवाओं को इस प्रकार कम-से-कम व्यय-भार या लागत लेकर जन सामान्य को सुविधा प्रदान करने वाली एजेंसी के रूप में विपणन योग्य बनाया जाना चाहिए ताकि वह भारतीय आबादी के बहुत बड़े वंचित भाग को न्यायोचित एवं प्रोत्साहजनक ढंग से बैंकिंग की प्राथमिक सुविधाएं उपलब्ध करा सके। इसके लिए अवसर भी काफी हैं। जरूरत है सिर्फ उनके उपयुक्त समय पर व्यावहारिक ढंग से धरातलीय स्तर पर इस्तेमाल की। ◆

ग्रामीण वित्त प्रबन्धन एवं विकास में सहायक किसान क्रेडिट कार्ड योजना

◉ **डॉ. नरेन्द्र पाल सिंह**
रीडर, वाणिज्य संकाय
साहू जैन कालेज, नजीबाबाद
उत्तर प्रदेश

ग्रामीण क्षेत्रों में सभी कार्यों हेतु वित्तीय प्रबन्धन की आवश्यकता होती है उसके लिए अब कई साधन उपलब्ध हैं किन्तु ग्रामीण साहूकारों का अशिक्षित एवं गरीब लोगों पर, अभी तक भी आतंक व्याप्त है, जिसमें शारीरिक उत्पीड़न, बन्धुआ मजदूरी, बर्बरता तथा अनैतिक कार्य शामिल है । मूलधन से कई गुणा अधिक धन देकर भी वे ऋणग्रस्ता से छुटकारा नहीं पा सकते। कृषि के क्षेत्र में बदलती नयी तकनीकी, अच्छे बीज, खाद, रसायन, कीटनाशक दवाइयों, डीज़ल, बिजली के बिलों का भुगतान आदि के लिए पैसे की दिन-प्रतिदिन आवश्यकता होती रहती है ताकि किसान अपनी उपज बढ़ाकर अपने जीवन स्तर को ऊँचा उठाकर देश की उन्नति में भागीदार बन सके। गांव में रहने वाला किसान आज भी पैसे के अभाव में खेती की पुरानी तकनीक एवं पद्धतियों को अपना रहा है परिणामस्वरूप खेती के उत्पादन में पर्याप्त वृद्धि नहीं हो पा रही है और वह गरीबी की रेखा से नीचे जीवनयापन करने को मजबूर है। विगत वर्षों में किसानों की दशा में सुधार लाने और गरीब लोगों के जीवन स्तर को ऊँचा उठाने के लिए सरकार द्वारा अनुदान तथा स्वयंसेवी संस्थाओं द्वारा विभिन्न कार्यक्रम चलाकर करोड़ों रुपये की मदद प्रदान की जाती रही है । उक्त सभी बातों को ध्यान में रखते हुए बैंकों द्वारा वर्ष 1998 से किसानों को अल्पकालीन कृषि क्रियाओं तथा उससे सम्बन्धित क्रियाओं जैसे डेरी, मुर्गी पालन तथा नये किस्म के खाद, बीज, कृषि उपकरणों तथा चालू पूंजी हेतु किसान क्रेडिट कार्ड की सुविधा मुहैया करायी गयी है। किसान क्रेडिट कार्ड योजना का उद्देश्य किसानों को पर्याप्त एवं समय पर वित्तीय सुविधाएं उपलब्ध करना है ताकि किसान अपनी खेती की आवश्यकताओं एवं लागतों को लोचदार ढंग से पूरा कर सके। इस योजना के अन्तर्गत बैंक पांच वर्ष हेतु किसान की वित्तीय आवश्यकता का अनुमान लगाकर उसकी साख सीमा का निर्धारण करता है जिस पर वर्ष प्रतिवर्ष पुनर्विचार भी किया जाता है।

गांव में रहने वाला किसान आज भी पैसे के अभाव में खेती की पुरानी तकनीक एवं पद्धतियों को अपना रहा है परिणामस्वरूप खेती के उत्पादन में पर्याप्त वृद्धि नहीं हो पा रही है और वह गरीबी की रेखा से नीचे जीवनयापन करने को मजबूर है।

किसान क्रेडिट कार्ड योजना के अन्तर्गत किसान का खाता खोलकर उसे चेक बुक निर्गत कर दी जाती है जिससे वे अपनी आवश्यकतानुसार कृषि सामान एवं उपकरण खरीदने तथा अन्य खर्चे हेतु बैंक से धन आहरित कर सकते हैं। इसके लिए उन्हें किसी भी प्रकार की निरख अथवा बिल, रसीद की जरूरत नहीं होती, प्रतिभूति के रूप में बैंक के पास अपनी भूमि को बन्धक रखना होता है तथा एक अन्य पक्षकार द्वारा गारन्टी दिलानी होती है। जब किसान फसल को बेचकर धन प्राप्त करता है तो उसे बैंक के ऋण खाते में जमा कराना होता है, साथ ही बैंक, किसान से यह भी उम्मीद रखता है कि वह साल में कम से कम एक सप्ताह के लिए अपने खाते को ऋण मुक्त रखेगा। किसान क्रेडिट कार्ड योजना के अन्तर्गत प्रदान किये गये ऋणों पर कृषि बीमा योजना भी लागू की गयी है। किसान यदि ऋण वापसी की शर्त को समय रहते पूरा नहीं कर पाता तो बैंक चेक बुक की सुविधा को वापस भी ले सकता है और बैंक पुनः यह सुविधा तभी प्रदान करेगा जब किसान बिल, रसीद, भाव-सूची आदि प्रस्तुत करेगा। बैंक इन ऋणों पर भी अन्य ऋणों की भांति पूर्ण निगरानी रखता है और यदि शर्तें पूरी न हों तो कार्ड सुविधा को वापस भी ले सकता है ।

किसान क्रेडिट कार्ड योजना के अन्तर्गत अब तक मुख्य रूप से फसल ऋण ही स्वीकृत किये जाते थे जबकि किसानों की निवेश ऋण आवश्यकतायें जैसे सम्बद्ध और कृषित्तर गतिविधियों से सम्बन्धित आवश्यकतायें इस योजना के अन्तर्गत नहीं आती थी और बैंकों एवं किसानों को अतिरिक्त समय एवं

लागत तथा क्रियाविधिगत असुविधा भी झेलनी पड़ती थी इस बात को ध्यान में रखते हुए नाबार्ड ने 4 अक्तूबर 2004 को किसान क्रेडिट कार्ड योजना को संशोधित किया जिससे इस योजना के अन्तर्गत कृषि और सम्बद्ध गतिविधियों के लिए मियादी ऋण की स्वीकृति भी की जा सके। किसान क्रेडिट कार्ड एक नया सफल वित्तीय साधन है जिसे वर्ष 1998-99 के केन्द्रीय बजट में की गयी घोषणा के अनुसरण में शुरू किया गया था। जून 2000 में इस योजना को बढ़ाने के हेतु बैंकों को यह भी निर्देशित किया गया था कि किसानों को पांच हजार रुपये से भी कम सीमा के लिए किसान क्रेडिट कार्ड जारी किये जाये और इस योजना के अन्तर्गत खाते में शेष जमा पर ब्याज का भी भुगतान किया जाये। इस योजना के अन्तर्गत शामिल किये गये हिताधिकारी को क्रेडिट कार्ड और पासबुक जारी की जाती है जिसमें नाम, पता, भूमिधारिता के विवरण, उधार लेने की सीमा, वैधता अवधि का उल्लेख तथा धारक का पासपोर्ट के आकार का फोटो आदि होता है जिसका उपयोग पहचान पत्र के रूप में भी किया जा सके और उसमें निरन्तर आधार पर होनेवाले लेनदेनों का लेखा जोखा दर्ज किया जा सके। उधार प्राप्तकर्ता के लिए यह आवश्यक है कि जब कभी वह खाते में लेन-देन करे तभी कार्ड एवं पासबुक अनिवार्य रूप से बैंक में प्रस्तुत करे। अब किसान क्रेडिट कार्ड योजना के द्वारा मियादी ऋण तथा अल्पावधि कार्यशील पूंजी ऋण सुविधायें प्रदान की जाती हैं तथा पासबुक में अल्पावधि/फसल ऋण, सम्बद्ध गतिविधियों के लिए कार्यशील पूंजी ऋण तथा मियादी ऋण के लिए तीन अलग-अलग रिकार्ड रखे जाते हैं। अल्पावधि ऋण/फसल ऋण परिक्रामी नकदी ऋण सुविधा के रूप में होता है जिसमें परिचालनगत भूमिधारिता, फसल पद्धति और वित्त की मात्रा के आधार पर निश्चित सीमा के भीतर कई आहरण और चुकौतियां अपेक्षित है। ऋण सीमा निश्चित करते समय फसल उत्पादन से सम्बन्धित पूर्व वर्ष के समग्र उत्पादन की ऋण आवश्यकताओं और अनुषंगी गतिविधियों पर विचार किया जाता है। बैंकों के विवेकानुसार उपसीमाएं निश्चित की जा सकती हैं। मियादी और कार्यशील पूंजी ऋण की मात्रा की सीमा किसानों द्वारा अभिग्रहित की जाने वाली प्रस्तावित आस्ति की इकाई लागत, खेत पर पहले से ही शुरू सम्बद्ध गतिविधि और किसान की चुकौती क्षमता के बारे में बैंक के निर्णय पर आधारित होती है। बैंकों द्वारा किसान क्रेडिट कार्ड की वैधता तीन वर्ष से बढ़ाकर पांच वर्ष कर दी गयी है। जहां अल्पावधि तथा कार्यशील पूंजी ऋण बारह महीने में प्रतिदेय होता है वहीं मियादी ऋण प्रचलित दिशा निर्देशों के अनुसार गतिविधि/निवेश के प्रकार के आधार पर अधिकतम

किसान क्रेडिट कार्ड योजना की प्रगति

(31 मार्च 2006 तक) (कार्ड मिलियन में)

वर्ष	सहकारी बैंक	क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक	वाणिज्यिक बैंक	कुल
1998-1999	0.16	0.01	0.62	0.78
1999-2000	3.60	0.17	1.37	5.13
2000-2001	5.61	0.65	2.39	8.65
2001-2002	5.44	0.83	3.07	9.34
2002-2003	4.58	0.96	2.70	8.24
2003-2004	4.88	1.28	3.09	9.25
2004-2005	3.56	1.73	4.40	9.68
2005-2006	2.60	1.25	4.17	8.01
कुल	**30.41**	**6.88**	**21.80**	**59.09**
कुल में प्रतिशत हिस्सा	**51.50**	**11.60**	**36.90**	**100.00**

पांच वर्ष की अवधि में चुकाना पड़ता है । नैसर्गिक आपदाओं के कारण फसल की हानि होने के मामले में ऋणों के परिवर्तन/पुनः निर्धारण के लिए बैंकों को अधिकार दिया गया है। रिज़र्व बैंक/नाबार्ड की शर्तों के अनुसार किसानों द्वारा किसान क्रेडिट कार्ड निर्गत कराते समय जमानत, मार्जिन ब्याज दर और विवेकपूर्ण मानदण्ड की सभी शर्तें लागू होती हैं। इस योजना के अन्तर्गत लागत वृद्धि तथा फसल पैटर्न आदि में परिवर्तन होने पर ऋण की सीमा में भी वृद्धि की जा सकती है तथा योजना को जारी करने वाली शाखाओं अथवा बैंक के विवेक पर उसकी अन्य नामित शाखाओं के माध्यम से भी प्रचालन किया जा सकता है । किसान द्वारा कार्ड और पासबुक साथ होने पर स्लिप/चेक के माध्यम से खाते से आहरण किया जा सकता है।

योजना की प्रगति

किसान क्रेडिट कार्ड योजना का कार्यान्वयन सभी वाणिज्यिक बैंकों, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों, राज्य सहकारी बैंकों, मध्यवर्ती सहकारी बैंकों, प्राथमिक कृषि ऋण समितियों और अनुसूचित प्राथमिक सहकारी बैंकों द्वारा सभी राज्यों और संघ शासित प्रदेशों में कार्यान्वित किया जा रहा है। इन एजेन्सियों ने 31 मार्च 2006 तक कुल मिलाकर 59.09 मिलियन कार्ड जारी किये हैं जो कि किसान क्रेडिट कार्ड योजना की व्यापक स्वीकार्यता का परिचालक है । (पूर्व पृष्ठ पर सारणी देखें)

उक्त सारणी के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि किसान क्रेडिट कार्ड योजना निरन्तर प्रगति की ओर अग्रसर है जिसमें सर्वाधिक 51.50 प्रतिशत हिस्सा सहकारी बैंकों का है जबकि क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की हिस्सेदारी कुल किसान क्रेडिट कार्डों की संख्या का मात्र 11.60 प्रतिशत रही, वाणिज्यिक बैंकों की इस योजना में पर्याप्त भागीदारी लगभग 36.90 प्रतिशत रही है। वर्ष 2005-06 के दौरान सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों ने 41,64,551 किसान क्रेडिट कार्ड निर्गत किये है। राज्यवार निर्गत किसान क्रेडिट कार्डों में 31 मार्च 2006 तक देश में, सहकारी बैंकों द्वारा 6 राज्यों में, जिसमें उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, आन्ध्र प्रदेश, राजस्थान, मध्य प्रदेश और उड़ीसा के सहकारी बैंकों की हिस्सेदारी इन बैंकों द्वारा जारी कुल क्रेडिट कार्डों का 67.40 प्रतिशत रही है । देश के सभी क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों द्वारा जारी कुल कार्डों में, उत्तर प्रदेश, आन्ध्र प्रदेश और कर्नाटक की हिस्सेदारी 59.30 प्रतिशत रही है। सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों का जोर आन्ध्र प्रदेश, उत्तर प्रदेश, तमिलनाडु, कर्नाटक और महाराष्ट्र में था, अतः इन पांच राज्यों में इन बैंकों द्वारा निर्गत कुल कार्डों का 65.20 प्रतिशत कार्ड निर्गत किये गये। समस्त भारत में सभी बैंकों द्वारा उत्तर प्रदेश, आन्ध्र प्रदेश, महाराष्ट्र, तमिलनाडु, मध्य प्रदेश, कर्नाटक, उड़ीसा और पश्चिम बंगाल सहित आठ राज्यों में कुल निर्गत कार्डों का 74.40 प्रतिशत कार्ड निर्गत किये, जबकि सबसे कम कार्ड जम्मू कश्मीर, हिमाचल प्रदेश तथा उत्तर-पूर्वी राज्यों में निर्गत किये गये। किसान क्रेडिट कार्डों में सर्वाधिक तेजी से प्रगति सहकारी बैंकों ने की है क्योंकि इन बैंकों का व्यवसाय अधिकांशतः ग्रामीण क्षेत्रों में ही व्याप्त है। वर्ष 2001-2002 से किसान क्रेडिट कार्ड धारकों को वैयक्तिक दुर्घटना बीमा पैकेज की सुविधा प्रदान की गयी है जैसा कि अन्य क्रेडिट धारकों के लिए किया जाता है तथा दुर्घटना के कारण मृत्यु अथवा स्थायी विकलांगता के लिए उन्हें अधिकतम क्रमशः 50 हजार रुपये तथा 25 हजार रुपये के लिए बीमित किया गया है। प्रीमियम का भार जारीकर्ता संस्थान और किसान क्रेडिट कार्ड धारकों द्वारा 2:1 के अनुपात में वहन किया जाता है । इस योजना से लाभान्वितों पर प्रभाव के मूल्यांकन के लिए किसान क्रेडिट कार्ड योजना के राष्ट्रीय प्रभाव के मूल्यांकन एवं सर्वेक्षण से सम्बन्धित कार्य राष्ट्रीय अनुप्रयुक्त आर्थिक अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली द्वारा कराया जा रहा है।

योजना के लाभ

किसान क्रेडिट कार्ड योजना से सभी पक्षों जैसे कार्ड धारकों, बैंक, आम जनता तथा सरकार आदि को लाभ मिला है । इस योजना से –

* न्यूनतम पेपर कार्य और बैंक से निधि के आहरण के लिए प्रलेखीकरण का सरलीकरण हुआ है जिससे शाखा के स्टाफ के कार्यभार में कमी आयी है ।

* निधियों के पुनर्निवेश में सुधार और ऋणों की बेहतर वसूली होने से बैंकों को होने वाली लेन-देन लागत में कमी और बेहतर बैंकर ग्राहक सम्बन्ध प्रबन्धन विकसित हुआ है।

* कृषि को दिये जाने वाले ऋण प्रवाह में वृद्धि हुई है।
* किसानों को किसान क्रेडिट कार्ड निर्गत करने के बाद उनकी उधार लागत में लगभग 6 प्रतिशत की कमी आयी है।
* अनौपचारिक स्रोतों पर निर्भर रहने वाले उधारकर्ताओं की तुलना में औपचारिक स्रोतों पर निर्भर रहने वाले किसान क्रेडिट कार्ड धारकों की उधार लागत में भी तीन प्रतिशत की कमी दर्ज की है।
* अल्पावधि ऋण आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए पूर्णतः अनौपचारिक स्रोतों पर निर्भर रहने वाले उधारकर्ताओं की संख्या में काफी हद तक कमी आयी है।
* अल्पावधि कृषि ऋण प्राप्त करने में लगने वाले समय में भारी बचत हुई है।
* ऋण क्रियावधि के सरलीकरण से ऋण सुपुर्दगी की लागत घटी है।
* अशिक्षित एवं ग्रामीण किसानों में विश्वास की भावना जागृत हुई है कि यह कार्य उनके लिए बहुत उपयोगी है और वे ऋण अपनी सुविधानुसार प्राप्त कर सकते हैं ।
* इस योजना से ऋण वितरण में होने वाली औपचारिकताओं में कमी आयी है।
* किसानों को फसलों के लिए खाद, बीज व अन्य सामग्री इच्छानुसार सौदेबाजी कर, बाजार की प्रतियोगी दर पर खरीदने का अवसर मिलता है।
* ग्रामीण क्षेत्रों में महाजनों व साहूकारों के चंगुल से किसानों को मुक्त कराना और अनावश्यक शोषण में कमी लाना।
* किसानों द्वारा इस योजना एवं सुविधा का लाभ उठाकर स्वयं को गौरवान्वित महसूस करना।
* किसानों को वित्तीय सुविधा मिलने से कृषि एवं उससे सम्बद्ध क्रियाओं में, रोजगार के अवसरों में वृद्धि हुई है।
* किसान क्रेडिट कार्ड योजना का लाभ मिलने से काफी हद तक किसानों की आर्थिक असमानताओं में कमी आयी है।
* किसान क्रेडिट कार्ड योजना के लागू होने से सरकारी वसूलियां जैसे भूमि लगान, बिजली के बिल, सोसायटी को उर्वरकों का भुगतान आदि की वसूली समय पर हो रही है।
* इस योजना से किसानों की उपज में वृद्धि होने से उनके जीवन स्तर में उत्तरोत्तर वृद्धि हुई है ।
* किसान क्रेडिट कार्ड योजना के अन्तर्गत बैंकों से पैसा मिलने के कारण किसानों के साथ जालसाजी व धोखाधड़ियों की सम्भावनाओं में कमी आयी है।
* इस योजना से बैंकों की प्रक्रिया एवं संचालन लागत में कमी होने से, बैंकों की लाभप्रदता एवं लाभों में वृद्धि हुई है।
* बैंकों ने इस योजना के माध्यम से ग्रामीण व प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्रों में ऋणों की लक्ष्य प्राप्ति की है तथा बैंकों को ग्रामीणों एवं कृषकों को नये ग्राहक बनाने का अवसर मिला है।
* लघु एवं कुटीर उद्योगों तथा कृषि को बढ़ावा देकर बचत की राशि बैंकों में जमा करवाना व आवश्यकता होने पर उसका उपयोग क्रेडिट कार्ड के माध्यम से करना ।
* ग्रामीण क्षेत्रों में किसान क्रेडिट कार्ड की सुविधा प्रदान कर महानगरों व बड़े शहरों में हो रहे आबादी के पलायन पर प्रतिबन्ध लगाया जा सकता है।
* विज्ञापन व प्रचार-प्रसार के चलते, ग्रामीण क्षेत्रों में किसानों को क्रेडिट कार्ड द्वारा वित्तीय सुविधा के प्राप्त होने से, ग्रामीण क्षेत्र शहरी उत्पादों का एक बड़ा बाजार बन गये हैं।
* किसानों द्वारा क्रेडिट कार्ड की सुविधा मिलने से परम्परागत फसलों के स्थान पर व्यापारिक फसलों के उत्पादन को प्रोत्साहन मिला है ।

योजना की कमियां

बैंकों द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों में किसान क्रेडिट कार्ड योजना,

शहरों एवं महानगरों में क्रेडिट कार्ड की तर्ज पर ही लागू की गयी है जिससे बैंकों की आय में उत्तरोत्तर बढ़ोत्तरी हो रही है। इस योजना से बैंकों, आम नागरिकों, सरकार तथा क्रेडिट कार्ड धारकों सभी को लाभ हुआ है और बैंकों ने भी अपनी संचालन लागत घटाकर अपने लाभ को बढ़ाया है । इतना सब कुछ होने के बावजूद इस योजना में कुछ खामियां आज भी दिखायी देती हैं जो कि निम्न प्रकार है -

* किसान क्रेडिट कार्ड योजना का क्षेत्र आज भी सीमित बना हुआ है अर्थात इस योजना का लाभ फुटकर व्यापारियों, लघु उद्यमियों, ग्रामीण दस्तकारों तथा अल्प वेतनभोगियों आदि को समुचित तरीके से नहीं मिल पाया है।

* इस योजना के अन्तर्गत प्रदत्त ऋणों का प्रयोग किसानों द्वारा कृषि कार्य हेतु न कर अन्यत्र कर दिया जाता है।

* इस योजना के अन्तर्गत किसान, बैंक स्टाफ के साथ मिलकर, फर्जी प्रपत्रों एवं जोतबहियों द्वारा ऋण प्राप्त करने में सफल हो जाते हैं ।

* किसान क्रेडिट कार्ड से नकद भुगतान की सुविधा केवल बैंक की एक शाखा तक ही सीमित रखी गयी है जिससे किसानों द्वारा बाहर से सामान खरीदने पर कुछ व्यापारी सुविधा देने से मना करते हैं या फिर किसानों से अनावश्यक रूप से संग्रहण शुल्क वसूल किया जाता है।

* किसान क्रेडिट कार्ड योजना के अन्तर्गत पात्र किसानों का चयन करते समय पक्षपातपूर्ण रवैया एवं अनावश्यक हस्तक्षेप और कुछ अपात्र लोगों को भी यह कार्ड निर्गत करना।

* कुछ अमीर किसानों द्वारा इस योजना का दुरूपयोग कर, बिना जरूरत के बैंक से कम ब्याज दरों पर ऋण प्राप्त कर गांव के गरीब किसानों को अधिक ब्याज दर पर पुनर्वित्त प्रदान करना।

* किसान क्रेडिट कार्ड योजना के अन्तर्गत व्यक्तिगत दुर्घटना बीमा योजना के बारे में अभी भी काफी कम लोगों में जागरुकता देखने को मिलती है और इस योजना के क्रियान्वयन का स्तर भी काफी कम है ।

* किसान क्रेडिट कार्ड योजना के अन्तर्गत किसानों की वित्तीय आवश्यकताओं का एक बहुत छोटा भाग ऋण कें रूप में स्वीकृत किया जाता है जो कि सम्बन्धित कार्य हेतु अपर्याप्त होता है ।

* किसान क्रेडिट कार्ड योजना के अन्तर्गत जो किसान समय पर अपने ऋण की अदायगी करते हैं उन्हें कोई प्रोत्साहन अथवा पुरस्कार नहीं दिया जाता ।

* आज भी बैंकों द्वारा किसान क्रेडिट कार्ड जारी करने में कई तरह के प्रतिबन्ध लगाये गये हैं जो प्रक्रिया को जटिल बनाये हुए है।

* बैंकों का यह मानना कि इस योजना को शुरू करने से लागत में वृद्धि होगी ऐसा नहीं है, एक बार इस योजना के स्थिर होने पर और अधिकाधिक लोगों को जोड़ने पर, बैंकों की संचालन लागत में निश्चित रूप से कमी आयेगी।

योजना की सफलता

बैंकों द्वारा प्रदत्त ऋण की मांग में कमी आने के कारण, किसान क्रेडिट कार्ड योजना को, किसानों एवं देश के हित को ध्यान में रखते हुए, प्रभावी ढंग से लागू करना बैंकों की आवश्यकता बन गयी है । बैंकों द्वारा इस योजना को किसान क्रेडिट कार्ड के बजाय ग्रामीण क्रेडिट कार्ड के रूप में यदि लागू करें तो किसानों के साथ-साथ गांव के छोटे व्यापारी, लघु उद्यमी, गांव के दस्तकार, छोटे-छोटे नौकरी पेशा लोग आदि सभी को इसका लाभ मिल सकेगा । किसान क्रेडिट कार्ड योजना के सफल संचालन हेतु निम्न बातें हो सकती हैं –

* किसान क्रेडिट कार्ड योजना को ग्रामीण क्रेडिट कार्ड योजना के रूप में लागू कर ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले सभी वर्गों को इसका लाभ दिया जाना चाहिए ।

* खेती के कार्यों हेतु अल्पकालीन ऋणों के अलावा अन्य क्षेत्रों में भी जैसे मछली पालन, डेरी, बागवानी, मधुमक्खी पालन, सुअर पालन बुनकर एवं मिट्टी के बर्तन बनाने वाले कुम्हारों को भी इस योजना के साथ जोड़ा जाना

चाहिए।

* किसान क्रेडिट कार्ड योजना के अन्तर्गत प्रदत्त ऋणों पर कड़ी निगरानी रखी जाये अर्थात ऋण जिस परियोजना हेतु प्रदान किया जाये उसको उसी मद में व्यय किया जाना चाहिए।

* किसान क्रेडिट कार्ड योजना में ऋण स्वीकृत करते समय ही यह ध्यान भी रखा जाना चाहिए कि वसूली हेतु निगरानी की व्यवस्था शुरू से ही कड़ी हो ताकि ऋण अनर्जक न होने पायें।

* इस योजना में जिन पात्र किसानों को कार्ड निर्गत किये जायें उनकी पात्रता निर्धारित करते समय सभी मानकों का पूरा पालन किया जाय और किसी भी हस्तक्षेप या दबाव को न माना जाये। यदि कार्ड धारक की ईमानदारी, चरित्र एवं इरादों पर सन्देह हो तो उसे क्रेडिट कार्ड निर्गत न किया जाये।

* क्रेडिट कार्ड निर्गत करते समय बैंक स्टाफ को चाहिए कि वह बैंक के दिशा निर्देशों, सैद्धान्तिक एवं विश्लेषणात्मक तकनीक को ही आधार न बनाये बल्कि व्यवहारिक अनुभवों एवं औपचारिक विश्लेषणों के आधार पर भी निर्णय करे।

* जब भी क्रेडिट कार्ड निर्गत किया जाये तो किसान के ऋण चुकाने के आधार का विश्लेषण अनिवार्य रूप से किया जाये और जोखिम विश्लेषण तकनीक को भी ध्यान में रखा जाये।

* इस योजना के अन्तर्गत ऋण प्रदान करने की प्रक्रिया का सरलीकरण किया जाये किन्तु साथ ही साथ यह भी ध्यान रखा जाये कि दस्तावेजीकरण की पूर्णता में कोई छूट न दी जाये क्योंकि अग्रिमों के अनर्जक होने में अधूरे दस्तावेजों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। किसान क्रेडिट कार्ड योजना के अन्तर्गत इस बात का भी ध्यान रखा जाये कि किसानों को ऋण की स्वीकृति उसकी आवश्यकता से अधिक न हो क्योंकि ऐसे अनावश्यक रूप से प्रदत्त किये गये ऋण सामाजिक कार्यों में प्रयोग कर लिये जाते हैं और उनकी अदायगी में काफी परेशानी उठानी पड़ती है जबकि छोटे व सीमान्त किसान दिवालिया होने तक की स्थिति में पहुंच जाते हैं।

* किसान क्रेडिट कार्ड योजना के अन्तर्गत किसानों द्वारा खोले गये खातों का प्रतिवर्ष नवीनीकरण एवं विश्लेषण कर समीक्षा की जानी चाहिए।

* बैंकों द्वारा इस योजना के अन्तर्गत जो भी ऋण/कार्ड स्वीकृत किये जायें वह कुछ चयनित क्षेत्रों को ही ना हो अन्यथा बैंकों के समक्ष जोखिम बढ़ जायेगी।

* किसान क्रेडिट कार्ड योजना के अन्तर्गत बैंकों को चाहिए कि खाता खोलने एवं कार्ड निर्गत करते समय भारत सरकार, भारतीय रिजर्व बैंक या अपने प्रधान कार्यालय के द्वारा निर्गत निर्देशों एवं नियमों का ही पालन करें, किसी राजनैतिक अथवा क्षेत्रीय प्रभावशाली व्यक्ति के दबाव में कार्ड निर्गत न किया जाये।

* बैंकों को चाहिए कि किसान क्रेडिट कार्ड योजना को सुचारू रूप से चलाने के लिए शाखा स्तर पर पर्यवेक्षक की नियुक्ति करे जो ऋण स्वीकृत करने से अदायगी तक पूरी प्रक्रिया पर निगरानी रखे।

* बैंक के उच्च अधिकारियों को यह भी ध्यान रखना होगा कि किसान क्रेडिट कार्ड योजना को शाखा स्तर पर लागू करने में कोई परेशानी तो नहीं आ रही है इसके लिए मण्डल स्तर पर प्रतिमाह बैठक आयोजित कर विश्लेषण एवं समीक्षा की जानी चाहिए और उसके लिए तुरन्त सुधारात्मक उपाय किये जाने चाहिए।

* किसान क्रेडिट कार्ड योजना के अन्तर्गत खातों के लेन-देन तथा किस्तों की जमा स्थिति पर शाखा प्रबन्धक द्वारा मासिक समीक्षा की जाये तथा निर्धारित लक्ष्य प्राप्ति हेतु समय-समय पर किसानों की ग्राहक गोष्ठी, बैठक आदि बुलाकर विशेषज्ञों के माध्यम से कठिनाईयों के बारे में विस्तार से चर्चा की जाये तथा साथ ही योजना को सुचारू रूप से चलाने हेतु सकारात्मक सुझाव भी आमन्त्रित किये जाये।

* अच्छा यह होगा कि बैंक किसान क्रेडिट कार्डों की स्वीकृति एवं वितरण गांव में जाकर किसानों तथा तहसील से सम्बन्धित राजस्व कर्मचारियों को आमन्त्रित कर, किसी कैम्प के माध्यम से कराये जिसका प्रभाव यह होगा कि अपात्र लोगों के चयन पर, इस योजना के अन्तर्गत काफी हद तक प्रतिबन्ध लग सकेगा।

* इस योजना के अन्तर्गत जो किसान ऋण की अदायगी सही समय पर नहीं करते उनको आने वाले समय में ऋण की स्वीकृति आसानी से न की जाये और उनको अनिवार्य रूप से दण्डित किया जाये।

जिस प्रकार गांव में रहने वाले लोगों का जीवन कठिन है उसी प्रकार बैंकों के लिए ग्रामीण बैंकिंग भी एक कठिन कार्य है। अतः ग्रामीण अर्थव्यवस्था के बदलते परिदृश्य में बैंकों को भी अपनी कार्यप्रणाली में परिवर्तन करने की आवश्यकता है। वैसे तो सरकार एवं बैंकों का रूझान अब भारतीय अर्थव्यवस्था के कृषि एवं ग्रामीण क्षेत्रों, हथकरघा तथा लघु एवं कुटीर उद्योगों की ओर स्वतः ही है किन्तु इसमें और अधिक तीव्र प्रयासों की आवश्यकता है। बैंक किसान क्रेडिट कार्ड के माध्यम से जो सहायता ग्रामीणों को उपलब्ध करा रहे हैं उसके सकारात्मक परिणाम सामने आये हैं और गावों में कायापलट हो रही है । किसानों की काफी हद तक साहूकारों एवं महाजनों के चंगुल एवं शोषण होने से मुक्ति हुई है । यदि बैंक किसान क्रेडिट कार्ड योजना को और अधिक सरलीकृत कर सुसंगत प्रक्रिया के माध्यम से लागू करे तो हजारों लाखों किसान ही नहीं बल्कि करोड़ों ग्रामीणों को इस सुविधा का अधिकाधिक लाभ पहुंचाया जा सकता है। किसान क्रेडिट कार्ड योजना एक वरदान के रूप में साबित हो सकती है बस आवश्यकता इस बात की है कि बैंक एवं सभी हितधारक इसको नेक नियति से लागू करें। अब दूसरी पीढ़ी के सुधार लागू हो रहे हैं और प्रतिस्पर्धा दिन-प्रतिदिन कड़ी होती जा रही है। अतः ऐसी स्थिति में बैंकों को चाहिए कि नीची ब्याज दर एवं कम लागत पर किसानों एवं ग्रामीणों को ऋण प्रदान करे तथा वसूली सम्बन्धी सावधानियों को भी प्रारम्भ से ही ध्यान में रखकर चले। यदि बैंक के अधिकारी एवं कर्मचारी इस योजना को सकारात्मक सोच के साथ लागू करें तो देश की अर्थव्यवस्था, किसानों तथा स्वयं बैंकों का निश्चित रूप से विकास होगा तथा जिसका लाभ योजना के सभी पक्षों को प्राप्त होगा, जो कि आज हमारी आवश्यकता है।

◆

ऋण सहायता है – मेहनत यज्ञ है

कृषि विकास की नई तकनीक - कृषि परिचर्या (एग्री क्लिनिक) : एक परिचय

ध्रुव कुमार फिटकरीवाला
मुख्य प्रबन्धक (अग्रणी बैंक)
भारतीय स्टेट बैंक, साहिबगंज (झारखंड)

हमारे देश के पूर्व प्रधानमंत्री स्व. जवाहरलाल नेहरु ने ठीक ही कहा था कि 'कृषि को छोड़कर हर चीज प्रतीक्षा कर सकती है।' वर्ष 2007-08 में शुरु हुई 11 वीं पंचवर्षीय योजना के दृष्टिकोण पत्र में कहा गया है कि योजनावधि की समाप्ति तक योजना का लक्ष्य अर्थव्यवस्था में करीब 10 प्रतिशत की समरूप एवं दीर्घकालीन वृद्धि दर प्राप्त करना है। अन्य बातों के अलावा वर्ष 2007-08 की समाप्ति तक योजना का लक्ष्य कृषि क्षेत्र में भी 4 प्रतिशत की विकास दर प्राप्त करना है। वर्ष 2001-02 का बजट पेश करते हुए तत्कालीन माननीय वित्तमंत्री ने कहा था कि 'कृषि कार्यों के विविधीकरण एवं आधुनिकीकरण के साथ-साथ कृषि के लिए सहयोगी, सहायक एवं प्रसार सेवाओं में भी बढ़ोतरी करना आवश्यक है। इस उद्देश्य के लिए राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड) के सहयोग से कृषि स्नातकों द्वारा कृषि परिचर्या (एग्री क्लिनिक) एवं कृषि व्यवसाय केन्द्र (एग्रो बिजनेस सेन्टर) की स्थापना के लिए एक योजना शुरु की जायेगी। ये केन्द्र मिट्टी एवं निविष्टियों (इनपुट्स) की जांच सुविधाओं सहित कृषकों को अन्य परामर्शी सेवाएं भी उपलब्ध करायेंगे। वे तकनीक के स्थानान्तरण एवं प्रसार सेवाओं की उपलब्धता को मजबूती प्रदान करने के साथ-साथ तकनीकी रूप से प्रशिक्षित लोगों को स्वरोज़गार भी उपलब्ध करायेंगे । नाबार्ड से संदर्भित होने पर वाणिज्यिक बैंक ऐसे केन्द्रों की स्थापना के लिए आकर्षक शर्तों पर ऋण भी उपलब्ध करायेंगे।'

ये केन्द्र मिट्टी एवं निविष्टियों (इनपुट्स) की जांच सुविधाओं सहित कृषकों को अन्य परामर्शी सेवाएं भी उपलब्ध करायेंगे। वे तकनीक के स्थानान्तरण एवं प्रसार सेवाओं की उपलब्धता को मजबूती प्रदान करने के साथ-साथ तकनीकी रूप से प्रशिक्षित लोगों को स्वरोजगार भी उपलब्ध करायेंगे । नाबार्ड से संदर्भित होने पर वाणिज्यिक बैंक ऐसे केन्द्रों की स्थापना के लिए आकर्षक शर्तों पर ऋण भी उपलब्ध करायेंगे।'

उपरोक्त दिशा निर्देशों को ध्यान में रखकर नाबार्ड द्वारा कृषि स्नातकों द्वारा कृषि क्लिनिक एवं कृषि व्यवसाय केन्द्रों की स्थापना के वित्तपोषण के लिए एक योजना तैयार की गई है, जिसका उद्देश्य कृषि में तकनीकी अंतरण प्रक्रिया के वर्तमान प्रसार नेटवर्क को और अधिक सहयोग देकर गति प्रदान करने के साथ-साथ निविष्टियों की आपूर्ति एवं सेवाओं की उपलब्धता के लिए पूरक स्रोत उपलब्ध कराना है, जिसके लिए अभी कृषक मुख्यतः राज्य की एजेंसियों पर निर्भर रहते हैं।

कृषि क्लिनिक्स की अवधारणा/परिभाषा

कृषि क्लिनिक्स कृषकों को निम्नांकित बातों/क्षेत्रों के सम्बन्ध में विशेषज्ञ सेवाएं एवं सलाह देने की संकल्पना के साथ शुरू की गई हैं :-

- ✓ तकनीकी प्रसार, फसलों की पैदावार (क्रॉपिंग) की प्रथाएं (पैटर्न), रोगों एवं कीडों से फसलों की सुरक्षा आदि,
- ✓ बाजार की प्रवृत्ति (ट्रेंड) एवं बाजारों में विभिन्न फसलों के मूल्यों के साथ-साथ पशुधन के लिए क्लीनिकल सेवाएं और
- ✓ स्वास्थ्य आदि, जो फसलों/पशुधन आदि की उत्पादकता में वृद्धि करेंगे ।

कृषि सेवा केन्द्र

कृषि सेवा केन्द्र कृषकों को निविष्टियों (इनपुट्स) की आपूर्ति पर ध्यान देने के साथ-साथ किराये पर फॉर्म यंत्र एवं अन्य सेवाएं भी उपलब्ध करायेंगे और केन्द्रों की आर्थिक संभाव्यता (इकॉनामिक फीजिबिलीटी) में बढ़ोतरी के लिए, कृषि स्नातक कृषि परिचर्या (क्लिनिक्स) / कृषि सेवा केन्द्रों के

साथ-साथ कृषि एवं सहायक क्षेत्र में अन्य वाणिज्यिक गतिविधियां भी चला सकते हैं ।

योग्यता

एग्री क्लिनिक/कृषि सेवा केन्द्र की योजना निम्नांकित व्यक्तियों के लिए लागू है :

- ✓ कृषि स्नातक एवं कृषि से सबन्धित सहायक विषयों जैसे -
- ✓ बागवानी,
- ✓ पशुपालन,
- ✓ वनविद्या (Forestry),
- ✓ डेरी उद्योग,
- ✓ पशुचिकित्सा,
- ✓ मुर्गीपालन,
- ✓ मत्स्यपालन एवं
- ✓ अन्य कृषि स्नातक एवं अन्य सहायक गतिविधियों के स्नातक

प्रसार एवं तकनीकी सहयोग प्रणाली की पूरकीकरण

कृषि का विकास आज की महती आवश्यकता है एवं इस आवश्यकता को पूरा करने में एग्री क्लिनिक्स एक सशक्त सहयोगी की भूमिका निभा कर कृषि के व्यापक प्रसार एवं तकनीकी सहयोग प्रणाली के पूरकीकरण का कार्य कर सकती हैं। इन क्लिनिक्स की निम्नांकित कारणों से भी आवश्यकता है :

- ✓ सरकार के पास विशिष्ट फसलों हेतु स्थान-स्थान पर विशिष्ट परामर्शी सेवाएं देने के संसाधन नहीं है,
- ✓ क्षेत्र स्तरीय स्टाफ ऐसी सेवाएं देने के लिए न तो उपलब्ध हैं और न ही प्रशिक्षित है,
- ✓ सार्वजनिक क्षेत्र निविष्टियों (इनपुट्स) की आपूर्ति एजेंसियां तेजी से बढ़ते कृषि उत्पादन की गति एवं उसकी आवश्यकता के अनुरूप अपने आपको तैयार करने में सक्षम नहीं है,
- ✓ विशिष्ट कृषि सेवाओं (जैसी मिट्टी एवं इनपुट जांच, मरम्मत एवं अनुरक्षण, बीज/कृषि संसाधित (process-ing) करना, कृषि बीमा, तकनीकी सूचना, फसल कटाई के बाद का प्रबन्धन आदि) का भी अनुपुरण किया जाना आवश्यक है क्योंकि इन सेवाओं के लिए राज्य सरकारों एवं निजी क्षेत्र दोनों ही से दी जानेवाली सेवाओं के लिए वर्तमान ढ़ांचागत सुविधाएं (इन्फ्रास्ट्रक्चर) पूरी तरह से अपर्याप्त है,
- ✓ इन कमियों/रिक्तताओं को योग्य निजी उद्यमियों द्वारा पूरा किया जा सकता है/भरा जा सकता है ।

योजना का ढ़ांचा (फ्रेमवर्क)

एग्री क्लिनिक के सुविस्तारित नेटवर्क द्वारा जिसमें आवेदक कृषि स्नातक ही मुख्यतः पणधारी या जोखिम उठाने वाले (स्टेक होल्डर) होंगे, के प्रसार के लिए योग्य कृषि स्नातकों को चिन्हित क्षेत्र में आर्थिक रूप से संभाव्य उद्यम शुरू करने के लिए समान अवसर की उपलब्धता का प्रसार किया जायेगा । एग्री क्लिनिक योजना के ढ़ांचे की अन्य महत्वपूर्ण विशेषताएं निम्नांकित हैं :

- ◉ योजना कृषि स्नातकों को (कृषि एवं सहायक गतिविधियों में) स्वरोजगार के अवसर उपलब्ध करायेगी,
- ◉ योजना कृषि एवं सहायक गतिविधियों में निवेश को प्रोत्साहित करने के साथ-साथ कृषकों के परिचालन क्षेत्र में उत्पादकता बढ़ाने वाली तकनीकों के समावेशन में भी सहायक होगी,
- ◉ नाबार्ड अपनी योजनाओं के माध्यम से प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्रों को दिये जाने वाले ऋणों की शर्तों पर इस उद्देश्य के लिए बैंकों द्वारा पर्याप्त साख मुहैया कराने की व्यवस्था करेगा।
- ◉ भारत सरकार का कृषि मंत्रालय जो अब तक सिर्फ इस योजना के लिए प्रशिक्षण आदि की व्यवस्था में रुचि लेता था, ने योजना के अन्तर्गत अभी हाल ही में सब्सिडी देने सम्बन्धी दिशा निर्देश भी जारी कर दिये हैं। इन दिशा निर्देशों के अन्तर्गत दिनांक 01 अप्रैल 2004 या इसके बाद इस योजना के अन्तर्गत प्रशिक्षित कृषि स्नातक ही

सब्सिडी पाने के पात्र होंगे। सब्सिडी की राशि परियोजना की पूंजी लागत के 25 प्रतिशत के बराबर होगी और अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, महिलाओं एवं अन्य कमजोर वर्गों के लिए यह 33.33 प्रतिशत होगी। इसके अतिरिक्त परियोजना के प्रथम दो वर्षों के दौरान पूरी ब्याज राशि भी सब्सिडी के तौर पर दी जायेगी।

- अभी योजना के अन्तर्गत वित्तपोषण नाबार्ड द्वारा जारी किये गये दिशा निर्देश के अनुरूप ही होगा,
- इस योजना के अन्तर्गत ऋण का आवेदन देने वालों के लिए 6 से 8 सप्ताह की अवधि वाले प्रशिक्षण कार्यक्रम निःशुल्क आयोजित किये जायेंगे जिसमें उद्यमिता और प्रबन्धन के साथ-साथ उद्यमियों को कौशल (स्किल) विकसित करने के गुर भी सिखाए जायेंगे।

प्रशिक्षण

राष्ट्रीय कृषि प्रबंधन प्रसार संसाधन (नेशनल इंस्टिट्यूट ऑफ एग्रीकल्चरल एक्सटेन्शन मैनेजमेन्ट), हैदराबाद जिसे मुख्यतः 'मैनेज' (MANAGE) के नाम से जाना जाता है और जिसकी स्थापना वर्ष 1987 में क्षमता सृजन, शोध एवं परामर्शी सेवाओं के लिए कृषि मंत्रालय भारत सरकार द्वारा की गई है, को चयनित उद्यमियों एवं उनके समूह को समुचित प्रशिक्षण देने की जिम्मेदारी दी गई है ।

एग्री क्लिनिक्स की गतिविधियों के क्षेत्र

एग्री क्लिनिक्स एवं कृषि व्यवसाय केन्द्र निम्नांकित क्षेत्रों में कृषकों एवं अन्य को अपनी विशिष्ट परामर्शी सेवाएं उपलब्ध करा सकते हैं -

- मिट्टी और जल की गुणवत्ता सह निविष्टियों की जांच प्रयोगशालाएं (जिनमें आधुनिक एवं अच्छे विश्लेषणात्मक यंत्र लगे हों तथा इनमें से कुछ के पास परमाणु अवशोषण स्पेक्ट्रोफोटोमीटर्स भी लगे हों)
- कीट निगरानी, निदान एवं नियंत्रण को शामिल करते हुए फसल रक्षण सेवाएं । ऐसी क्लिनिकों में वाइरस, फफूंद, बैक्टीरिया, गोलाकृमि, कीट और जन्तु आदि पौधों के रोगजनकों का पता लगाने के लिए कल्चर कक्ष, भापसह पात्र (ऑटोक्लेव्स), माइक्रोस्कोप और एलीसा (ELISA) कीट आदि भी उपलब्ध हों
- कृषि यंत्रों एवं मशीनों का अनुरक्षण, मरम्मत एवं किराये पर उपलब्ध कराया जाना
- बीज प्रसंस्करण (प्रोसेसिंग) इकाइयां
- वर्मीकल्चर इकाईयों की स्थापना, जैविक खाद, जैविक कीटनाशकों एवं अन्य जीवाणु नियंत्रक उत्प्रेरकों का उत्पादन
- मधुमक्खी पालन इकाईयों (एपीयरीज) की स्थापना एवं मधु आदि उत्पादों के प्रसंस्करण की इकाइयां
- प्रसार एवं परामर्शी सेवाओं की व्यवस्था
- कृषि बीमा सेवाएं
- अंडा उत्पादन इकाईयों (हैचरिज) एवं मछलीघर (एक्वेरियम) के लिए मछली के आंगुलिकों (फिंगरलिंग्स) का उत्पादन
- पशुधन के लिए स्वास्थ्य सेवाएं, जिनमें अवरुद्ध सीमेन बैंक एवं तरल नाइट्रोजन आपूर्ति की भी व्यवस्था हो
- प्रसंसाधित कृमि उत्पादों के लिए खुदरा विपणन केन्द्र और
- अन्य गतिविधियां जैसे मशरुम उत्पादन एवं डेयरी फार्मिंग आदि ।

परियोजना लागत/कार्यक्रम का आयाम

- यह परियोजना व्यक्तिगत एवं समूह दोनों ही स्तरों पर शुरु की जा सकती है ।
- शुरुआत में यह कार्यक्रम 10 लाख रुपये प्रति उद्यम के निवेश के साथ प्रतिवर्ष 5000 उद्यमों के लिए है।
- यदि उद्यम किसी समूह द्वारा शुरु किया जा रहा हो तो यह समूह 5 व्यक्तियों जिनमें एक प्रबंधन में स्नातक हो, के लिए परियोजना लागत 50 लाख रुपये तक हो सकती है।
- मार्जिन राशि, ब्याज दर, ऋण के लिए प्रतिभूति (सिक्यूरिटी) आदि भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा समय-समय पर जारी किये

जानेवाले दिशा निर्देशों के अनुरूप होंगी।

- ऋण का पुनर्भुगतान - क्लिनिक्स/उद्यमियों द्वारा की जानेवाली गतिविधियों के आधार पर मामले के गुण-दोष पर निर्भर करते हुए ऋण की अवधि 5 से 10 वर्षों की होगी ।
- प्रत्येक ऋण के लिए अलग-अलग विचार कर ऋणदाता बैंक के स्वनिर्णय के अनुसार पुनर्भुगतान अवधि मे अधिकतम 2 वर्षों की अनुग्रह अवधि भी शामिल होगी ।

सुझाव

कृषि परिचर्या एक अपेक्षाकृत नई एवं नवोन्मेषी योजना है जिससे कृषि के विकास को नया आयाम दिया जा सकता है। अतः इसके विकास एवं सफल संचालन के लिए सभी अभिकरणों एवं संस्थाओं के सम्मिलित प्रयासों की आवश्यकता है। कृषि विश्वविद्यालय, किसान विकास केन्द्र आदि भुगतान के आधार पर कृषि उद्यमियों को उनके यहाँ उपलब्ध सुविधाओं के उपयोग की अनुमति दे सकते हैं। साथ ही, योग्य स्नातकों को इस प्रकार के उद्यम शुरु कर बैंकों से ऋण प्राप्त करने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। बैंकों को भी इस संबंध में सहयोगात्मक रवैया अपनाना चाहिये तथा आवेदित ऋणों को तत्परतापूर्वक स्वीकृत कर उनका संवितरण करना चाहिए। बैंकों के नियंत्रक कार्यालयों को भी इस संबंध में अपने शाखा प्रबन्धकों को समुचित रूप से उत्प्रेरित कर अपनी भूमिका का अच्छी तरह से निर्वाह करना चाहिये और अंत में, लेकिन आखिरी नहीं कि इन ऋणों पर ली जानेवाली ब्याज दर आकर्षक, संतुलित एवं कम होनी चाहिये जिससे अधिक से अधिक योग्य व्यक्ति इस योजना के अन्तर्गत ऋण लेने के इच्छुक हों।

संयम और सतत प्रयास कड़वी गोलियों के समान हैं जिन्हें निगलने में कठिनाई तो होती है लेकिन जिनका फल मीठा ही होता है। हम जानते हैं कि ग्रामीण साख के क्षेत्र में हमारे बैंकों के लिए अपार सम्भावनाएं छिपी हुई हैं, अतः आवश्यकता कुछ नवोन्मेषी कदम उठाकर इन सम्भावनाओं को लाभ में परिवर्तित कर लेने की है । एग्री क्लिनिक्स एवं कृषि व्यवसाय केन्द्र ऐसे ही क्षेत्र है जिनके लिए साख उपलब्ध कराकर कृषकों का विकास किया जा सकता है। साथ ही, बैंकिंग व्यवहार की उच्च लागत को कम करने के लिए कम लागत वाली तकनीकों को अपनाया जाना भी आवश्यक है। परम्परागत कृषि उत्पादों एवं प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थों की बढ़ती मांग के साथ-साथ फसलों में तकनीकी विकास होने की भी सम्भावना मौजूद है और इन सम्भावनाओं के पूर्ण दोहन के लिए समन्वित विकास/प्रयास किये जाने आवश्यक हैं। भारतीय परिप्रेक्ष्य में एग्री क्लिनिक्स रोज़गार बढ़ाने का एक सशक्त माध्यम तो है ही, इसमें 'वित्तीय समावेशन' को बढ़ावा देने की सम्भावनाएं भी छिपी हुई है। भारत सरकार ने चालू वित्त वर्ष में बैंकों को ग्रामीण साख उपलब्ध कराने का महत्वाकांक्षी एवं चुनौतीपूर्ण लक्ष्य दिया है, जिसे हासिल करना हमारे प्रगतिशील बैंकों के लिए, जिनके पास विश्वस्तरीय समर्पित, सक्षम एवं कुशल कार्मिकों की फौज है, कोई असंभव कार्य नहीं है। आवश्यकता है तो बस कुशल नेतृत्व, निर्देशन, समन्वय और टीम भावना की, जिसके साथ कार्यकर हम अपने बैंकों के लिए निर्धारित चुनौतीपूर्ण लक्ष्य को हासिल करने के साथ-साथ उड़ीसा, उत्तर पूर्व राज्य, झारखण्ड, बिहार और राजस्थान जैसे अति पिछड़े राज्यों का साख-जमा अनुपात भी बढ़ा सकते हैं। आइये, हम एग्री क्लिनिक्स को बड़े पैमाने पर विस्तार करने के चुनौतीपूर्ण कार्य को पूरे मनोयोग से स्वीकार कर अपना काम आरम्भ करें।

एग्री क्लिनिक्स एवं कृषि व्यवसाय केन्द्र ऐसे ही क्षेत्र है जिनके लिए साख उपलब्ध कराकर कृषकों का विकास किया जा सकता है। साथ ही, बैंकिंग व्यवहार की उच्च लागत को कम करने के लिए कम लागत वाली तकनीकों को अपनाया जाना भी आवश्यक है।

◆

परिक्रमा

हम प्रशिक्षण का स्वरूप बदल रहे हैं

महाप्रबंधक श्री विकास छापेकर

परिक्रमा स्तम्भ ने अपनी परम्परायें स्वयं बनायी और उन्हें स्थापित किया ताकि यह स्तम्भ केवल शब्द चित्र ही न बन कर रह जाए बल्कि प्रशिक्षण संस्थानों की सोच और समय के साथ उनके सामंजस्य के बारे में भी पाठकों को जानकारी हो। अपनी एक परम्परा तोड़ते हुए - परिक्रमा ने इस बार बैंक ऑफ महाराष्ट्र के केंद्रीय कर्मचारी प्रशिक्षण महाविद्यालय के प्राचार्य श्री नन्दकुमार पुजारी के साथ बातचीत करने के साथ-साथ प्रधान कार्यालय में एचआर और प्रशिक्षण से जुड़े **महाप्रबंधक श्री विकास छापेकर** से भी विस्तार में चर्चा की ताकि प्रशिक्षण संबंधी सोच को गहराई से समझा जा सके।
प्रस्तुत है, इन दोनों अधिकारियों से हुई चर्चा का सारांश

महाप्रबंधक श्री छापेकर से हुई बातचीतः-

- हम समय की मांग को देखते हुए - अपने प्रशिक्षण महाविद्यालय के विस्तार की सोच रहे हैं। हम उसके लिये शहर के बाहर बड़ा सा स्थान लेना चाहते हैं ताकि गतिविधियों का विस्तार कर सकें।
- संकाय-सदस्यों की संख्या भी बढ़ानी है। हम उनका चयन बहुत कठिन प्रक्रिया से करते हैं, उनके विकास के लिये आंतरिक एवं बाहरी स्तर पर व्यवस्था करते हैं।
- प्रशिक्षण की डिज़ाइन या उसकी विषयवस्तु को तैयार करने में न केवल फीडबैक काम आता है, बल्कि हम अपने यूनियन के प्रतिनिधियों को भी उससे जोड़ते हैं, क्योंकि क्वॉलिटी का प्रशिक्षण देकर ही हम अपने स्टाफ को बाहरी स्पर्धा के लिये तैयार कर सकते हैं।
- हमारे सीएमडी भी प्रशिक्षण पर व्यक्तिगत रूप से ध्यान देते हैं और यही हमारी ठोस आधार भूमि है।
- दृष्टिकोण और व्यवहार के लिये ही हमने बिहेवियर प्रशिक्षण केंद्र खोला है।
- हमारे कस्टमर हमारे अपने हैं- वे हमें प्यार करते हैं, तो झगड़ा भी करते हैं पर अच्छे संबंधों में यह तो होता ही है। हमें मोनोपोली को तोड़ना है।
- हिंदी कार्यशालाओं का स्वरूप बदल दिया - हम अब उनमें बैंकिंग सिखाते हैं- रोजमर्रा की बैंकिंग - क्योंकि हम यह मानते हैं कि भाषा के साथ-साथ बैंकिंग भी सिखानी जरूरी है।

परिक्रमा

कार्यकारी संपादक श्री शर्मा की प्रधानाचार्य श्री पुजारी से हुई बातचीत

- सीएमडी के तीन सूत्र एचआर, ट्रेनिंग और आई. टी. ने हमारे प्रशिक्षण को नयी दिशा दी है।
- समय की मांग के अनुसार हमने सीबीएस संबंधी कार्यक्रम ज्यादा चलाये हैं। इसी प्रकार से एनपीए प्रबंधन के कार्यक्रम भी चलाये गये।
- मेरा तो यह मानना है कि प्रशिक्षण सोच बदलने या दृष्टिकोण को बदलने का एक साधन है - सोच को प्रोग्रेसिव बनाना है।
- देखा जाए तो, लीडरशिप क्वॉलिटी को उभारने का कार्य प्रशिक्षण से संभव है।
- कस्टमर को एज्यूकेट करने के रूप में हम बैंकिंग क्लिनिक चलाते हैं जिसे आप ओपन हाऊस की संज्ञा दे सकते हैं। वैसे मुख्यतः तो हमारे कस्टमर रिलेशनशिप मैनेजर यह काम बखूबी कर रहे हैं।
- मेरा व्यक्तिगत रूप से यह मानना है या यूं कहें कि मेरा सपना है कि शाखा प्रबंधक पूरी तरह एम्पावर होना चाहिये- शक्तिशाली, पावरफुल ताकि वह त्वरित निर्णय ले सके।
- महाविद्यालय अखिल भारतीय स्वरूप का होने के कारण हम अंग्रेजी में ही पाठ्यक्रम चलाते हैं। हां बातचीत में हिंदी, मराठी का प्रयोग भी करते हैं। वैसे तकनीकी विषय को हम अंग्रेजी में बेहतर समझ सकते हैं .. हैं ना।
- कैलेण्डर के लिये यूजर डिपार्टमेंट, पार्टीसिपेंट आदि के साथ चर्चा की जाती है और अंतिम निर्णय - बैंक के बिजनेस प्लान को ध्यान में रखकर किया जाता है।

प्रशिक्षण हमारी सोच को बदलता है

महाविद्यालय के प्रधानाचार्य से हुई बातचीत के दौरान महाविद्यालय की सैर भी की गयी। आइये आपको भी ले चलते हैं बैंक ऑफ महाराष्ट्र के प्रशिक्षण महाविद्यालय में-

पुण्य नगरी अर्थात पुणे, महाराष्ट्र की सांस्कृतिक राजधानी, वो बात और है कि अब पुणे आईटी हब बन गया है, मैं यदि डाउन मेमरी लेन में जाऊं तो प्रभात स्टूडियो जहाँ आज फिल्म संस्थान खड़ा है, के आसपास के माहौल में प्रशिक्षण की, सीखने की गंध हवाओं में तैरते हुए मिलेगी- इसी प्रभात इलाके में स्थित है बैंक ऑफ महाराष्ट्र का प्रशिक्षण महाविद्यालय कभी एरंड का जंगल रहा होगा, अब तो सीमेंट का जंगल हो गया है- चारों तरफ बस्ती ही बस्ती.. वहीं पर स्थित है यह महाविद्यालय।

बैंक में प्रशिक्षण महाविद्यालय की स्थापना

अपने कर्मचारियों को लक्ष्यपूर्ति हेतु तैयार करने व उनके दृष्टिकोण में सकारात्मक परिवर्तन लाने के उद्देश्य से इस कर्मचारी महाविद्यालय की स्थापना हुई। बैंक के कार्यारंभ से पूर्व ही प्रशिक्षण के महत्व का अनुमान इसी तथ्य से लगाया जा सकता है कि वर्ष 1977 में बैंक के प्रधान कार्यालय के भवन ***लोकमंगल*** के उद्घाटन से पूर्व ही 2 अगस्त 1971 को बैंक के तत्कालीन संरक्षक स्व. अप्पासाहेब जोग के हाथों बैंक के कर्मचारी महाविद्यालय के भवन का उद्घाटन हो चुका था। तब से लेकर आज तक बैंकिंग के सतत बदलते दौर के साथ बदलते हुए कर्मचारी महाविद्यालय ने बैंक के अधिकारियों को समय की मांग के अनुसार प्रशिक्षण प्रदान करने में एक प्रभावी भूमिका का निर्वाह किया। महाविद्यालय का परिसर पुणे के एक संभ्रांत रिहायशी इलाके- प्रभात रोड पर एरंडवणा में स्थित है। जैसा कि नाम से ही पता चलता है कि किसी समय यहां एरंड का वन रहा होगा। कुछ ही दूरी पर मशहूर फिल्म इंस्टिट्यूट और फिल्म आर्किव्स, प्रभात स्टूडियो, भंडारकर रिसर्च इंस्टिट्यूट एवं आगरकर रिसर्च इंस्टिट्यूट तथा सुप्रसिद्ध आय. एल. एस. लॉ कॉलेज स्थित हैं। महाराष्ट्र की सांस्कृतिक राजधानी तथा पूर्व के ऑक्सफोर्ड माने जाने वाले व अब सूचना प्रौद्योगिकी का हब बन चुके इस शहर में ही बैंक का प्रशिक्षण महाविद्यालय एवं एक प्रशिक्षण केंद्र तथा सूचना प्रौद्योगिकी महाविद्यालय स्थित हैं। वस्तुतः लक्ष्मी के नव देवालय में ये सरस्वती की उपासना के ऐसे केंद्र हैं जहां धनार्जन एवं ज्ञानार्जन का अभूतपूर्व संगम देखने को मिलता है।

लिपिक संवर्ग के कर्मचारियों के लिये प्रशिक्षण केंद्र

बैंक के लिपिक संवर्ग के कर्मचारियों के लिये प्रारंभ में 6 प्रशिक्षण केंद्रों की स्थापना पुणे, मुंबई,नागपुर, औरंगाबाद, बेळगांव और दिल्ली में की गयी थी। फिलहाल पुणे, मुंबई और नागपुर में 3 प्रशिक्षण केंद्र कार्यरत हैं। यह देखते हुए कि शाखाओं में ग्राहकों का सर्वप्रथम संपर्क लिपिक संवर्ग के कर्मचारियों से एवं अधीनस्थ कर्मचारियों से ही होता है यह उचित समझा गया कि इन संवर्ग के कर्मचारियों के लिये आचरण, व्यवहार से संबधित पाठ्यक्रम विकसित किये जाएं। इसी उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए हमारे पुणे प्रशिक्षण केंद्र का नामकरण 'विद्या विलास आचरण व्यवहार अध्ययन केंद्र' किया गया।

सूचना प्रौद्योगिकी महाविद्यालय की स्थापना

लगातार बदलती बैंकिंग प्रणालियों एवं कम्प्यूटर से बैंक के कर्मचारियों को अवगत कराने व उनके ज्ञान को अद्यतन रखने के उद्देश्य से पुणे में सूचना प्रौद्योगिकी महाविद्यालय की स्थापना की गयी जो पुणे के बैंकिंग जगत में अपना अलग स्थान व महत्व रखता है।

महाविद्यालय एवं प्रशिक्षण केंद्रों में चलाये जाने वाले पाठ्यक्रमों एवं उनकी विषयवस्तु के निर्धारण हेतु एक प्रशिक्षण सलाहकार समिति का गठन किया गया है। बैंक के अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक की अध्यक्षता में इस समिति की नियमित बैठकें होती हैं और समिति की बैठकों में लिये गये निर्णयों के अनुसार केंद्रीय कार्यालय के विभिन्न विभागों से चर्चा के उपरांत पाठ्यक्रमों एवम् उनकी रूपरेखा का निर्धारण किया जाता है। तदनुसार इस वर्ष 84 प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करने की योजना बनायी गयी है। बैंक के प्रधान कार्यालय ने यह वर्ष ग्राहक सेवा वर्ष घोषित किया है। अतः प्रधान कार्यालय की घोषणा को मूर्त रूप प्रदान करने के उद्देश्य से अग्रिम पंक्ति के कर्मचारियों के लिये तथा अत्यधिक शिकायतों वाली शाखाओं के कर्मचारियों के लिये विशेष कार्यक्रम तैयार किये गये हैं। महाविद्यालय द्वारा तैयार किये गये अभ्यास क्रम के अंतर्गत निम्नलिखित विषयों का समावेश है-

- आधुनिक बैंकिंग के सामने चुनौतियां
- कृषि उधार दान में लाभप्रदता
- ग्रामीण क्षेत्रों में विपणन
- वित्तीय समावेशन
- कृषि में नवोन्मेष
- ग्रामीण मनोविज्ञान
- किसान क्लब
- किसानों से तालमेल
- स्व-सहायता समूह
- बैंक अधिकारियों के लिये भूमिका परिवर्तन
- कृषि में जोखिम प्रबंधन
- बैंकिंग के कानूनी पहलू
- तुलन पत्र विश्लेषण

बैंक में कोर बैंकिंग सोल्यूशन का कार्यान्वयन अब अंतिम चरण में है तथा इस संबंध में कर्मचारियों को प्रशिक्षित करने हेतु महाविद्यालय में पूर्णतः विकसित व आधुनिक सुविधाओं से संपन्न एक कम्प्यूटर लैब विद्यमान है। राजभाषा हिंदी को मात्र सांविधिक दायित्वों का निर्वाह भर न मानते हुए उसे प्रभावी संप्रेषण का आधार व व्यावसायिक उद्देश्यों की पूर्ति की पूर्व शर्त माना जाता है। अतः प्रशिक्षण कार्यक्रमों में एवं उनमें वितरित किये जाने वाले हैंड आउटों में राजभाषा हिंदी का यथोचित समावेश रहता है। प्रशिक्षण के हर पहलू में हिंदी के सही भावना में कार्यान्वयन हेतु महाविद्यालय कटिबद्ध है।

महाविद्यालय में दो चैनल एक साथ चलते हैं। सभी आधुनिक साधनों से युक्त चार कक्षाएं हैं। इसी भवन में स्थित है छात्रावास जहां एक साथ 50 प्रशिक्षणार्थी रह सकते हैं।

महाविद्यालय का कमजोर पक्ष है इसका छोटा सा पुस्तकालय जिसमें विस्तार की बहुत ज्यादा गुंजाइश है। संभवतः प्रबंध तंत्र इस दिशा में कार्यरत है, इसकी कम्प्यूटर लैब पूरी तरह से आधुनिक प्रशिक्षण देने के लिये तत्पर है। संकाय-सदस्यों के लिये बेहतर सुविधा उपलब्ध है.. सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण है संकाय-सदस्यों का प्रतिबद्ध होना और समर्थन की भावना से काम करना। महाविद्यालय के नीचे स्थित है इतिहास कक्ष .. जी हां, एक अनूठा प्रयोग जहां बैंक की स्थापना की कहानी चित्रों के माध्यम से प्रदर्शित है। सचमुच यह कोना जिज्ञासु एवं इतिहास में रूचि रखने वाले आगन्तुकों के लिये एक वरदान है। प्रधानाचार्य और संकाय-सदस्यों का हार्दिक स्नेह आगन्तुकों को यहां बार-बार आने के लिये प्रेरित करता है। यही यहां की खूबी है- और यही है इसका आमंत्रण।

प्रस्तुति- पुष्पकुमार शर्मा

◆

कृषि ऋण - स्वॉट की कसौटी पर

⊙ **विनय बंसल**
भारतीय स्टेट बैंक,
आगरा मुख्य शाखा,आगरा

किसानों तथा कृषि कार्य में लगी संस्थाओं को बीज, उर्वरक, कीटनाशक, रसायन, चारा, सिंचाई, पंपसेट, डीजल इंजन, कृषि मशीनरी व उपकरण, पशुपालन आदि कृषि एवं सहायक कार्यों हेतु पर्याप्त मात्रा में वित्तीय संसाधनों की आवश्यकता होती है। चूंकि अधिकतर किसानों के पास पर्याप्त वित्तीय संसाधनों का अभाव होता है, अतः उन्हें अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु ऋण की आवश्यकता होती है। किसानों तथा कृषि श्रमिकों द्वारा लिए जाने वाले ऋण कृषि ऋण कहलाते हैं।

कृषि ऋण का स्रोत

मोटे तौर पर कृषि ऋण के 2 स्रोत हैं - संस्थागत तथा गैर-संस्थागत स्रोत। कृषि ऋण के संस्थागत स्रोतों में वाणिज्यिक बैंकों, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों तथा सहकारी बैंकों को शामिल किया जाता है। कृषि को संस्थागत ऋणों के प्रवाह में सबसे बड़ा हिस्सा वाणिज्यिक बैंकों का है। कृषि को दिए गए कुल संस्थागत ऋणों में वाणिज्यिक बैंकों, सहकारी बैंकों तथा क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का हिस्सा क्रमशः 70 प्रतिशत, 22 प्रतिशत तथा 8 प्रतिशत था। वर्ष 2006-07 में संस्थागत स्रोत से कुल 175000 करोड़ रुपए के कृषि ऋण प्रदान करने का लक्ष्य रखा गया था जबकि अनंतिम आंकड़ों के अनुसार इस अवधि में कुल 203297 करोड़ रुपये के ऋण किए गए। गत 5 वर्षों में वाणिज्यिक बैंकों द्वारा प्रदान किए गए कृषि ऋण तालिका -1 में दर्शाए गए हैं।

कृषि ऋण के गैर-संस्थागत स्रोतों में महाजन, सर्राफ, सेठ, साहूकार, शेट्टी आदि शामिल हैं जो रुपया उधार देते हैं तथा हुण्डियों अथवा आंतरिक विनिमय-पत्रों द्वारा वित्त प्रबंधन करते हैं। इस प्रकार के देशी बैंकर फिलहाल किसी प्रत्यक्ष नियंत्रण में नहीं हैं।

कृषि ऋण के प्रकार

प्राथमिकता क्षेत्र के अंतर्गत कृषि ऋणों को दो भागों में बांटा जाता है- प्रत्यक्ष ऋण तथा परोक्ष ऋण। कृषि क्षेत्र को प्रत्यक्ष ऋण में शामिल हैं :

- किसानों को खेती करने, फसलें उगाने, कृषि भूमि में धन लगाने हेतु ऋण।
- कृषि उपकरण खरीदने हेतु ऋण।
- सिंचाई क्षमता विकास हेतु ऋण।
- कृषि फार्म ढांचा निर्माण हेतु ऋण
- भंडारण हेतु ऋण।
- बीज उत्पादन एवं प्रसंस्करण हेतु ऋण।
- बागवानी, दुग्ध उत्पादन, मछली पालन, सुअर पालन, मुर्गी पालन, मधुमक्खी पालन आदि अनुषंगी गतिविधियों हेतु ऋण।

कृषि क्षेत्र को परोक्ष ऋण के अंतर्गत निम्नलिखित ऋण शामिल किए जाते हैं:

- खाद, बीज, कीटनाशक दवाओं के वितरण हेतु ऋण जिसमें ऐसा वितरण सहकारी संस्थाओं अथवा सरकार द्वारा प्रायोजित संगठनों द्वारा होना चाहिए।
- किसानों को अपने नलकूप पर विद्युत संयोजन लेने के लिए विद्युत परिषद द्वारा किए गए व्ययों की क्षतिपूर्ति हेतु ऋण।
- प्राथमिक कृषि साख समिति/कृषक सेवा समिति के माध्यम से किसानों को ऋण।
- उर्वरकों तथा कीटनाशक रसायन छिड़कने का कार्य करने वाली संस्थाओं को ऋण।
- सहकारी विपणन समितियों, जो कृषि उत्पादों का विपणन करती हों, को ऋण।
- उन सहकारी संस्थाओं को ऋण जो किसानों को ऋण देती हैं।

अवधि के आधार पर कृषि ऋणों को तीन भागों में बांटा जा सकता है:-

1. 15 माह से कम अवधि के ऋण अल्पावधि ऋण कहलाते हैं

2. 15 माह से 5 वर्षों तक की अवधि के ऋण मध्यावधि

ऋण कहलाते हैं

3. 5 वर्ष से अधिक अवधि के ऋण दीर्घावधि ऋण कहलाते हैं।

स्वॉट विश्लेषण

बदलते परिवेश में बैंकों के लिए यह आवश्यक है कि उन्हें कृषि ऋण की मजबूती का ज्ञान हो जिससे वे व्यवसाय में वृद्धि तथा देश के आर्थिक विकास हेतु इसका उपयोग कर सकें। इसके कमजोर पक्षों का भी उन्हें ज्ञान होना चाहिए ताकि कमजोरियों को दूर किया जा सके। इसी के साथ ही बैंकों तथा देश के नीति-निर्माताओं को उपलब्ध अवसरों की भी जानकारी होनी चाहिए ताकि इनका समुचित लाभ उठाया जा सके। इसी प्रकार चुनौतियों की भी जानकारी होनी चाहिए जिससे उनका सफलतापूर्वक सामना किया जा सके। मजबूती, कमजोरी, अवसर तथा चुनौती को स्वॉट कहते हैं।

मजबूती

कृषि उत्पादन में वृद्धि

वर्ष 2005-06 में देश में 208.3 मिलियन टन खाद्यान्न उत्पादन हुआ तथा वर्ष 2006-07 में 209 मिलियन टन खाद्यान्न उत्पादन होने का अनुमान लगाया गया है। चाय, गन्ने तथा चीनी उत्पादन में भारत विश्व में प्रथम स्थान पर है। आम तथा केले उत्पादन में भी भारत विश्व में प्रथम स्थान पर है। दुग्ध उत्पादन में भी हमारा देश विश्व में प्रथम स्थान पर है। देश में रबड़ की प्रति हेक्टेयर उत्पादकता 1796 किलोग्राम है जो विश्व में सर्वाधिक है। तालिका 2 में विभिन्न उत्पादों की स्थिति दर्शाई गई है।

औद्योगिक उत्पादन में वृद्धि

देश के अनेक उद्योग अपने कच्चे माल की जरूरत के लिए कृषि क्षेत्र पर ही निर्भर हैं। आर्थिक गणना रिपोर्ट 2005 (जून 2006 में जारी) के अनुसार देश में कुल 4.21 करोड़ उद्यम हैं जिनमें 61.3 प्रतिशत उद्यम ग्रामीण क्षेत्रों में हैं। कुल उद्यमों में 15 प्रतिशत उद्यम कृषि से संबंधित कार्यों में संलग्न हैं। देश के कुल औद्योगिक उत्पादन में लघु क्षेत्र का योगदान 39.5 प्रतिशत है। वर्ष 2005-06 में देश के औद्योगिक उत्पादन में 8.2 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गई है तथा वर्ष 2006-07 में 12.3 प्रतिशत औद्योगिक विकास दर रहने का अनुमान लगाया गया है। बैंकों से ऋण लेकर कुटीर उद्योग तथा लघु व्यवसाय उपक्रम स्थापित किए जा रहे हैं। मार्च 2006 में देश में कुल 123.42 लाख लघु उद्योग इकाइयां कार्यरत थीं।

चाय, गन्ने तथा चीनी उत्पादन में भारत विश्व में प्रथम स्थान पर है। आम तथा केले उत्पादन में भी भारत विश्व में प्रथम स्थान पर है। दुग्ध उत्पादन में भी हमारा देश विश्व में प्रथम स्थान पर है। देश में रबड़ की प्रति हेक्टेयर उत्पादकता 1796 किलोग्राम है जो विश्व में सर्वाधिक है।

देशवासियों के जीवनयापन स्तर में सुधार होने से उपभोक्ता वस्तुओं की माँग तेजी से बढ़ रही है। इसके चलते निर्माता अपने कारखानों में वस्तुओं के उत्पादन में वृद्धि कर रहे हैं। वर्ष 2006-07 में 12.3 प्रतिशत औद्योगिक विकास दर दर्ज की गई है।

कृषि उत्पादों के निर्यात में वृद्धि

देश के कुल निर्यातों में कृषि क्षेत्र का हिस्सा 10.95 प्रतिशत तथा कुल निर्यात आय में कृषि का हिस्सा 10 प्रतिशत है। वर्ष 1990-94 की अवधि में देश में कुल 6317 करोड़ रुपए के कृषि एवं सहायक उत्पादों का निर्यात हुआ था जो बढ़कर वर्ष 2005-06 में 32797 करोड़ रुपए हो गया। वर्ष 2005-06 में देश में आम के निर्यात में 19.5 प्रतिशत वृद्धि तथा बासमती चावल के निर्यात में 7.6 प्रतिशत वृद्धि दर्ज की गई है।

ग्रामीण निर्धनता अनुपात में गिरावट

वर्ष 1999-2000 में भारत में निर्धनता अनुपात 26.1 प्रतिशत तथा ग्रामीण निर्धनता अनुपात 27.1 प्रतिशत था। वर्ष 2004-05 में ग्रामीण निर्धनता अनुपात घटकर 21.8 प्रतिशत रह गया। इस वर्ष अखिल भारतीय निर्धनता अनुपात भी घटकर 21.8 प्रतिशत रह गया। योजना आयोग द्वारा राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन के हवाले से जारी रिपोर्ट के यूनिफॉर्म रिकॉल पीरियड उपभोग आधारित आंकड़ों के अनुसार 1993-94 में देश में निर्धनों की संख्या 32.03 करोड़ थी जिसमें 24.40

करोड़ निर्धन ग्रामीण हैं। यह संख्या वर्ष 2004-05 में घटकर 30.17 करोड़ रह गई जिसमें ग्रामीण निर्धनों की संख्या 22.09 करोड़ है।

रोज़गार में वृद्धि

भारत सरकार ने 'स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोज़गार योजना' प्रारंभ की है। इस योजना का मुख्य उद्देश्य लक्षित गरीब परिवारों (स्वरोज़गारी) को सहायता देना है जिससे कि वे एक समयावधि के बाद गरीबी रेखा से ऊपर उठ सकें। यह उद्देश्य ग्रामीण गरीबों को सामाजिक गतिशीलता, उनके प्रशिक्षण व क्षमता निर्माण तथा आय उत्पादक परिसंपत्तियों के प्रावधान की प्रक्रिया के जरिये स्वयं सहायता समूह संगठित करके प्राप्त किया जाना है। बैंक से ऋण मिलने पर ऐसे कृषि श्रमिकों को रोजगार मिला है जिन्हें या तो बिना किसी कामकाज के रहना पड़ता था या उनके काम में लगे रहने से कुल उत्पादन में कोई वृद्धि नहीं होती थी। इस तरह देश के ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगारी तथा प्रच्छन्न बेराज़गारी दर में कमी आई है।

मार्च 2006 तक स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोज़गार योजना के अंतर्गत कुल 1207078 स्वरोज़गारियों को 1125.42 करोड़ रुपए के ऋण प्रदान किए गए। इसके अलावा देश के ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों में प्रधान मंत्री रोज़गार योजना शुरू की गई है। इस योजना के अंतर्गत मार्च 2006 तक कुल 2.49 लाख खातों में 1521 करोड़ रुपए के ऋण प्रदान किए गए।

राष्ट्रीय आय में वृद्धि

वर्ष 1999-2000 में भारत की राष्ट्रीय आय कुल 1590212 करोड़ रुपए थी जो वर्ष 2004-05 में बढ़कर 2141776 करोड़ रुपए हो गई। देश में प्रति व्यक्ति आय वर्ष 1999-2000 में 15886 रुपए थी जो बढ़कर वर्ष 2004-05 में 19649रुपए हो गयी। वर्ष 2006-07 में प्रति व्यक्ति आय 22379 रुपए होना अनुमानित है। अप्रैल 2007 में हमारा देश विश्व के उन 12 देशों की सूची में शामिल हो गया है जिनका सकल घरेलू उत्पाद 1 ट्रिलियन डॉलर से अधिक है।

आर्थिक विकास दर में वृद्धि

भारतीय अर्थव्यवस्था की औसत विकास दर 1980-81 से 25 वर्षों में लगभग 6 प्रतिशत रही है जबकि इससे पिछले तीन दशकों में यह दर केवल 3.5 प्रतिशत ही रही थी। वर्ष 2003-07 की 4 वर्षों की अवधि में औसत विकास दर 8.6 प्रतिशत दर्ज की गई है। मिकिन्सी ग्लोबल इंस्टिट्यूट ने अनुमान लगाया है कि यदि भारत में आर्थिक विकास की दर यही रही तो वर्ष 2025 में भारतीय अर्थव्यवस्था विश्व की पांचवीं सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था हो जाएगी।

केंद्रीय सांख्यिकीय संगठन ने फरवरी 2007 में जारी राष्ट्रीय आय संबंधी आंकड़ों में वित्तीय वर्ष 2006-07 में देश के सकल घरेलू उत्पाद में 9.2 प्रतिशत वृद्धि का अनुमान लगाया गया था जबकि मई 2007 में जारी आंकड़ों के अनुसार वर्ष 2006-07 में देश की आर्थिक विकास दर 9.4 प्रतिशत दर्ज की गई है। देश की स्वतंत्रता के बाद यह सकल घरेलू उत्पाद की दूसरी सबसे ऊंची वृद्धि दर है। गत 4 वर्षों में देश के कृषि क्षेत्र, उद्योग क्षेत्र, सेवा क्षेत्र तथा सकल घरेलू उत्पाद में वृद्धि दर तालिका 3 में दर्शाई गई है।

जीवनयापन स्तर में सुधार

राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण संगठन के 61 वें दौर की अध्ययन रिपोर्ट (दिसंबर 2006 में जारी) के अनुसार वर्ष 2004-05 में तत्कालीन मूल्य स्तर पर औसत मासिक प्रति व्यक्ति उपभोग व्यय ग्रामीण क्षेत्रों में 559 रुपए था जबकि वर्ष 2001-02 (57 वें दौर की अध्ययन रिपोर्ट) में यह 498 रुपए प्रति व्यक्ति था। राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण संगठन (61 वां दौर) द्वारा जारी एक रिपोर्ट के अनुसार गांवों में जीवन स्तर बेहतर हुआ है। वर्ष 2004-05 में गांवों में 8 प्रतिशत परिवारों के पास मोटरसाइकिलें थी जबकि 1993-94 में केवल 2 प्रतिशत परिवारों के पास ही। ग्रामीण क्षेत्रों में टेलीफोन का इस्तेमाल करने वाले लोगों की संख्या 32 प्रतिशत हो गई है। ग्रामीण क्षेत्रों में वर्ष 1993-94 में केवल 7 प्रतिशत परिवारों में ही टेलीविजन थे जबकि वर्ष 2004-05 में 25.6 प्रतिशत परिवारों में टेलीविजन उपलब्ध थे। इन 11 वर्षों में कार या जीप रखने वाले परिवारों की संख्या बढ़कर चार गुना हो गई है। सिले-सिलाए वस्त्रों पर ग्रामीण उपभोक्ताओं का प्रति व्यक्ति खर्च 75

प्रतिशत बढ़ा है। बोस्टन कंसल्टेन्सी ग्रुप के अनुसार भारत में ग्रामीण क्षेत्रों में 35 प्रतिशत लोग मोबाइल फोन का प्रयोग करते हैं।

किसानों को जोखिम से सुरक्षा

बैंकों से ऋण लेने वाले और न लेने वाले दोनों प्रकार के किसानों के लिए फसल बीमा योजना/ (पूर्ववर्ती फसल बीमा) योजनाओं की कमियों को दूर करने और किसानों को जोखिम से सुरक्षा दिलाने के उद्देश्य से 1999 में राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना शुरू की गई। योजना के उद्देश्यों में प्राकृतिक आपदाओं या रोगों से फसल नष्ट होने पर जोखिम से सुरक्षा के अतिरिक्त किसानों को कृषि में प्रगतिशील कृषि तरीकों, उच्च मूल्य आदानों एवं उच्च प्रौद्योगिकी का उपयोग करने के लिए प्रोत्साहन देना भी शामिल है।

वाणिज्यिक बैंकों द्वारा किसानों को 7 प्रतिशत ब्याज दर पर ऋण उपलब्ध कराया जा रहा है। किसानों को 2 प्रतिशत की ब्याज सब्सिडी दी जा रही है। ग्रामीण क्षेत्र में निम्न आय वर्ग की वित्त की मांग बढ़ रही है जबकि औपचारिक क्षेत्र की संस्थाएं इनकी पूर्ति नहीं कर पा रही हैं।

कृषि में अनुवांशिकीय परिवर्तन

आनुवांशिकीय परिवर्तन (जेनेटिक मोडिफिकेशन अर्थात जीएम) से तैयार बीटी कपास के फसल क्षेत्रफल के मामले में भारत का विश्व में प्रथम स्थान है। इंटरनेशनल सर्विस फॉर दी एक्विजिशन ऑफ एग्री -बायोटेक एप्लीकेशंस, वार्षिक रिपोर्ट 2006 के अनुसार भारत में वर्ष 2006 में 38 लाख हेक्टेयर क्षेत्रफल में बीटी कपास उगाई गई जबकि चीन में इसका क्षेत्रफल 35 लाख हेक्टेयर रहा।

सूक्ष्म वित्त

भारत में स्वयं सहायता समूह ग्रामीण ऋण संवितरण की महत्वपूर्ण वैकल्पिक विधि के रूप में अत्यन्त सफल रहे है। इनके गठन से ग्रामीण निर्धनों का एक बहुत बड़ा वर्ग बैंकिंग सुविधाओं से जुड़ गया है। नाबार्ड ने स्वयं सहायता समूह - बैंक संबद्ध कार्यक्रम शुरू किया है। देश भर में स्वयं सहायता समूहों के तीव्र विकास के साथ-साथ एक अन्य दिशा सिडबी ने निर्धारित की है। सिडबी ने सूक्ष्म वित्त संस्थाओं की अवधारणा में प्रवर्तक की भूमिका निभाई है। इसने सिडबी सूक्ष्म वित्त फाउंडेशन नामक विशेषज्ञ एजेंसी के जरिये स्वयंसेवी संगठनों को वित्तक्षम इकाइयों में बदलने का निर्णय लिया ताकि ये इकाइयां देशभर में गरीबों को विभिन्न प्रकार की वित्तीय सेवाएं उपलब्ध करा सकें। वाणिज्यिक बैंकों द्वारा किसानों को 7 प्रतिशत ब्याज दर पर ऋण उपलब्ध कराया जा रहा है। किसानों को 2 प्रतिशत की ब्याज सब्सिडी दी जा रही है। ग्रामीण क्षेत्र में निम्न आय वर्ग की वित्त की मांग बढ़ रही है जबकि औपचारिक क्षेत्र की संस्थाएं इनकी पूर्ति नहीं कर पा रही हैं। इस बात को ध्यान में रखकर नाबार्ड ने सूक्ष्म वित्त की एक योजना शुरू की है जो वित्तीय संस्थाओं की वित्त पूर्ति की पूरक योजना के रूप में कार्य करेगी। यह योजना ग्रामीण क्षेत्रों में वित्त की मांग एवं पूर्ति में अंतर को कम करने का कार्य करेगी तथा इससे ग्रामीण गरीबी कम होगी।

महाजनों पर निर्भरता कम

बैंकों से सस्ती ब्याज दर पर कृषि ऋण उपलब्ध हो जाने से गरीब किसान महाजनों से ऊंची ब्याज दर पर लिया ऋण चुकाने में समर्थ हो सके हैं। इससे उनकी महाजनों पर निर्भरता में कुछ कमी आई है। इसके अतिरिक्त बैंक शाखाओं के सीबीएस में आने, एकल खिड़की सुपुर्दगी प्रणाली शुरू होने, शाखाओं की साज-सज्जा में सुधार होने, कार्यघण्टों में विस्तार होने तथा बायोमेट्रिक एटीएम लगने से भी किसानों का रुझान महाजनों से हटकर बैंकों की तरफ बढ़ा है।

कमजोरी

गैर-निष्पादक आस्तियां

कृषि ऋणों में गैर-निष्पादक आस्तियों का उच्च स्तर होने के प्रमुख कारण प्राकृतिक आपदाएं, सरकार द्वारा ऋण माफी योजनाएं, अंतरबैंक समन्वय की कमी तथा ऋण की वसूली व पर्यवेक्षण में ढिलाई रहे हैं। अन्य कारणों में शामिल हैं ऋण प्रस्ताव का अनुचित मूल्यांकन, बैंक कर्मचारियों में समुचित कार्यदक्षता का अभाव, अपर्याप्त प्रतिभूति, ऋण मेलों का आयोजन आदि। यदि कोई ऋण आस्ति गैर-निष्पादक आस्ति में परिवर्तित हो जाती है तो बैंकों को न केवल उस पर ब्याज का नुकसान

होता है बल्कि वसूली, नियंत्रण, अनुश्रवण, न्यायालय फीस, वकील खर्च आदि के कारण पर्यवेक्षण लागत में वृद्धि होती है। गैर-निष्पादक आस्तियों के लिए बैंकों को प्रावधान करना पड़ता है। इससे अन्य अच्छे खातों एवं दूसरे बैंकिंग कारोबार से प्राप्त आय/लाभ की समेकित राशि भी कम हो जाती है जिससे पूंजी पर्याप्तता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। ये आस्तियां उत्पादक प्रयोजनों से निधियों का पुनर्निवेश करने की बैंकों की क्षमता सीमित करती है। गैर-निष्पादक आस्तियों की ऊंची दर होने से निवेशकों, ग्राहकों तथा समाज के अन्य वर्ग के लोगों का बैंक के प्रति विश्वास कमजोर होता है।

सरकारी हस्तक्षेप

अधिकतर मामलों में गरीब लोगों को सरकार द्वारा प्रायोजित योजनाओं के अंतर्गत ऋण प्रदान किए गए हैं। इसका कारण यह है कि ऐसे ऋण प्रदान करने और लक्ष्य प्राप्त करने का बैंकों पर दबाव रहा है। पात्र लाभार्थियों का चयन करने वाली संस्थाएं बैंकों से अलग होती हैं और ये संस्थाएं बैंकों को बाध्य करती हैं कि वे उनके द्वारा चयनित लाभार्थियों को ऋण प्रदान करें। विभिन्न दबावों के चलते बैंक संख्यात्मक लक्ष्य प्राप्त करने के चक्कर में गुणवत्ता पर ध्यान नहीं दे पाते।

प्रतिभूति के अभाव में ऋण देने में आनाकानी

कुछ बैंक अधिकारी गरीब किसानों को कृषि ऋण देने में आनाकानी करते हैं क्योंकि उनके पास पर्याप्त संपार्श्विक प्रतिभूति नहीं होती है तथा इस प्रकार के ऋण खातों में पर्यवेक्षण में बाधाएं आती हैं व ऋण वसूली लागत अधिक आती है। इसके अतिरिक्त चूंकि कृषि ऋणों पर ब्याज दर अपेक्षाकृत नीची होती है, अतः बैंक अधिकारियों में यह आम धारणा बन गई है कि ये ऋण आर्थिक रूप से व्यवहार्य नहीं हैं और बैंकों की लाभप्रदता पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं।

ऋण का असमान संवितरण

कृषि ऋणों का असमान संवितरण हुआ है और विकसित क्षेत्रों में ही अधिक ऋण प्रदान किए गए हैं। सूक्ष्म वित्त का विस्तार कुछ राज्यों तक सीमित है। 60 प्रतिशत संकेद्रण आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, कर्नाटक और केरल में ही है। जिन राज्यों में इसकी सर्वाधिक जरूरत है वहां वे इससे लगभग अछूते हैं। वाणिज्यिक बैंक कृषि ऋण प्रदान करने में बड़े किसानों को प्राथमिकता देते हैं। राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण के 59 वें दौर (वर्ष 2003) के अनुसार देश के कुल 8.94 करोड़ किसानों में से केवल 26 प्रतिशत किसानों ने ही बैंक ऋण सुविधा का लाभ उठाया है तथा इनमें भी अधिकांश ऋण बड़े किसानों ने लिया है।

> ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले लोगों में लगभग 75 प्रतिशत गरीब हैं। अधिकांश गरीबों की आय में कोई खास वृद्धि नहीं हुई है। वर्ष 2004-05 में गांवों में रहने वाली लगभग 10 प्रतिशत आबादी को माह में औसतन 559 रुपए में ही गुजारा करना पड़ा।

योजनाओं में सामंजस्य का अभाव

हमारे देश में ग्राम स्वरोज़गार और गरीबी उन्मूलन की अधिकतर योजनाओं में एक प्रमुख कमी यह रही है कि प्रत्येक योजना अपने आप में एक स्वतंत्र योजना रही है। परिणामस्वरूप प्रत्येक योजना अपने व्यक्तिगत लक्ष्यों को प्राप्त करने तक सीमित रही और मूल उद्देश्य को प्राप्त करने में पिछड़ गयी। हमारे देश में बहु-एजेंसी ऋण प्रणाली के चलते ऋण का दुरूपयोग तथा ऋणों का अनुत्पादक कार्यों में प्रयोग आदि की संभावनाएं बढ़ी हैं। इसके अतिरिक्त भारतीय मुद्रा बाजार के दोनों अंगों (संगठित तथा असंगठित क्षेत्र) में सहयोग का अभाव है जो अर्थव्यवस्था के लिए हानिकारक है। मुद्रा बाजार के असंगठित भाग पर भारतीय रिज़र्व बैंक का नियंत्रण नहीं है।

गरीबी का दुष्चक्र

औसत भारतीय किसान गरीबी के दुष्चक्र में फंसा हुआ है। विश्व बैंक द्वारा प्रकाशित 'विश्व विकास रिपोर्ट' के अनुसार विश्व में निर्धन लोगों की सर्वाधिक संख्या भारत में है। रिपोर्ट के अनुसार 1 डालर प्रतिदिन से कम आय वाले लोगों की कुल जनसंख्या का 36 प्रतिशत भाग भारत में है। राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण संगठन द्वारा प्रकाशित एक रिपोर्ट के अनुसार देश की 21.8 प्रतिशत आबादी गरीबी रेखा से नीचे जीवनयापन कर रही है। ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले लोगों में लगभग 75 प्रतिशत गरीब हैं। अधिकांश गरीबों की आय में कोई खास वृद्धि नहीं

हुई है। वर्ष 2004-05 में गांवों में रहने वाली लगभग 10 प्रतिशत आबादी को माह में औसतन 559 रुपए में ही गुजारा करना पड़ा।

मानसून पर कृषि की निर्भरता

ग्रामीण क्षेत्र में लोगों की आय का मुख्य स्रोत कृषि है। परंतु भारतीय कृषि मानसून पर निर्भर है। अतः कृषि आधारित उद्योगों में मौसमी बेरोज़गारी पायी जाती है। देश के अधिकांश लघु एवं सीमांत किसान वर्ष में 4-6 माह तक बेरोज़गार रहते हैं। इसके अलावा देश में लगभग 6.30 करोड़ हेक्टेयर बंजर भूमि पड़ी है। उन्नत कृषि तकनीक उन स्थानों पर नहीं है, जहां सिंचाई की व्यवस्था नहीं है।

आधारभूत आवश्यकताओं की कमी

अधिकतर किसान आधारभूत आवश्यकताओं की कमी से जूझ रहे हैं। गांवों में स्वास्थ्य, भोजन, आवास एवं शिक्षा जैसी आधारभूत आवश्यकताओं का स्तर बहुत नीचा है। किसानों को स्वच्छ पेयजल नहीं मिल पाता है जिससे उनके स्वास्थ्य पर कुप्रभाव पड़ रहा है। औसत भारतीय किसान खेती के आधुनिक तौर-तरीके से परिचित नहीं है। अज्ञानता के कारण किसान भूमि की पोषक आवश्यकताओं के ठीक-ठाक आंकलन के लिए भू-परीक्षण नहीं कराते हैं और नाइट्रोजन उर्वरकों का जरूरत से ज्यादा प्रयोग करते हैं। उर्वरकों के असंतुलित प्रयोग से दीर्घ काल में भूमि की उत्पादकता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। कृषि ज्ञान केंद्रों की पहुंच केवल 0.7 प्रतिशत कृषकों तक ही है। किसानों का कम पढ़ा-लिखा होना उनके सूदखोरों के जाल में फंसने का कारण बन रहा है।

सरकारी तंत्र द्वारा ढुलमुल वसूली प्रयास

अधिकतर कृषि ऋण सरकार द्वारा प्रायोजित योजनाओं के अंतर्गत प्रदान किए जाते हैं। इन ऋणों की वसूली सरकारी देयों की भांति राज्य सरकार द्वारा वसूली अधिनियम के प्रावधानों के अंतर्गत की जाती है। ऋण वसूल न होने की स्थिति में बैंकों द्वारा राज्य सरकार के पक्ष में वसूली प्रमाणपत्र जारी किए जाते हैं। लेकिन अनुभव यह रहा है कि सरकारी तंत्र द्वारा वसूली हेतु सार्थक प्रयास नहीं किए जाते हैं। एक लम्बे समय तक वसूली प्रमाणपत्र लंबित रहते हैं तथा बैंकों की निधियां अवरूद्ध रहती हैं।

ऋण वसूल न होने की स्थिति में बैंकों द्वारा राज्य सरकार के पक्ष में वसूली प्रमाणपत्र जारी किए जाते हैं। लेकिन अनुभव यह रहा है कि सरकारी तंत्र द्वारा वसूली हेतु सार्थक प्रयास नहीं किए जाते हैं। एक लम्बे समय तक वसूली प्रमाणपत्र लंबित रहते हैं तथा बैंकों की निधियां अवरूद्ध रहती हैं।

अल्पविकसित ग्रामीण अवसंरचना

हमारे देश का ग्रामीण अवसंरचनात्मक ढांचा अभी भी अल्पविकसित है। सिंचाई सुविधाओं का पर्याप्त विकास नहीं हुआ है। अधिकांश गांव अभी भी पक्की सड़कों से नहीं जुड़े हैं। यातायात व्यवस्था खराब है। बिजली आपूर्ति यथेष्ठ नहीं है। किसान प्राकृतिक संसाधनों का समुचित विदोहन नहीं कर पाते हैं। पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल और बिहार को छोड़कर देश के शेष सभी राज्यों में अधिकांश खेती असिंचित है। सबसे खराब हालात महाराष्ट्र के हैं, जहां 1.75 करोड़ हेक्टेयर बुआई क्षेत्र में से 1.50 करोड़ हेक्टेयर क्षेत्र असिंचित है। शीत भंडारगारों का अभाव होने के कारण 15-20 प्रतिशत अनाज सड़ जाता है। 60 प्रतिशत गांवों में बाज़ार केंद्र नहीं है।

महाजनी चुंगल

देश के गरीब किसान महाजनी चुंगल में फंसे हैं। ऋण उपलब्ध कराने में सहकारी ऋण प्रणाली की कमजोरियों के कारण अनौपचारिक ऋण स्रोतों पर निर्भरता बढ़ी है। इन स्रोतों की ब्याज दर अपेक्षाकृत काफी अधिक होती है। एक सर्वेक्षण के अनुसार देश में 48.6 प्रतिशत किसान कर्ज के बोझ से दबे हैं और औसत किसान पर 12585 रुपए का कर्ज है। राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण के 59 वें दौर (वर्ष 2003) के अनुसार ऋण लेने वाले किसानों में 46 प्रतिशत अपनी आवश्यकताओं के लिए महाजनों पर निर्भर हैं। ऐसे किसान ऋण में ही जन्म लेते हैं और ऋण में ही मर जाते हैं। ऋण के मकड़जाल से बाहर न निकल पाने के कारण वे आत्महत्याएं करने को मजबूर हैं।

निम्न कृषि उत्पादकता

हमारे देश में प्रति एकड़ कृषि उत्पादन तथा प्रति श्रमिक

कृषि उत्पादन ब्रिटेन, अमरीका, कनाडा, जापान आदि देशों की तुलना में बहुत कम है। बीज/कीटनाशक आपूर्तिकर्ताओं द्वारा किसानों को घटिया बीजों/कीटनाशकों की आपूर्ति की जाती है जिससे उनकी फसल नष्ट हो जाती है। कृषि जगत में क्रांति लाने के नाम पर बीज आपूर्तिकर्ता कंपनियां किसानों को यह कहकर महंगा बीज बीज बेचती है कि उन बीजों के प्रयोग से कीटनाशक की आवश्यकता नहीं पड़ेगी। लेकिन बाद में उन बीजों के प्रयोक्ता किसानों को महंगे कीटनाशक खरीदने पड़ते हैं।

अनार्थिक जोत

कृषि उत्पादन में वृद्धि के लिए आवश्यक है कि भूमि एक न्यूनतम सीमा से कम नहीं होनी चाहिए अर्थात भूमि का आकार उस सीमा तक पर्याप्त होना चाहिए जिस सीमा तक किसान भूमि पर उत्पादन करके अपने परिवार का भरण-पोषण कर सके। भूमि की इस इकाई को आर्थिक जोत कहा जाता है। भारत में जोत का औसत आकार 5 एकड़ है जबकि ब्रिटेन में यह 62 एकड़ अमरीका में 216 एकड़, कनाडा में 223 एकड़ और ऑस्ट्रेलिया में 765 एकड़ है। भारत में 18 प्रतिशत जोतें 1 एकड़ से भी कम क्षेत्र वाली हैं। इसके अतिरिक्त जनसंख्या वृद्धि तथा उत्तराधिकार के नियम के कारण भूमि का उपविभाजन (भूमि का बार-बार टुकडों में बंटना) तथा अपखंडन (भूमि टुकड़े बिखरे हुए होना) हो रहा है। जोत का आकार पीढ़ी दर पीढ़ी परिवार विघटन से घटता जा रहा है। वर्तमान में देश में जोत का औसत आकार 1.41 हेक्टेयर है।

महंगाई

बीज, खाद तथा कीटनाशक रसायन महंगे होते जा रहे हैं। जिस अनुपात में इनकी कीमत बढ़ी है उसी अनुपात में कृषि उत्पाद के मूल्य नहीं बढ़े हैं। किसानों को आसानी से कम ब्याज दर पर ऋण मिल जाने से मुद्रा प्रसार की स्थिति हो जाती है जो महंगाई दर में वृद्धि का एक कारण है। इसी कारण भारतीय रिज़र्व बैंक महंगाई दर में तेज वृद्धि दृष्टिगोचर होने पर ब्याज दरों में वृद्धि कर देता है।

सब्सिडी का दुरूपयोग

सरकार जितनी धनराशि गरीबों के लिए आबंटित करती है, वह संपूर्ण धनराशि उन लोगों तक नहीं पहुंचती है। सब्सिडी के लिए प्रस्तावित राशि का एक बड़ा हिस्सा राजनैतिक पहुंच वाले बड़े किसानों और नौकरशाही की भेंट चढ़ जाता है। जब तक हम विचार और व्यवहार में ईमानदारी और निष्ठा नहीं लाएंगे, हमारे लिए बड़े से बड़ा आबंटन भी कम पड़ेगा।

फसल का उचित मूल्य नहीं

बिचौलियों के वर्चस्व के कारण किसानों को उनकी फसल का उचित मूल्य नहीं मिल पाता है। किसी कृषि उत्पाद हेतु अंतिम उपभोक्ता द्वारा भुगतान की जाने वाली राशि का केवल 30 प्रतिशत ही किसानों को मिल पाता है। लघु एवं सीमांत किसानों के पास मोलभाव करने की शक्ति नहीं होती है। इन्हें धन की तुरंत आवश्यकता होती है, अतः वे अपनी फसल शीघ्र बेचने के लिए बाध्य होते हैं। इसके अतिरिक्त वाणिज्यिक बैंक भी अपना ऋण वसूलने हेतु फसल आते ही किसानों पर दबाव बनाना प्रारंभ कर देते हैं। विवश किसान के पास कम दाम में फसल बेचने के अलावा कोई विकल्प नहीं होता है।

अवसर

सिंचाई सुविधाओं का विकास

देश में 141.16 मिलियन हेक्टेयर भूमि पर खेती की जाती है जिसमें से 83.55 मिलियन हेक्टेयर पर सिंचाई की जाती है। सिंचाई जल का वैज्ञानिक ढंग से उपयोग करके कृषि उत्पादन में वृद्धि की जा सकती है। शुष्क क्षेत्रों/ कम वर्षा वाले क्षेत्रों में शुष्क खेती की जा सकती है। अप्रयुक्त तथा व्यर्थ पड़ी भूमि कृषि, वानिकी हेतु प्रयोग में लायी जा सकती है। बहुफसल (एक ही भूमि पर वर्ष में एक से अधिक फसल उगाना) एवं मिश्रित फसलों द्वारा फसल की तीव्रता बढ़ायी जा सकती है। जल संसाधनों के तर्कसंगत उपयोग एवं जन संरक्षण को बढ़ावा देने से तेजी से गिरते जलस्तर को रोका जा सकता है।

हमारे देश में लगभग 6.30 करोड़ हेक्टेयर बंजर भूमि पड़ी है। इसमें से 1.20 करोड़ हेक्टेयर बंजर भूमि में बहुत कम साधनों से कुछ बहुउद्देशीय जैव इंधन पौधे (आयु 80 वर्ष) लगाए जा सकते हैं। 2 वर्ष के भीतर इन पौधों में फल आने लगते हैं। 1.20 करोड़ हेक्टेयर बंजर भूमि में उगाए गए जैव ईंधन पौधों से हर वर्ष लगभग 20,000 करोड़ रुपए की आय

अर्जित की जा सकती है तथा वृक्षारोपण एवं संयंत्र चलाने के लिए 1.20 करोड़ लोगों को रोज़गार मिल सकता है। इससे कच्चे तेल, जिसकी लागत अंतर्राष्ट्रीय बाज़ार में निरंतर बढ़ रही है, के आयात के लिए दी जाने वाली विदेशी मुद्रा में भी कमी आएगी। जैव इंधन कार्बन मोनो ऑक्साइड से मुक्त है। इस तेल का साबुन और मोमबत्ती उद्योग में भी उपयोग किया जा सकता है।

उर्वरकों का संतुलित प्रयोग

उर्वरकों के असंतुलित प्रयोग से दीर्घ काल में भूमि की उर्वराशक्ति पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। कार्बनिक/ अकार्बनिक उर्वरकों के संतुलित प्रयोग से कृषि उत्पादन में वृद्धि की जा सकती है। जैव कृषि से उत्पादन में वृद्धि की जा सकती है। जीएम तकनीक फसलों के आर्गनिस्म के मन-मुताबिक आनुवंशीय फेरबदल को संभव बनाती है। इससे जंगली फसलों, फूलों, फलों को सामान्य और उपयोगी प्रजातियों में बदला जा सकता है। फसलों की बढ़ती भोजन आवश्यकताओं और मानव शरीर तथा पर्यावरण के अनुकूल बनाया जा सकता है। इससे फसलें कीट हमलों से सुरक्षित रहेंगी तथा उत्पादन भी अधिक होगा। बीटी कपास वालवर्म कीटों के हमले से पूर्णतः सुरक्षित है। क्षारीय जमीन पर भी जीएम फसलें उगायी जा सकती हैं। ये फसलें सूखे को भी काफी हद तक सहन करने के योग्य होती हैं। जैविक खाद के उपयोग से उगाये गए खाद्य पदार्थों की मांग जापान, अमेरिका तथा यूरोपीय देशों में तेजी से बढ़ रही है। इस बढ़ती मांग के अनुरूप उत्पादन करके किसानों को लाभ उठाने के लिए प्रेरित किया जा सकता है। जैविक खादों के प्रयोग से मृदा में पाए जाने वाले विभिन्न तरह के सूक्ष्म जीवों की संख्या में भी बढ़ोत्तरी होती रहती है जो मृदा को काफी उर्वरक, उत्पादक एवं टिकाऊ बनाते हैं।

सूक्ष्म वित्त

बांग्लादेश, इंडोनेशिया तथा बोलीविया जैसे देशों ने दिखा दिया है कि गरीबों को मांग आधारित वित्तीय सेवाएं प्रदान करके काफी हद तक गरीबी कम की जा सकती है। सूक्ष्म वित्त के बैनर के तहत संगठित संस्थाओं में पारंपरिक बैंकिंग क्षेत्र द्वारा छोड़ दिए गए ग्राहकों को सेवा प्रदान करने के प्रति एक साझा वचनबद्धता थी। बांग्लादेश के प्रख्यात अर्थशास्त्री प्रो. मोहम्मद यूनुस, जिन्हें वर्ष 2006 के नोबल शान्ति पुरस्कार से सम्मानित किया गया है, इस विचार के प्रवर्तक हैं कि गरीबी कम करने में सूक्ष्म वित्त की उल्लेखनीय भूमिका है। मोहम्मद यूनुस ने यह साबित कर दिया है कि यदि अभावग्रस्त लोगों को गंभीरता के साथ आर्थिक सहयोग करके उनके जीवनस्तर को ऊपर उठाने की कोशिश की जाए तो वे भी अपने दुर्भाग्य से मुक्ति पा सकते हैं। गरीबी उन्मूलन के लिए खानापूर्ति और कागज़ी कार्रवाई करने के बजाय ग्रामीण स्तर पर सूक्ष्म वित्त आंदोलन चलाए जाने चाहिए। ऐसे आंदोलन बेहद स्थानीय स्तर पर ही चलाए जा सकते हैं क्योंकि इसमें ऋण लेनेवालों की गतिविधियों पर नजर रखी जा सकती है।

> देश में कुल 500 अरब रुपए सूक्ष्म वित्त की मांग है जबकि अभी तक सिर्फ 18 अरब रुपए सूक्ष्म वित्त के रूप में उपलब्ध कराए गए हैं। इस वर्ष 385000 स्वयं सहायता समूहों को सूक्ष्म वित्त से लाभान्वित करने का लक्ष्य है।

देश में कुल 500 अरब रुपए सूक्ष्म वित्त की मांग है जबकि अभी तक सिर्फ 18 अरब रुपए सूक्ष्म वित्त के रूप में उपलब्ध कराए गए हैं। इस वर्ष 385000 स्वयं सहायता समूहों को सूक्ष्म वित्त से लाभान्वित करने का लक्ष्य है।

वित्तीय समावेशन

भारतीय बाज़ार का आकार काफी विशाल है। बाज़ार का एक हिस्सा अभी भी बैंकिंग सुविधाओं से बाहर है। बैंकों के राष्ट्रीयकरण तथा सामाजिक नियंत्रण का मुख्य उद्देश्य देश के दूरस्थ क्षेत्रों में बैंकिंग सुविधाएं उपलब्ध कराना, गरीबों को महाजनों और साहूकारों के चुंगल से छुड़ाना था। यह कदम वित्तीय समावेशन की दिशा की ओर एक सही कदम था। लेकिन सरकार इस बात से चिंतित है कि वित्तीय संस्थाओं के विपुल विस्तार, आधुनिकीकरण तथा स्वामित्व विविधीकरण के बावजूद अतिसंवेदनशील समूहों की एक बड़ी संख्या आज भी वित्तीय क्षेत्र द्वारा प्रदत्त सेवाओं से वंचित है। औपचारिक तथा अनौपचारिक बाधाओं को कम करके वित्तीय क्षेत्र की पहुंच इन अतिसंवेदनशील समूहों तक विस्तृत कर देने से और अधिक लोग क्षेत्र की परिधि के अंदर आ सकेंगे। वित्तीय समावेशन के

संवर्धन हेतु बैंकों को अपनी सेवाओं की पहुंच के विस्तार हेतु विशेष रणनीति तैयार करनी चाहिए और इसे व्यवसाय अवसर तथा कार्पोरेट सामाजिक उत्तरदायित्व दोनों मानते हुए इसमें न्यून आय समूह के वित्तीय समावेशन के संवर्धन हेतु विशेष योजनाएं समामेलित करनी चाहिए। जून 2007 में केरल राज्य देश का पहला 'पूर्ण बैंकिंग राज्य' हो गया है। अन्य राज्यों को भी वित्तीय समावेशन हेतु प्रभावी प्रयास करने चाहिए। यदि हमें उन लोगों के जीवन स्तर में सुधार लाना है जो बैंक सुविधाओं से वंचित हैं, तो वित्तीय समावेशन की अपार संभावनाएं हैं।

सही अर्थों में वित्तीय समावेशन के लिए सरकारी तथा गैर-सरकारी क्षेत्रों को मिलकर प्रयास करने होंगे और समाज के वंचित लोगों तक विकासात्मक संस्थागत सेवाएं एवं मूलभूत सेवाएं पहुंचानी होंगी। वित्तीय संस्थाओं को गरीबों की पहुंच के भीतर लाने की अत्यधिक संभावनाएं मौजूद हैं केवल इस कारण से कि गरीब व्यक्ति प्रतिभूति या जमानत उपलब्ध नहीं करा सकते, उन्हें ऋण सुविधाओं से दूर रखना ठीक नहीं है। ऋण एवं अन्य वित्तीय सेवाओं के जरिए उन्हें उत्पादक कार्यों में संलग्न होने, जीविकोपार्जन करने, बचत जुटाने एवं अपने जीवनस्तर को ऊंचा उठाने के लिए उन्हें पर्याप्त अवसर दिए जाने चाहिए।

किसान क्रेडिट कार्ड

किसान क्रेडिट कार्ड योजना शुरू की गई है जिससे किसान बैंक ऋण राशि का प्रयोग एक बार में या आवश्यकतानुसार थोड़ी-थोड़ी मात्रा में कर सके। किसान क्रेडिट कार्ड का लाभ उन किसानों को भी मिल जाता है जिनकी अपनी निजी भूमि नहीं है बल्कि वे दूसरे व्यक्ति की भूमि पर खेती करते हैं। इससे किसानों को उत्पादक कार्यों के अलावा उपभोग आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए भी ऋण सुविधा मुहैया होती है। किसान क्रेडिट कार्ड धारक चेक बुक सुविधा का लाभ भी उठाते हैं। 1998 में किसान क्रेडिट कार्ड योजना शुरू होने से लेकर मार्च 2006 तक कुल 591 लाख किसान क्रेडिट कार्ड जारी किए गए जिनमें वाणिज्यिक बैंकों द्वारा 218 लाख कार्ड, सहकारी बैंकों द्वारा 304.3 लाख कार्ड तथा क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों द्वारा जारी 6.87 लाख कार्ड शामिल हैं। देश के ग्रामीण आबादी को देखते हुए यह संख्या बहुत कम है। अतः अधिकाधिक किसान क्रेडिट कार्ड जारी किए जाने चाहिए। किसान क्रेडिट कार्ड के जरिए दिए जाने वाले ऋण की सीमा 50,000 रुपए से बढ़ाकर 1 लाख रुपए कर देनी चाहिए तथा इसके अंतर्गत ऋण की अवधि 1 वर्ष से बढ़ाकर 5 वर्ष कर देना चाहिए।

बैंकों की ग्रामीण एवं अर्द्ध शहरी शाखाओं में सामान्य प्रयोजन क्रेडिट कार्ड योजना शुरू की गई है। इस योजना का उद्देश्य बैंकों के ग्राहकों को प्रतिभूति, प्रयोजन या ऋण के अंतिम उपयोग पर जोर न देते हुए नकदी प्रवाह के मूल्यांकन के आधार पर बाधारहित ऋण उपलब्ध कराना है। योजना के अंतर्गत 25000 रुपए तक की परिक्रामी ऋण सुविधा प्रदान की जाती है। योजना के अंतर्गत प्रदान किए गए ऋण का 50 प्रतिशत प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र के अंतर्गत अप्रत्यक्ष कृषि ऋण माना जाता है। सामान्य प्रयोजन क्रेडिट कार्ड योजना के अंतर्गत अधिकाधिक ग्रामीणों को लाया जाना चाहिए।

ग्रामीण अवसंरचना विकास

देश के गांवों को सड़कों से जोड़ना इसलिए भी आवश्यक है कि समय पर मंडियों में नहीं पहुंच पाने के कारण करोड़ों रुपये के फल व सब्जियां नष्ट हो जाते हैं। कृषि उत्पादों को ले जाने के लिए वातानुकूलित वाहनों की व्यवस्था करके अनाज सड़ने से बचाया जा सकता है। ग्रामीण अवसंरचना विकास निधि के अंतर्गत फरवरी 2007 तक कुल 59000 करोड़ रुपए संचयी ऋण संस्वीकृत किया जा चुका है तथा इसमें कुल 35121 करोड़ रुपए संचयी ऋण संवितरित किया जा चुका है। 'भारत निर्माण' नामक ग्रामीण अवसंरचना विकास योजना शुरू की गई है। कुल 174000 करोड़ रुपए की इस चार- वर्षीय योजना के तहत ग्रामीण अवसंरचना के 6 क्षेत्रों - सिंचाई, ग्रामीण सड़क, ग्रामीण आवास, ग्रामीण क्षेत्रों में पेयजल आपूर्ति, ग्रामीण विद्युतीकरण तथा ग्रामीण दूरसंचार को चुना गया है। वर्ष 2005-09 की चार वर्षों की अवधि में भारत निर्माण कार्यक्रम के तहत एक करोड़ हेक्टेयर अतिरिक्त क्षेत्र को सिंचित करने की योजना है। इस लक्ष्य को हासिल करने के लिए सिंचाई सुविधा निर्माण की मौजूदा 1.42 लाख हेक्टेयर प्रति वर्ष की गति को बढ़ाकर 2.5 लाख हेक्टेयर प्रति वर्ष करने का लक्ष्य रखा गया है।

ठेका खेती को प्रोत्साहन

ठेका खेती को बढ़ावा दिया जाना चाहिए जिससे किसानों को आवश्यक कृषि सामग्री समय पर उपलब्ध हो सके तथा उन्हें अपनी उपज का उचित मूल्य मिल सके। यदि कृषि उत्पाद किसानों से सीधे खरीदकर उपभोक्ताओं को उपलब्ध कराए जाएंगे तो बिचौलियों द्वारा की जाने वाली कमाई पर रोक लग सकेगी जिसका फायदा किसान और उपभोक्ता दोनों को होगा।

किसान परामर्श केंद्र

गांवों में अधिकाधिक किसान परामर्श केंद्र स्थापित किए जाने चाहिए जो किसानों को फसल, बीज, खाद की जानकारी देने के साथ-साथ ऋण सुविधाओं, बीमा सुविधाओं आदि की जानकारी दें। ये केंद्र किसानों की कृषि संबंधी समस्याओं का समाधान भी बताएं। इन केंद्रों पर टच-स्क्रीन आधारित जानकारी कियोस्क स्थापित किए जाएं जिससे किसान विभिन्न फसलों, जोत का मौसम, जोत का क्षेत्र, मिट्टी, बीज, जल प्रबंधन, उर्वरक प्रबंधन, फसल कटाई आदि के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकें। वेबसाइट पर फसल रोग प्रबंधन, कृषि आयात-निर्यात के बारे में भी जानकारी दी जाए तथा विभिन्न मंडियों में कृषि उत्पादों के दैनिक आधार पर थोक बाज़ार भाव का नवीनतम और ऑन-लाइन ब्यौरा उपलब्ध कराया जाए।

कृषि उत्पाद का उचित मूल्य

केंद्र सरकार ने राज्यों से कहा है कि वे कृषि मंडियों से बाहर कृषि जिंसों की खरीद की व्यवस्था करें। इसका सबसे बढ़िया विकल्प यह है कि निजी क्षेत्र को खरीद केंद्र खोलने की इज़ाजत दी जाए। इससे जहां किसानों के पास अपने उत्पाद बेचने का विकल्प होगा वहीं कृषि मंडियों के साथ-साथ निजी खरीद केंद्रों में भी इनकी मांग बढ़ेगी। निजी क्षेत्र को सीधे माल खरीदने का मौका मिलेगा। इससे किसानों को अपने माल के उचित दाम मिलेंगे, सरकार का राजस्व बढ़ेगा तथा कृषि क्षेत्र में निजी निवेश बढ़ेगा।

चुनौती

गैर निष्पादक आस्तियां

वाणिज्यिक बैंकों द्वारा प्रदान किए गए कुल ऋणों में 51815 करोड़ रुपए की ऋण आस्तियां 31 मार्च 2006 को गैर-निष्पादक आस्तियां थीं जो वाणिज्यिक बैंकों के कुल ऋणों का 3.7 प्रतिशत है। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों द्वारा प्रदान किए गए ऋणों में गैर निष्पादक आस्तियां 31 मार्च 2006 को 2890 करोड़ रुपए थीं जो इन बैंकों के कुल ऋणों का 7.28 प्रतिशत है। प्राथमिकता क्षेत्र तथा गैर-प्राथमिकता क्षेत्र में वाणिज्यिक बैंकों की सकल गैर-निष्पादक आस्तियों का स्तर तालिका-4 में दर्शाया गया है।

सकल घरेलू उत्पाद में कृषि का योगदान कम

इसका सबसे बढ़िया विकल्प यह है कि निजी क्षेत्र को खरीद केंद्र खोलने की इज़ाजत दी जाए। इससे जहां किसानों के पास अपने उत्पाद बेचने का विकल्प होगा वहीं कृषि मंडियों के साथ-साथ निजी खरीद केंद्रों में भी इनकी मांग बढ़ेगी।

देश की 58 प्रतिशत से अधिक कार्यशील जनसंख्या कृषि में लगी हुई है किन्तु सकल घरेलू उत्पाद में इसका योगदान 20 प्रतिशत से भी कम है। वर्ष 1980-81 में देश के सकल घरेलू उत्पाद में कृषि की हिस्सेदारी 35 प्रतिशत थी जो वर्ष 2005-06 में घटकर 17 प्रतिशत रह गयी है। देश की विकास दर 8.5 प्रतिशत होना भले ही खुशी की बात हो सकती है लेकिन कृषि विकास दर 2.73 प्रतिशत रहना चिंता की बात है। देश का वह क्षेत्र जो सबसे ज्यादा रोज़गार उपलब्ध कराता हो, उसकी विकास दर सबसे कम होना एक बड़ी चुनौती है।

विदेशी कृषि उत्पादों से चुनौती

विश्व व्यापार संगठन संधि के अनुसार भारत को एक निश्चित मात्रा में (12000 करोड़ रुपए) अनाज विदेशों से आयात करना पड़ेगा भले ही देश में खाद्यान्न उत्पादन भरपूर हो। इससे घरेलू बाज़ार में कृषि उत्पादों की कीमतें लागत मूल्य से भी नीची हो जाएंगी। भारत यदि मुक्त व्यापार प्रणाली का उपयोग आयात की सुविधा के तौर पर करता है तो इससे हमारी कृषि के विनाश का रास्ता खुलेगा। (निर्यात के तौर पर उपयोग करने से समृद्धि के खुलेंगे)। आने वाले समय में भारतीय कृषि को कम कीमत व उच्च गुणवत्ता वाले विदेशी कृषि उत्पादों से चुनौती मिलने वाली है। अतः हमें अपने कृषि क्षेत्र को उच्च तकनीक संयुक्त/ ऊंची फसल देने वाले बीजों के उपयोग को

बढ़ावा देना होगा। विश्व व्यापार समझौते के अनुरूप प्रशुल्क समाप्त होने के बाद देश में कृषि उत्पादों का आयात बढ़ सकता है। सब्सिडी कम करने के दबाव के चलते लागतों में वृद्धि हो सकती है। कृषि वैश्वीकरण से घरेलू बाज़ारों में सस्ते विदेशी कृषि उत्पादों की भरमार होने से इस बात की संभावना है कि भारतीय किसानों को बहुत नुकसान हो तथा बीज उद्योग बहुराष्ट्रीय कंपनियों के हाथों सिमट जाए।

बौद्धिक संपदा अधिकार कानून

बहुराष्ट्रीय कंपनियां बीज एकत्र कर और उनमें सामान्य परिवर्तन कर बौद्धिक संपदा अधिकार कानून के प्रावधानों के अंतर्गत पेटेण्ट कराकर उन्हें ऊंची कीमतों पर बेचेंगी। इन बीजों का प्रयोग केवल एक बार फसल उत्पादन के लिए किया जा सकेगा अर्थात प्रत्येक वर्ष इन बहुराष्ट्रीय कंपनियों से बीज खरीदना पड़ेगा। भारतीय किसान अपने ही खेत में बीज से बीज तैयार नहीं कर पाएगा। उनका यह भी तर्क है कि कृषि जगत में क्रांति लाने के नाम पर बहुराष्ट्रीय कंपनियां किसानों को यह कहकर महंगा बीज बेचती हैं कि उन बीजों के प्रयोग के बाद कीटनाशक की आवश्यकता नहीं पड़ेगी। लेकिन बाद में उन बीजों के प्रयोक्ता किसानों को महंगे कीटनाशक खरीदने पड़ते हैं। विषैले कीटनाशकों के ज्यादा प्रयोग से किसानों के स्वास्थ पर कुप्रभाव पड़ रहा है। यदि किसान से अपना बीज तैयार करने तथा अपनी फसल बेचने का अधिकार छीन लिया गया तो देश की खाद्य सुरक्षा खतरे में पड़ सकती है।

बेरोजगारी

उदारीकरण और वैश्वीकरण के नाम पर बहुराष्ट्रीय कंपनियों को खुली छूट देने से हमारे स्वदेशी उद्योग चौपट हो जाएंगे, आर्थिक व्यवस्था ठप्प हो जाएगी, बेरोज़गारी बढ़ेगी और हमारी आर्थिक संप्रभुता इन कंपनियों के अधीन हो जाएगी। विश्व व्यापार संगठन समझौते से कृषि उपज का समर्थन मूल्य एवं कृषि सहायता तय करने में सरकार के अधिकार पर रोक लगेगी, सार्वजनिक वितरण प्रणाली समाप्त करनी होगी और अनाज का आयात करना होगा।

गैर-सरकारी संगठनों में पारदर्शिता का अभाव

भारत में 12 लाख से अधिक गैर-सरकारी संगठन हैं। इनमें कई तो गैर-हाजिर संगठन हैं जिन्हें शायद ही उन इलाकों या वहां के रहने वाले लोगों के बारे में जानकारी हो जहां वे काम करने का दावा करते हैं क्योंकि इन गैर-सरकारी संगठनों का मुख्यालय वहां नहीं होता है। ये गैर-सरकारी संगठन भी कमोबेश सरकारी विभाग बन चुके हैं और इनके कामकाज में कोई पारदर्शिता नहीं है।

मानसून पर कृषि की निर्भरता

वर्षा जल का संरक्षण नहीं होने से देश में कुल कृषि भूमि के केवल 33 प्रतिशत भाग में ही सिंचाई सुनिश्चित है। शेष भाग या तो मानसून पर निर्भर है या फिर भूमिगत जल की उपलब्धता पर निर्भर है। पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल और बिहार को छोड़कर देश के शेष सभी राज्यों में अधिकांश खेती असिंचित है। सबसे खराब हालात महाराष्ट्र के हैं, जहां 1.75 करोड़ हेक्टेयर बुआई क्षेत्र में से 1.50 करोड़ हेक्टेयर क्षेत्र असिंचित है।

मुद्रास्फीति

खाद, बीज, कीटनाशक, पानी, बिजली, कृषि उपकरणों के मूल्य बढ़ने से कृषि की लागत बढ़ी है लेकिन कृषि उत्पादों के मूल्य में आनुपातिक वृद्धि नहीं हुई है। यदि देश की 2 प्रतिशत की कृषि विकास दर को 5 प्रतिशत की मुद्रास्फीति दर के साथ रखकर देखें तो हमें पता लगेगा कि देश के गांव और किसान मेहनत/उपज के बावजूद घाटे में रहते हैं। अतः हमारी प्राथमिकता यह होनी चाहिए कि मुद्रास्फीति और ब्याज दर के मुकाबले कृषि को इतना लाभदायक बनाया जाए कि किसान कर्ज चुकाने /बाकी सेवाओं का मूल्य अदा करने के बाद सिर उठाकर जी सके।

बिचौलियों का वर्चस्व

किसानों की उपज का बाज़ार में लाभकारी मूल्य पर न बिक पाने की समस्या से निजात दिलाने के लिए सरकार द्वारा सब्सिडी दी जाती है। लेकिन इस सब्सिडी का एक बड़ा हिस्सा बिचौलियों द्वारा हड़प लिया जाता है अथवा भ्रष्ट तंत्र की भेंट चढ़ जाता है।

कृषि क्षेत्र के कायाकल्प के लिए समग्र रणनीति की

आवश्यकता है। गरीब किसानों को संस्थागत ऋण समय पर एवं रियायती ब्याज दर पर उपलब्ध कराया जाना चाहिए। किसानों को प्रशिक्षित किया जाना चाहिए कि वे उन स्थानों पर बीटी कपास की खेती न करें जहां पर सिंचाई सुविधाएं अपर्याप्त हैं। गरीब किसानों को गुणवत्तापूर्ण बीज मुफ्त दिया जाना चाहिए। खराब बीज या खराब कीटनाशक के आपूर्तिकर्ता को कठोर दंड देने व उससे मुआवज़ा दिलाने का प्रावधान कानून में होना चाहिए। जिन किसानों की फसलें प्रभावित हों, उनके अल्पावधि ऋणों को सावधि ऋणों में परिवर्तित कर देना चाहिए। उन किसानों के लिए जो ऐसी समस्या से ग्रस्त है जो उनके नियंत्रण से परे हैं, 'एक समयी निपटान योजना' (ओटीएस) का प्रावधान होना चाहिए। लगातार तीन वर्षों तक प्राकृतिक आपदा की स्थिति में किसानों द्वारा लिए गए ऋणों की शेष राशि माफ कर दी जानी चाहिए। इसके लिए नाबार्ड तथा भारतीय रिज़र्व बैंक के सहयोग से एक राष्ट्रीय कृषि स्थिरीकरण कोष की स्थापना की जानी चाहिए। गेहूं चावल की तरह सभी फसलों का न्यूनतम समर्थन मूल्य निर्धारित करना चाहिए। न्यूनतम समर्थन मूल्य घोषित करते समय इनपुट लागत का ध्यान रखा जाना चाहिए। ऐसी व्यवस्था की जानी चाहिए कि उपज का समर्थन मूल्य उसके बाज़ार मूल्य से कम न हो।

> मुक्त व्यापार प्रणाली का प्रयोग भारत यदि निर्यात के लिए करता है तो इससे समृद्धि के द्वार खुलेंगे, लेकिन यदि प्रणाली का प्रयोग आयात के लिए किया जाएगा तो इससे हमारी कृषि के विनाश का रास्ता खुलेगा।

कृषि उत्पाद विपणन समिति अधिनियम में संशोधन करना चाहिए जिससे निजी क्षेत्र स्वयं की मंडियां स्थापित कर सके तथा किसानों से सीधे खरीदारी कर सके। किसानों की समस्याओं के समाधान के लिए ग्रामीण क्षेत्रों में किसान मंचों का विस्तार किया जाना चाहिए। सरकारी स्तर पर ऐसे प्रयास किए जाने चाहिए जिससे तंगहाली में जी रहे किसानों को कुछ तत्कालिक राहत मिल सके। पंजीकृत भंडारगृह द्वारा जारी भंडारगृह रसीद की प्रतिभूति पर बैंक द्वारा ऋण प्रदान करने हेतु कानून में यथोचित संशोधन किया जाना चाहिए। इससे लघु एवं सीमांत किसान अपनी उपज को उसकी अच्छी कीमत मिलने तक रोकने में समर्थ हो सकेंगे। भंडारण हेतु निजी क्षेत्र सहभागिता प्रोत्साहित की जाए ताकि किसानों को अपने पास ही भंडारण सुविधा मिल सके। एक या अधिक किसानों को एक निर्धारित राशि से अधिक ऋण प्रदान करने वाले महाजनों के लिए यह अनिवार्य किया जाए कि वे भारतीय रिज़र्व बैंक / नाबार्ड के पास अपना पंजीकरण कराएं और त्रैमासिक अंतराल पर ऋण संबंधी विवरणी भारतीय रिज़र्व बैंक / नाबार्ड को प्रस्तुत करें। बगैर पंजीयन के ऐसे ऋण प्रदान करने वाले महाजनों के विरूद्ध कठोर कार्रवाई की जाए।

एक लाख रुपए तक के कृषि ऋण के मामले में स्टाम्प शुल्क पूरी तरह समाप्त किया जाना चाहिए। कुछ सीमित फसलों का बीमा करने के बजाय एक समयबद्ध कार्यक्रम बनाकर इसके दायरे में सभी किसानों तथा सभी फसलों को लाया जाना चाहिए। किसान परिवार स्वास्थ्य बीमा पालिसी जारी की जानी चाहिए जिसमें विभिन्न प्रकार के जोखिम (आश्रितों की बीमारी, दुर्घटना मृत्यु, स्थायी / आंशिक अपंगता आदि) शामिल हों और इनके प्रीमियम का आंशिक भुगतान सरकार अपनी ओर से करे।

विशेष आर्थिक अंचल स्थापित करने के लिए बंजर भूमि का उपयोग करना चाहिए न कि उपजाऊ भूमि का। भूमि का अधिग्रहण करते समय यह सुनिश्चित किया जाए कि किसानों को उनकी भूमि का वाजिब दाम मिले। यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि विशेष आर्थिक अंचल निर्यात संवर्द्धन और पूंजी की आमद के बजाय रियल एस्टेट घोटाले का स्रोत न बन जाएं। ऐसा कानून बनाया जाना चाहिए जिससे बिचौलिये और बड़ी कंपनियां किसानों का शोषण न कर सकें। ठेका खेती को बढ़ावा दिया जाना चाहिए जिससे किसानों की आवश्यक कृषि सामग्री समय पर उपलब्ध हो सके तथा उन्हें अपने उपज का उचित मूल्य मिल सके। बिचौलियों की भूमिका कम करने तथा किसानों को उपज का उचित मूल्य दिलाने हेतु 'किसान बाजार' स्थापित किए जाने चाहिए। जितनी धनराशि का आबंटन किया जाए वह संपूर्ण धनराशि उस मद में ईमानदारी से खर्च हो। औद्योगिक विकास के नाम पर कृषि क्षेत्र के हितों पर कुठाराघात नहीं होना चाहिए। विशेष आर्थिक अंचल से पहले विशेष कृषि अंचल स्थापित किए जाने चाहिए।

उदारीकरण की दिशा में चलते हुए सरकार को इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि देश के किसान खेती से विमुख न हों। किसान परामर्श केंद्र स्थापित किए जाने चाहिए जो किसानों को न केवल फसल, बीज, खाद की जानकारी दें बल्कि ऋण सुविधाओं, बीमा सुविधाओं, ऋण राहत पैकेज की जानकारी भी दें और साथ ही किसानों को इस प्रकार अभिप्रेरित करें जिससे वे कोई भी आत्मघाती कदम न उठाएं। मुक्त व्यापार प्रणाली का प्रयोग भारत यदि निर्यात के लिए करता है तो इससे समृद्धि के द्वार खुलेंगे, लेकिन यदि प्रणाली का प्रयोग आयात के लिए किया जाएगा तो इससे हमारी कृषि के विनाश का रास्ता खुलेगा।

दीर्घकाल में देश के किसानों के हितों की रक्षा हेतु भारत को विश्व व्यापार संगठन के मंच पर विकसित देशों के कुटिल इरादों के प्रति सावधान रहना चाहिए। बीजों को बचाये रखने के लिए यह आवश्यक है कि बीज व्यापार में बहुराष्ट्रीय कंपनियों के निर्बाध प्रवेश को रोका जाय अन्यथा भारत की जैव संपदा पर बहुराष्ट्रीय कंपनियों का आधिपत्य हो जाएगा। हमें विकसित देशों के द्वारा दिखाए गए दिवास्वप्नों से दिग्भ्रमित न होते हुए यथार्थ व व्यावहारिक नीतियों को प्राथमिकता देनी चाहिए। कृषि क्षेत्र की चुनौतियों का सामना केंद्र सरकार और राज्य सरकारों को मिलकर करना चाहिए और इसके लिए एक विस्तृत कार्ययोजना बनानी एवं क्रियान्वित की जानी चाहिए। कृषि को न केवल अनाज उत्पादन के दृष्टिकोण से, बल्कि किसान कल्याण के दृष्टिकोण से देखा जाना चाहिए।

राज्य सरकारों को चाहिए कि वे सबसे निचले स्तर पर किसानों की आवश्यकताओं का आंकलन करें और भूमि क्षेत्र के विकास को बढ़ावा दें। कृषि में और अधिक सार्वजनिक निवेश सुनिश्चित करने के उद्देश्य से केंद्र सरकार द्वारा राज्य सरकारों को और अधिक धन उपलब्ध कराया जाना चाहिए। गेहूं और चावल के आयात पर निर्भरता कम करने के लिए खाद्य सुरक्षा मिशन शुरू किया जाना चाहिए, जिसमें उन चुने हुए जिलों पर ध्यान केंद्रित किया जाए, जो कम लागत में पैदावार में ज्यादा वृद्धि करने का माद्दा रखते हैं। कृषि विकास की मौजूदा 1.8 प्रतिशत दर को बढ़ाकर 4 प्रतिशत करने के लिए आगामी 5 वर्षों में देश के कृषि क्षेत्र में 300000 करोड़ रुपए के निवेश की जरूरत को दृष्टिगत रखते हुए देश के कृषि क्षेत्र में विदेशी निवेश आकर्षित किया जाना चाहिए। लेकिन ऐसा करते समय सरकार को देश के किसानों और मजदूरों के हितों का भी ध्यान रखना होगा।

बैंकों को भी समय-समय पर स्वॉट विश्लेषण करते रहना चाहिए और कमज़ोर पक्षों को दूर करके मजबूत पक्षों का लाभ उठाना चाहिए। बैंकों को कृषि क्षेत्र की संभाव्यताएं तलाशते रहना चाहिए और योजनाबद्ध रूप से कदम उठाने चाहिए जिससे चुनौतियों को अवसरों में बदला जा सके तथा अवसरों को अपने अनुकूल बनाया जा सके।

◆

तालिका - 1

वाणिज्यिक बैंकों द्वारा संवितरित कृषि ऋण (राशि करोड़ रुपए में)

2002-03	2003-04	2004-05	2005-06	2006-07
82000	86981	125309	167775	203297

तालिका-2

कृषिगत उत्पादन

उत्पाद	इकाई	2001-02	2005-06	2006-07
खाद्यान्न	मिलियन टन	212.02	208.30	209.03
गेहूं	वही	71.81	69.40	72.50
चावल	वही	93.08	91.80	92.80
दालें	वही	13.19	13.40	14.50
तिलहन	वही	20.80	27.73	23.60
गन्ना	वही	300.10	278.38	315.50
कपास	मिलियन गांठे	10.09	19.57	21.00
जूट एवं मेस्ता	वही	11.64	10.74	11.40

तालिका - 3

विभिन्न क्षेत्रों तथा सकल घरेलू उत्पाद में वृद्धि दर

	2003-04	2004-05	2005-06	2006-07
कृषि	10	-0.04	6.02	2.73
उद्योग	7.38	9.75	9.58	12.31
सेवा	8.51	9.55	9.83	11.18
सकल घरेलू उत्पाद	8.54	7.52	8.99	9.40

तालिका - 4

वाणिज्यिक बैंकों की सकल गैर-निष्पादक आस्तियां

सकल गैर-निष्पादक आस्तियां	3.7%
प्राथमिकता क्षेत्र में	5.6%
गैर-प्राथमिकता क्षेत्र में	2.8%

तालिका - 5

सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों की कृषि क्षेत्र में गैर-निष्पादक आस्तियां

	धनराशि करोड़ रुपये	प्रतिशत
मार्च 2004	7240.30	14.44
मार्च 2005	7254.05	15.21
मार्च 2006	6202.94	14.99

स्रोतः

1. योजना, जुलाई 2007 2. दि इंडियन बैंकर, जून 2007 3. दि इकॉनॉमिक टाइम्स, दिनांक 1 जून 2007
4. मेट्रोपोलिटन चेम्बर्स ऑफ कॉमर्स एंड इंडस्ट्रिज, ढाका (बांग्लादेश) में भारतीय रिज़र्व बैंक के गवर्नर डॉ. वाय. वी. रेड्डी द्वारा दिनांक 17 मई 2007 को दिया गया भाषण 5. प्रतियोगिता दर्पण अतिरिक्तांक, भारतीय अर्थव्यवस्था, अप्रैल 2007.
6. बिझनेस टूडे, जनवरी 2007 7. भारतीय बैंक संघ द्वारा प्रकाशित इंडियन बैंकिंग ईयर बुक 2006
8. बैंकिंग चिंतन-अनुचिंतन, अप्रैल - जून 2007, आर्थिक उदारीकरण और किसान

कृषि क्लब के संचालन में बैंकों की भूमिका

◉ डॉ. भागचंद्र जैन
सह प्राध्यापक (कृषि अर्थशास्त्र)
इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय
रायपुर

आज ऐसा समय आ गया है कि किसान का बेटा किसान नहीं बनना चाहता। कृषि में बाज़ारू दृष्टिकोण होने के बावजूद भी किसानों, ग्रामीणों में विशेषकर युवकों में कृषि के प्रति कम रूचि दिखाई देने लगी है। कृषि में पूंजी निवेश घटने लगा है। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन के 59 वें सर्वेक्षण से ऐसी जानकारी मिली है कि भारत के 40 प्रतिशत किसान अब कोई और काम-धंधा करना चाहते हैं। खेत बंटते जा रहे हैं, कृषि जोत का आकार घटता जा रहा है, जिसके कारण लगभग 80 प्रतिशत कृषक परिवार सीमांत और लघु कृषकों की श्रेणी में आ गये हैं। वर्ष 1979-81 में प्रति व्यक्ति कृषि योग्य भूमि की उपलब्धता 0.24 हेक्टेयर थी, जो कि वर्ष 1997-99 में घटकर केवल 0.10 हेक्टेयर रह गई। इसलिये अब जरूरी हो गया है कि किसान संगठित होकर कृषक क्लब बनायें। कृषि में संसाधनों और आदानों को ऐसे जुटायें कि अपेक्षित कृषि विकास की दर प्राप्त हो सके।

किसानों और बैंकों के बीच में तालमेल और संबंध मजबूत बनाने के लिये राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक ने अपनी स्थापना के तुरंत बाद कृषक क्लब बनाने का शुभारम्भ किया। कृषक क्लब की शुरूआत 25 वर्ष पहले प्रायोगिक तौर पर तीन राज्यों के छः जिलों में की गई थी, इन क्लबों की संख्या 31 मार्च 2005 तक 13664 हो चुकी है। *(देखें तालिका-1)* कृषक क्लबों के द्वारा स्व सहायता समूह गठित किये गये हैं तथा बैंक की योजनाओं और कृषि तकनीक की जानकारी किसानों,ग्रामीणों तक पहुंचाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है।

कृषक क्लब कार्यक्रम

बैंकों, शासकीय एवं स्वयं सेवी संगठनों के सहयोग से कृषक क्लब की स्थापना की जाती है, जो बैंकों और किसानों,

(तालिका एक)

राज्यवार कृषक क्लब (31 मार्च 2005 की स्थिति)*

क्र.	राज्य	कृषक क्लब
1.	अण्डमान एवं निकोबार	15
2.	आन्ध्र प्रदेश	1647
3.	असम	128
4.	अरूणाचल प्रदेश	14
5.	बिहार	546
6.	छत्तीसगढ़	142
7.	दिल्ली	3
8.	गोवा	30
9.	गुजरात	1026
10.	हरियाणा	476
11.	हिमाचल प्रदेश	97
12.	जम्मू एवं कश्मीर	70
13.	झारखंड	511
14.	कर्नाटक	1933
15.	केरल	368
16.	मध्य प्रदेश	661
17.	महाराष्ट्र	1324
18.	मणिपुर	2
19.	मेघालय	21
20.	नागालैण्ड	1
21.	उड़ीसा	462
22.	पंजाब	361
23.	राजस्थान	523
24.	सिक्किम	36
25.	तमिलनाडु	847
26.	त्रिपुरा	26
27.	उत्तर प्रदेश	1223
28.	उत्तरांचल	291
29.	पश्चिम बंगाल	880
	योग	**13664**

*स्रोतः सिंह सुखबीर (2006) फारमर्स क्लब प्रोग्राम एण्ड नाबार्ड फाइनेंसिंग एग्रीकल्चर, 38(1) : 21-23

ग्रामीणों के बीच में एक विश्वास की कड़ी बनाते हैं। यह ऐसा कार्यक्रम है, जिससे 'साख से विकास' का सिद्धांत साकार हो सकता है। यह कार्यक्रम शासन द्वारा कृषि की चुनौतियों का सामना करने के लिये चलाया जा रहा है। कृषक क्लबों द्वारा ग्रामीण विकास के सपने को साकार करने के लिये पांच सिद्धांतों को व्यावहारिक रूप देने के प्रयास किये जा रहे हैं।

ऋण आधारित विकास के सिद्धांत

- तकनीकी के अनुरूप ऋण का उपयोग,
- आर्थिक एवं तकनीकी मानदंडों को ध्यान में रखकर ऋण की शर्तों का पालन,
- ऋण से उत्पादकता और आय में वृद्धि,
- प्राप्त अतिरिक्त आय में से कुछ बचत,
- नियमित रूप से ऋण की किश्तों की वापसी।

कृषक क्लब साख से विकास सिद्धांत के प्रति जागृति लाकर बैंकों द्वारा दी जाने वाली विभिन्न साख-सुविधाओं की जानकारी पहुंचाते हैं। ग्रामीण समुदाय को साख संबंधी सलाह देते हैं। ऋण को उपयोगी बनाने के लिये तथा गुणवत्तापूर्ण कृषि उत्पादन के लिये ये क्लब उन्नत तकनीक को बढ़ावा देते हैं। कर्जदारों को समय पर ऋण वापसी हेतु प्रोत्साहन देते हैं। क्लब द्वारा ऐसा प्रयास किया जाता है, जिससे गांव और सहयोगी संस्थाओं के बीच में प्रभावी संबंध स्थापित हों। कृषक क्लब स्व सहायता समूहों के साथ मिलकर विभिन्न सामाजिक- आर्थिक समस्याओं पर चर्चा करते हैं और उनका समाधान करते हैं। क्लब द्वारा अच्छे कर्जदारों की पहचान करने में सहयोग मिलता है। इसके अलावा ग्राम विकास योजना बनाने में क्लब सहयोग करते हैं। ग्रामीणों में बचत की आदत को कृषक क्लब बढ़ावा देते हैं। ऋण की समय पर वापसी हेतु प्रेरणा देते हैं। विभिन्न विकास कार्यों में क्लब के सदस्य शामिल होते हैं, जिससे गांव का पूर्णरूपेण, सर्वांगीण सामाजिक- आर्थिक विकास का रास्ता खुल जाता है।

गठन प्रक्रिया

विभिन्न बैंकों की शाखाओं, कृषि विज्ञान केंद्रों और स्वयं सेवी संस्थाओं द्वारा कृषक क्लब का गठन किया जाता है; जिसमें अग्रलिखित प्रक्रिया अपनायी जाती है-

- साख से विकास के सिद्धांत को मानने वाले 15 से 20 कर्जदारों की पहचान की जाती है,
- ऐसे कर्जदारों की रूचि सामाजिक उन्नयन और समन्वित ग्रामीण विकास में होनी जरूरी है,
- कर्जदारों की पहचान समीप के 2 से 4 गांवों से की जाती है,
- कर्जदार स्वयं सेवक की भूमिका निभाते हैं,
- सभी स्वयं सेवकों की सहमति से एक मुख्य स्वयं सेवक का नामांकन किया जाता है,
- राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक द्वारा कृषक क्लब को मान्यता दी जाती है,
- अपनी अलग पहचान के आधार पर कृषक क्लब को कोड नम्बर दिया जाता है,
- राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक द्वारा क्लब को स्वीकृति पत्र दिया जाता है,
- कृषक क्लब का उद्घाटन किया जाता है,
- कृषक क्लब के स्वयं सेवकों को परिचयात्मक जानकारी दी जाती है।

वित्तीय सहयोग

राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक द्वारा कृषक क्लब को विभिन्न प्रकार से वित्तीय सहयोग दिया जाता है, जैसेः-

1. उन्मुखीकरण हेतु,
2. वार्षिक रखरखाव हेतु,
3. मीट एण्ड मैच कार्यक्रम हेतु,
4. नेतृत्व विकास कार्यक्रम हेतु।

बैंक द्वारा वार्षिक रखरखाव के लिये कृषक क्लब को प्रति वर्ष 2000 रुपये सहायता दी जाती है। रखरखाव के लिये वर्ष

की गणना क्लब की स्थापना से की जाती है। यह सहायता तीन वर्षों तक दी जाती है। वार्षिक रखरखाव में लेखन सामग्री, क्लब किट, डाक व्यय, मुख्य स्वयं सेवक के दौरे का व्यय, बैठकों का व्यय, प्रदर्शनी, मेला, क्षेत्र प्रदर्शन, फिल्म प्रदर्शन, विशेषज्ञों की वार्ता, सामाजिक और सांस्कृतिक कार्यक्रमों के आयाजन पर व्यय आदि को शामिल किया जाता है। *(देखें तालिका -2)* *तालिका दो*

कृषक क्लब के संचालन हेतु नाबार्ड से वित्तीय सहयोग

कार्यक्रम	*आयोजक*	*सहायता राशि*
उद्घाटन के समय आधारभूत उन्मुखीकरण प्रशिक्षण	*प्रायोजक बैंक/ स्वयं सेवी संस्था/ नाबार्ड*	*5000/- रुपये*
वार्षिक रखरखाव हेतु प्रति क्लब (तीन वर्षों तक)	*प्रायोजक बैंक*	*2000/- रुपये*
वार्षिक अनुदान गैर-सरकारी संगठनों को (पांच वर्षों तक)	*स्वयं सेवी संस्था*	*3000/- रूपये*
मीट एण्ड मैच कार्यक्रम (कृषि क्षेत्र)	*प्रायोजक बैंक/ स्वयं सेवी संस्था/नाबार्ड*	*5000/- रुपये*
नेतृत्व विकास कार्यक्रम (राज्य स्तरीय या जिला स्तरीय)	*प्रायोजक बैंक/ स्वयं सेवी संस्था/नाबार्ड*	*10500/- रुपये*

कृषक क्लब की कार्यप्रणाली

कृषक क्लब की स्थापना के बाद स्वयं सेवकों के लिये परिचयात्मक कार्यक्रम कराया जाता है, इसके बाद राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक द्वारा संबंधित बैंक एवं स्वयं सेवी संस्थाओं के माध्यम से प्रशिक्षण आयोजित किए जाते हैं। यह प्रशिक्षण मीट एवं मैच कार्यक्रम, स्थल एवं समर्थन कार्यक्रम, महिला विकास कार्यक्रम, नेतृत्व विकास कार्यक्रम और स्व-सहायता समूह प्रशिक्षण कार्यक्रम के अंतर्गत दिया जाता है।

(क) मीट एवं मैच कार्यक्रम

इस कार्यक्रम के अंतर्गत स्वयं सेवकों, ग्रामीणों, शासकीय विभागों और स्वयं सेवी संस्थाओं के आपसी सहयोग से परिचर्चा आयोजित की जाती है। परिचर्चा से ग्राम विकास की आवश्यकताओं को चिन्हांकित किया जाता है। उनकी प्राथमिकतायें निर्धारित की जाती हैं और ग्रामीणों की अपेक्षाओं के अनुरूप क्लब की वार्षिक कार्य योजना बनायी जाती है।

मीट एवं मैच कार्यक्रम में परिचर्चा हेतु कुछ विषय

- उन्नत कृषि तकनीक जैसे- बीज, उर्वरक, पौध संरक्षण हेतु मार्गदर्शन
- मृदा परीक्षण, जल परीक्षण
- कृषि आधारित व्यवसायों की जानकारी
- पशु मेला का आयोजन
- कृषि उपज के विपणन हेतु
- कर्जदारों की समस्यायें
- ग्राम विकास योजना
- कृषि प्रदर्शनी का आयोजन
- मौसम और जलवायु के अनुसार खेती
- कृषि यंत्रों, उपकरणों की मरम्मत
- सामूहिक खेती की संभावनायें
- ग्रामीण स्वास्थ्य एवं स्वच्छता
- बुनियादी जरूरतों को जुटाना

(ख) स्थल एवं समर्थित कार्यक्रम

इस कार्यक्रम का आयोजन संबंधित बैंक की शाखा द्वारा किया जाता है, जिसमें गैर-कृषि क्षेत्र के कार्य कलापों की पहचान की जाती है। इसके बाद गैर-कृषि क्षेत्र से जुड़ी संस्थाओं जैसे- खादी और ग्रामोद्योग बोर्ड, जिला उद्योग केंद्र, बैंक, जिला ग्रामीण विकास अभिकरण, महिला एवं बाल विकास विभाग और आदिम जाति कल्याण विभाग द्वारा इच्छुक उद्यमियों की पहचान कर उन्हें प्रशिक्षण दिया जाता है। इस कार्यक्रम के तीन चरण होते हैं, पहले चरण में प्रशिक्षण के आयोजन का निर्णय लिया जाता है, दूसरे चरण में प्रशिक्षण आयोजित कर समस्याओं का समाधान किया जाता है और तीसरे चरण में संबंधित बैंक की शाखा द्वारा ऋण दिया जाता है। इसी चरण में संबंधित संस्थायें उत्पाद के विपणन में सहयोग करती हैं।

(ग) महिला विकास कार्यक्रम

इस कार्यक्रम में कृषक क्लब के अंतर्गत आने वाले क्षेत्र की 25-30 महिलाओं का चयन उनकी योग्यता के अनुसार किया जाता है। इन महिलाओं को रोज़गार सृजन और आय बढ़ाने वाली गतिविधियों का प्रशिक्षण दिया जाता है। इसके बाद महिलाओं को आत्म निर्भर बनाने के लिये उन्हें ऋण की व्यवस्था की जाती है।

(घ) नेतृत्व विकास कार्यक्रम

राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक द्वारा राज्य या संभाग स्तर पर 20-25 कृषक क्लबों के मुख्य स्वयं सेवकों को नेतृत्व विकास हेतु प्रशिक्षित किया जाता है, जिससे उनकी संचार क्षमता में वृद्धि होती है। इस कार्यक्रम में विषयवस्तु इस प्रकार हो सकती हैं:

- ⇨ नेतृत्व के प्रकार और विशेषतायें
- ⇨ मुख्य स्वयं सेवकों में नेतृत्व विकास हेतु संचार क्षमता में वृद्धि
- ⇨ मुख्य स्वयं सेवकों को ग्रामीण विकास हेतु उत्प्रेरक की भूमिका के लिये तैयार करना
- ⇨ ऋण वापसी हेतु पहल करना
- ⇨ सर्वेक्षण द्वारा ग्राम विकास योजना बनाना
- ⇨ गैर कृषि क्षेत्र की गतिविधियों की पहचान कर रोज़गार सृजन के अवसर बढ़ाना
- ⇨ कृषि प्रदर्शनी आयोजित करना
- ⇨ कृषि यंत्रों, उपकरणों की मरम्मत
- ⇨ उन्नत कृषि तकनीक को बढ़ावा देना
- ⇨ सामूहिक खेती
- ⇨ ग्रामीण स्वास्थ्य एवं स्वच्छता
- ⇨ बुनियादी जरूरतों को जुटाना

(ङ) स्व सहायता समूह प्रशिक्षण कार्यक्रम

स्व सहायता समूह के गठन में कृषक क्लब महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, इसलिये क्लब द्वारा विभिन्न विभागों के सहयोग से दो दिवसीय प्रशिक्षण आयोजित किया जाता है। इस प्रशिक्षण में स्व सहायता समूह के बारे में निम्न जानकारी दी जाती है:-

- ⇨ स्व सहायता समूह कार्यक्रम का परिचय
- ⇨ समूह का गठन एवं बैंठकें
- ⇨ समूह की नियमावली एवं अभिलेख
- ⇨ समूह का बचत खाता
- ⇨ आंतरिक लेन-देन
- ⇨ बैंक से ऋण
- ⇨ समूह की प्रगति

कृषक क्लब से बैंकों को लाभ

कृषक क्लब से बैंकों का व्यवसाय ग्रामीण क्षेत्रों में फैलता है, जिससे बैंक और कर्जदारों के बीच में अच्छे संबध हो जाते हैं। बैंक एक ऐसा वातावरण तैयार करता है जिससे अच्छे दामों पर उपज बिकती है। साख प्रवाह में बढ़ोत्तरी होती है। नये क्षेत्रों में साख का वितरण बढ़ता है, जैसे- सूक्ष्म सिंचाई, जैव प्रौद्योगिकी, उद्यानिकी, कटाई उपरांत तकनीक, मूल्य संवर्धन आदि। बैंकों को सबसे बड़ा लाभ यह होता है कि उनके ऋण की वापसी की रकम बढ़ जाती है तथा बैंक के ऋण का समुचित उपयोग होता है। कृषक क्लब और बैंक के प्रयासों से अंचल का सामाजिक-आर्थिक विकास होता है।

ग्रामीण विकास के पर्याय - कृषक क्लब

कृषि को लाभकारी व्यवसाय बनाने के लिये यह आवश्यक हो गया है कि उसमें उन्नत कृषि तकनीक का उपयोग किया जाये, यह उन्नत तकनीक साख के बिना अपनाना संभव नहीं है। साख के उपयोग से फसलों का उत्पादन बढ़ता है तथा आमदनी में वृद्धि होती है। साख के उपयोग से यह निश्चित हो जाता है कि अतिरिक्त आय अवश्य प्राप्त होगी। कृषक क्लब की गतिविधियों में किसानों - ग्रामीणों की भागीदारी रहने से ग्रामीण विकास तेजी से होता है तथा 'साख से विकास' का सपना साकार हो जाता है। किसान ग्रामीण क्लब में अपनी साख और गैर-साख संबंधी, कृषि और गैर-कृषि संबंधी समस्याओं पर चर्चा करते हैं। आवश्यक निर्णय लेकर रोज़गार सृजन और आमदनी में वृद्धि हेतु कदम उठाते हैं। बचत को बढ़ावा देते हैं। समन्वित ग्राम विकास को साकार करते हैं।

◆

पुस्तक का नाम: बैंकिंग व्यवसाय एवं पूंजी पर्याप्तता
लेखक : श्री आर. के. मूलचन्दानी
प्रकाशक : आधार प्रकाशन,पंचकुला, हरियाणा
मूल्य : दो सौ रुपये

बैंकों के लिए पूंजी पर्याप्तता एक अन्तर्राष्ट्रीय वाद एवं चिन्तन का विषय बना हुआ है तब से जब बासल समिति ने 1988 में हुए पूंजी समझौते में संशोधन करने के लिए 1999 में पहला परामर्श दस्तावेज़ जारी किया। इस पुस्तक का प्रयोजन पाठकों को बैंकिंग व्यवसाय के लिए पर्याप्तता की आवश्यकता, जोखिम आधारित पूंजी मानदण्डों के प्रादुर्भाव, बासल-1 के पूंजी मानदण्डों में परिवर्तन की आवश्यकता बासल-2 के मानदण्ड एवं इससे संबंधित मुद्दों एवं बैंकों के समक्ष इन नियमों को लागू करने में संभावित चुनौतियों से अवगत कराना है। यद्यपि यह तकनीकी विषय है तथा बासल - 2 के प्रस्ताव बासल-1 की तुलना में अधिक गूढ़ हैं फिर भी लेखक ने यह प्रयास किया है कि ये प्रस्ताव सभी पाठकों को बोधगम्य हो सके।

इस दृष्टिकोण से लेखक ने प्रथम अध्याय में पूंजी पर्याप्तता के महत्व का उल्लेख किया है और साथ ही अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर उपलब्ध सभी बैंकिंग संस्थानों का वर्णन दिया है। बैंक फॉर इन्टरनेशनल सेटलमेंट की स्थापना 1930 में की गई जो केंद्रीय बैंकों का बैंक है और इसी दृष्टिकोण से *बासल कमेटी ऑन बैंकिंग सुपरविज़न* के कार्यों का वर्णन किया है। लेखक ने दूसरे अध्याय में जोखिम आधारित पूंजी मानदण्डों के प्रादुर्भाव का वर्णन किया है। इस संदर्भ में 1930 व 1940 के दशकों में पूंजी पर्याप्तता के आधार का जिक्र किया गया है जिसमें कुल जमाओं पर पूंजी या कुल आस्तियों के एक भाग के रूप में पूंजी पर विचार किया गया था जिसे बाद में अप्रभावी माना गया।

पूंजी पर्याप्तता के उचित मानदण्ड के लिए संयुक्त राज्य अमेरिका में एक अधिनियम पारित किया गया था जिसे 'इन्टरनेशनल लेंडिंग एण्ड सुपरविज़न एक्ट ऑफ 1983' के नाम से जाना जाता है। इस अधिनियम ने अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर विनियामक पूंजी एवं पूंजी पर्याप्तता मानदण्ड निर्धारित करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है जिसका लेखक ने विस्तार से वर्णन किया है।

बासल-1 के प्रमुख घटकों का वर्णन अध्याय तीन में दिया गया है। बैंकों के लिए न्यूनतम पूंजी के जो मानदण्ड निर्धारित किए गए हैं उनका लेखक ने तीन प्रधान घटकों का उदाहरण देते हुए वर्णन किया है जो पाठकों द्वारा सरलता से समझे जा सकते हैं। बासल-1 को एक सौ से अधिक अर्थव्यवस्थाओं में लागू किया गया, जिसके परिणामों की व्याख्या अध्याय चार में की गई है। इस व्याख्या में इन मानदण्डों को अधूरा माना गया है। लेखक के अनुसार 1990 के दशक में आए वित्तीय संकटों और बैंकों की विफलताओं के दृष्टिगत यह मानदण्ड अपने इस उद्देश्य में चूक गए हैं। अतः बासल समिति ने नवीनतम पूंजी पर्याप्तता ढाँचे पर प्रथम परामर्श दस्तावेज़ जून 1999 में जारी किया। पाँच वर्षों के निरन्तर प्रयास, तीन परामर्शी दस्तावेज़ों और परिणामात्मक प्रभाव अध्ययनों के बाद जून 2004 में बासल-2 पर पहली बार अन्तर्राष्ट्रीय सहमति प्राप्त कर एक प्रलेख जारी किया गया जिसमें उद्देश्यों को स्पष्ट किया गया है। पुस्तक में बासल-1 व बासल-2 के पूंजी पर्याप्तता मानदण्ड का वर्णन पठनीय है। अध्याय पाँच में बासल-2 के सभी मानदण्डों का विस्तार से वर्णन किया गया है जिससे पुस्तक की उपयोगिता बहुत बढ़ जाती है और बैंकिंग में रुचि रखने वाले पाठकों के लिए पुस्तक निजी पुस्तकालय में संग्रहणीय भी बन जाती है।

अध्याय 6 में पूंजी खाते की परिवर्तनीयता और पूंजी पर्याप्तता के प्रभाव पर चर्चा की गई है। इसमें भारत में 1992 से आंशिक तौर पर शुरू की गई चालू खाते की परिवर्तनीयता

पर किए गए समझौते का जिक्र भी है। अगले अध्याय में जोखिम भार को श्रेणियों में अभिव्यक्त किया गया है। इसी अध्याय में विभिन्न जोखिम रेटिंग एजेंसियों द्वारा प्रस्तुत जोखिम रेटिंग की परिभाषाऐं हैं और आस्ति प्रतिभूतिकरण का वर्णन दिया गया है जो सहजता लिए हुए है।

बासल-2 के अनुसार बैंकों के लिए जो मुख्य मुद्दे - नये नियमों को समझना, उनकी व्याख्या करना और व्यवसाय पर उनके प्रभाव का आकलन करना, बोर्ड और वरिष्ठ प्रबंधन का समर्थन प्राप्त करना, पर्यवेक्षकों, रेटिंग एजेंसीज़ और ग्राहकों की नई अपेक्षाओं को पूरा करना, अपने व्यवसाय में कुछ नये ग्राहकों/उत्पादों को सम्मिलित करने या वर्तमान ग्राहकों/उत्पादों को हटाने पर विचार करना आदि-आदि- होंगे जिनका विस्तार से वर्णन अध्याय आठ में किया गया है। लेखक ने भारतीय बैंकों की स्थिति का वर्णन अध्याय 9 में किया है। लेखक के अनुसार वर्ष 1990 के दशक से प्रारंभ बैंकिंग क्षेत्र के सुधारों ने भारतीय बैंकिंग प्रणाली को सुदृढ़ता प्रदान की है। भारतीय रिज़र्व बैंक का यह प्रयास रहा है कि सभी बैंक उनके व्यवसाय, आकार, उनके परिचालन की जटिलता, अनुमानित पूंजी आवश्यकता आदि के आधार पर एक उचित जोखिम प्रबंधन प्रणाली विकसित करें। बासल-2 की ओर भारत की नीतिगत एप्रोच ऐसी रही है कि भारत द्वारा उत्तम अन्तर्राष्ट्रीय पद्धतियों को अपनाने की इच्छा के प्रति बाहरी देशों में एक सकारात्मक दृष्टिकोण बना है। भारतीय रिज़र्व बैंक ने बासल-2 को अपनाने के लिए प्रतिबद्धता दर्शाते हुए कदम उठाए हैं।

श्री. आर. के मूलचन्दानी ने जिस बखूबी से इस पुस्तक का लेखन का कार्य किया है वह प्रशंसनीय है। निश्चित ही यह पुस्तक बैंकिंग का अध्ययन करने वाले विद्यार्थियों एवं एक नव नियुक्त बैंकर जिसे इस विषय का ज्ञान शून्य समान हो, के लिए बहुत उपयोगी है। इसका कारण यह है कि सभी अध्याय अपने आप में सम्पूर्ण है। बैंकिंग विषय पर मौलिक रूप से हिन्दी में पुस्तक लेखन योजना के अन्तर्गत इस पुस्तक के विषय की स्वीकृति के लिए कृषि बैंकिंग महाविद्यालय पुणे द्वारा गठित प्रशिक्षण समन्वय समिति तथा रूपरेखा उपसमिति के सदस्य प्रशंसा के पात्र हैं वरना पाठकगण इस विषयपरक पुस्तक से ज्ञानार्जन करने से वंचित रह जाते। इस पुस्तक की छपाई एवं इसका प्रस्तुतीकरण भी आकर्षक बन पड़ा है।

◉ डॉ. एस. एल. लोढा
एसोसिएट प्रोफेसर अर्थशास्त्र (से. नि.)

पुस्तक का नाम	:	**भारत में भुगतान और निपटान प्रणाली**
संपादक	:	**उमा सुब्रमणियम और डॉ. पुष्पकुमार शर्मा**
प्रकाशक	:	**आधार प्रकाशन,पंचकुला, हरियाणा**
पृष्ठ संख्या	:	**187**
मूल्य	:	**दो सौ पच्चीस रुपये**

बैंकिंग के संदर्भ में अंग्रेजी साहित्य तो बहुतायत से उपलब्ध है परन्तु हिंदी में संदर्भ साहित्य की कमी आज भी लगातार महसूस की जाती है। बैंकर प्रशिक्षण महाविद्यालय ने बैंकिंग कार्मिकों को प्रशिक्षण के माध्यम से निष्णात बनाने के साथ-साथ पाठ्य सामग्री / संदर्भ साहित्य के महत्व को भी पहचाना है और पिछले 19 वर्षों से अपनी तिमाही हिंदी पत्रिका 'बैंकिंग चिंतन-अनुचिंतन' के माध्यम से हिंदी में बैंकिंग साहित्य उपलब्ध कराने तथा वित्तीय साक्षरता का अलख जगाने की दिशा में निरंतर प्रयासरत है। अपने इस लक्ष्य को ध्यान में रखते हुए महाविद्यालय पिछले पांच वर्षों से उक्त पत्रिका के विशेषांकों को पुस्तक के रूप में प्रकाशित करता आ रहा है और अब तक 'जोखिम प्रबंधन एक विवेचन', 'बैंकों में लाभप्रदता','बैंकों में कार्पोरेट गवर्नेंस' और 'रिटेल बैंकिंग और मार्केटिंग' नाम से चार पुस्तकों का प्रकाशन किया जा चुका है। कहने की आवश्यकता नहीं है कि उक्त सभी पुस्तकों को पाठकों ने हाथों हाथ लिया है और ये पुस्तकें आज बैंकिंग साहित्य की धरोहर हैं। इस कड़ी में इस बार महाविद्यालय ने भारत में भुगतान और निपटान प्रणाली विषय पर पुस्तक का प्रकाशन किया है।

किसी भी अर्थव्यवस्था में भुगतान प्रणाली की भूमिका

अत्यन्त महत्वपूर्ण होती है। जहां एक ओर वस्तुओं और सेवाओं का आदान प्रदान होता है वहीं दूसरी तरफ इनके मूल्य का आदान प्रदान होता है। यदि किसी भी कारण से भुगतान प्रणाली अवरूद्ध हो जाए या धीमी गति से कार्य करने लगे या इसकी लागत आवश्यकता से अधिक आती हो तो अर्थव्यवस्था पर इसका प्रतिकूल असर पड़ता है जिसके फलस्वरूप आर्थिक विकास की गति धीमी पड़ जाती है। आज विश्व की अर्थव्यवस्थाओं में तेजी से हो रहे विकास ने लेनदेनों की संख्या में खासी वृद्धि कर दी है और इसके साथ ही सूचना प्रौद्योगिकी के आगमन और उस पर बढ़ती निर्भरता ने भी कई प्रकार की प्रणालीगत जोखिमों (Systemic Risks) को जन्म दिया है। इन सबको देखते हुए आज भुगतान और निपटान प्रणालियों को परिमार्जित करने, विकसित करने और आधुनिक बनाने की आवश्यकता लगातार महसूस की जाने लगी है। देश का केंद्रीय बैंक होने के नाते रिज़र्व बैंक ने अपने इस दायित्व को पहचाना और वर्ष 2005 में भुगतान और निपटान प्रणाली के संदर्भ में एक विज़न डाक्यूमेंट तैयार किया जिसमें आगामी तीन वर्षों में सुचारु और दक्ष भुगतान और निपटान प्रणाली को लागू करने की विस्तृत कार्ययोजना प्रस्तुत की गई जिसमें संरक्षा (Safty) सुरक्षा (Security) तथा सुदृढ़ता (Soundness) और कार्यकुशलता(efficiancy) पर विशेष जोर दिया गया। इसी दिशा में एक कदम और आगे बढ़ते हुए रिज़र्व बैंक ने भुगतान तथा निपटान प्रणालियों के विनियमन एवं पर्यवेक्षण के लिए 10 मार्च 2005 को भुगतान एवं निपटान प्रणालियों के विनियमन एवं पर्यवेक्षण बोर्ड (BPSS) (केंद्रीय बोर्ड की एक समिति के रूप में) का गठन किया और इसके साथ ही बोर्ड के कामकाज में सहायता के लिए रिज़र्व बैंक में भुगतान एवं निपटान प्रणाली विभाग (DPSS) नाम से एक नये विभाग की स्थापना भी की गयी।

भारत में भुगतान और निपटान प्रणाली अपने आपमें एक विस्तृत, समसामयिक और जीवंत विषय है। इस विषय पर पाठकों की जिज्ञासाओं का समाधान प्रस्तुत करने के लक्ष्य को ध्यान में रख कर ही महाविद्यालय की तत्कालीन उपप्रधानाचार्य एवं सहायक महाप्रबंधक पुष्पकुमार शर्मा के संपादन में इस अद्वितीय पुस्तक का प्रकाशन हुआ है। इस पुस्तक में कुल उन्नीस आलेखों को सम्मिलित किया गया है जिनमें 1. भुगतान प्रणालीः परिचय एवं भारत में उसकी स्थिति 2. इलेक्ट्रानिक माध्यम से बैंकिंग कारोबार में हुए परिवर्तन 3. समाशोधन प्रणाली 4. इनफिनेट-वित्तीय व्यवस्था की रीढ़ 5. चेक ट्रंकेशन 6. ई-बैंकिंग-बदलता परिवेश 7. तत्काल सकल निपटान प्रणाली 8. आरटीजीएस - उन्नत भुगतान प्रणाली 9. धन अंतरण की तत्काल सकल निपटान प्रणाली 10. आरटीजीएस में जोखिम से निपटने के उपाय 11. ई-पर्स 12. इलेक्ट्रॉनिक भुगतान और डेबिट कार्ड 13. भुगतान प्रणाली और क्रेडिट कार्ड 14. भारतीय समाशोधन निगम लिमिटेड (सीसीआईएल) की भूमिका 15. तयशुदा लेनदेन प्रणाली (एनडीएस) 16. भुगतान और निपटान प्रणाली तथा ग्राहक सेवा 17. भुगतान प्रणाली में जोखिम 18. भुगतान प्रणाली से जुड़े जोखिम 19. भुगतान प्रणाली से जुड़े साइबर कानून और विधिगत पहलू शामिल हैं। इन सभी आलेखों में आलेखकारों ने अपने -अपने विषयों से जुड़े लगभग सभी पहलुओं पर गहनता से प्रकाश डाला है और विषय वस्तु को अत्यंत सारगर्भित एवं तर्कसंगत विश्लेषण के साथ प्रस्तुत किया है। इतना ही नहीं विषय की जटिलता को कम करने और इसे बोधगम्य और सटीक बनाने के लिए यथासंभव रेखाचित्रों, विषय से संबंधित आंकड़ों एवं तुलनात्मक अध्ययन का भी सहारा लिया गया है। भारत में भुगतान और निपटान प्रणाली जैसे अद्यतन विषय पर यह एक स्वयंपूर्ण पुस्तक है और इसके प्रकाशन के लिए लेखकगण के साथ साथ संपादक द्वय भी हार्दिक बधाई के पात्र हैं।

पुस्तक का आवरण पृष्ठ भी आकर्षक है जो चित्रों के माध्यम से एक ही नज़र में भुगतान एवं निपटान प्रणाली के कई पहलुओं का एक साथ परिचय करा देता है। पुस्तक की साज सज्जा और बाइंडिंग स्तरीय है। पुस्तक की छपाई त्रुटिरहित बनाने के लिए पर्याप्त सावधानी बरती गई है। पुस्तक का संस्करण हार्ड बाउंड है इसे देखते हुए इसका मूल्य भी उचित ही प्रतीत होता है।

यह पुस्तक बैंकों, प्रशिक्षण संस्थानों और उनसे जुड़े संकाय-सदस्यों के साथ-साथ बैंकिंग विषय के विद्यार्थियों एवं भुगतान और निपटान प्रणाली से जुड़े अपने प्रश्नों का समाधान पाने के इच्छुक पाठकों के लिए निःसंदेह उपयोगी और ज्ञानवर्धक साबित होगी।

◉ के. सी. मालपानी
सहायक प्रबंधक, बैंकर प्रशिक्षण महाविद्यालय
मुंबई

लेखकों से

इस पत्रिका का उद्देश्य बैंकिंग और उससे संबंधित विषयों पर हिन्दी में मौलिक सामग्री उपलब्ध कराना है। बैंकिंग विषयों पर हिन्दी में मूल रूप से लिखनेवाले सभी लेखकों से सहयोग मिले बिना इस उद्देश्य की पूर्ति कैसे होगी? हमें इसमें आपका सक्रिय सहयोग चाहिए। बैंकिंग विषयों पर हिन्दी में मूल रूप से लिखे स्तरीय लेखों की हमें प्रतीक्षा रहती है। साथ ही, अर्थशास्त्र, वित्त, मुद्रा बाज़ार, पूंजी बाज़ार, वाणिज्य, विधि, मानव संसाधन विकास, कार्यपालक स्वास्थ्य, मनोविज्ञान, परा बैंकिंग, कम्प्यूटर, सूचना प्रौद्योगिकी आदि क्षेत्रों से जुड़े विशेषज्ञ इन विषयों पर व्यावहारिक या शोधपूर्ण मौलिक लेख भी हमें प्रकाशनार्थ भेज सकते हैं। प्रकाशित लेखों और पुस्तक समीक्षाओं पर सांकेतिक **मानदेय देने** की व्यवस्था है। ***कृपया प्रकाशनार्थ सामग्री भेजते समय यह देख लें कि :-***

- सामग्री ***बैंकिंग और उससे संबंधित विषयों*** पर ही है।
- उसमें दी गयी जानकारी ***उपयोगी*** और ***अद्यतन*** है एवं ***अधिकतम 8 टंकित पृष्ठों*** में है।
- लेख यदि संभव हो तो **फ्लापी में आकृति / एपीएस फांट** में भेजने की व्यवस्था की जाए।
- वह कागज़ के ***एक ओर*** स्पष्ट अक्षरों में ***लिखित*** अथवा ***टंकित*** है।
- यथासंभव ***सरल और प्रचलित हिंदी शब्दावली*** का प्रयोग किया गया है और अप्रचलित एवं तकनीकी शब्दों के अर्थ कोष्ठक में अंग्रेजी में दिये गये हैं।
- यह प्रमाणित करें कि लेख ***मौलिक है,*** प्रकाशन के लिए ***अन्यत्र नहीं भेजा गया है*** और 'बैंकिंग चिंतन-अनुचिंतन' में प्रकाशनार्थ प्रेषित है।
- लेख में शामिल ***आंकड़ों, तथ्यों आदि के संबंध में स्रोत*** का स्पष्ट उल्लेख करें।
- प्रकाशन के संबंध में यह सुनिश्चित करें कि ***जब तक लेख संबंधी अस्वीकृति की सूचना प्राप्त नहीं होती,*** संबंधित लेख किसी ***अन्य पत्र-पत्रिका में प्रकाशनार्थ न भेजा जाए।***

प्रकाशकों से

जो प्रकाशक अपनी पुस्तक की समीक्षा करवाना चाहते हैं
वे कृपया अपनी पुस्तकों की **दो प्रतियां** भिजवाने की व्यवस्था करें।

पाठकों से

इस पत्रिका को आप **निःशुल्क** प्राप्त कर सकते हैं। इसके लिए आपको लिखित रूप में " कार्यकारी संपादक, बैंकिंग चिंतन अनुचिंतन " से अनुरोध करना होगा। आपका पत्र मिलते ही आपका नाम डाक सूची में शामिल कर लिया जाएगा और तदनंतर आपको पत्रिका निरंतर मिलती रहेगी। आपसे अनुरोध है कि अपने सहयोगियों को भी यह जानकारी प्रदान करें तथा अपनी मांग से हमें तत्काल अवगत कराएं ताकि हम तदनुसार प्रतियों का मुद्रण कर सकें। **पुराने पाठक कृपया पत्राचार करते समय अपनी सदस्यता संख्या का उल्लेख अवश्य करें।**